

काव्यमाला ८९.



आङ्गोलकरश्रीलक्ष्मणभट्टविरचिता

पद्यरचना ।

जयपुरमहाराजाश्रितेन महामहोपाध्यायपण्डितश्रीदुर्गाप्रसाद-
तनयेन पण्डितकेदारनाथेन, मुम्बापुरवासिना पणशी-
करोपाह्वलक्ष्मणतनुजनुषा वासुदेवशर्मणा च
संशोधिता ।

सा च

मुम्बय्यां निर्णयसागराख्ययन्त्रालये तदधिपतिना मुद्राक्षरैरङ्कयित्वा
प्राकाश्यं नीता ।

१९०८

(अस्य ग्रन्थस्य पुनर्मुद्रणादिविषये सर्वथा निर्णयसागरमुद्रायन्त्रालयाधिपते-
रेषाधिकारः ।)

मूल्यमेको .।।. पादोनरूप्यकः ।

काव्यमाला ८९.



आङ्गोलकरश्रीलक्ष्मणभट्टविरचिता

पद्यरचना ।

जयपुरमहाराजाश्रितेन महामहोपाध्यायपण्डितश्रीदुर्गाप्रसाद-
तनयेन पण्डितकेदारनाथेन, मुम्बापुरवासिना पणशी-
करोपाह्वलक्ष्मणतनुजनुषा वासुदेवशर्मणा च
संशोधिता ।

सा च

मुम्बय्यां निर्णयसागराख्ययन्त्रालये तदधिपतिना मुद्राक्षरैरङ्कयित्वा
प्राकाश्यं नीता ।

१९०८

(अस्य ग्रन्थस्य पुनर्मुद्रणादिविषये सर्वथा निर्णयसागरमुद्रायन्त्रालयाधिपते-
रेषाधिकारः ।)

मूल्यमेको .।।। पादोनरूप्यकः ।

015:1x Lox

2 D8

17644

015:1x Lax

2 D8

17644

आङ्गोलकरश्रीलक्ष्मणभट्टः।

आङ्गोलकरोपनामकः श्रीलक्ष्मणभट्टः कदा समुत्पन्न इति प्रमाणानुपलम्भान्न शक्यते निर्णेतुम्; परं नायमेकस्माद्वर्षशतकादर्वाचीन इति शक्यते वक्तुम् । यदाधारेणास्याः पद्यरचनाया मुद्रणं जातं तत्पुस्तकद्वयमपि शताद्वर्षेभ्यः प्राचीनेषु पत्रेषु लिखितमिति । कविरयं जात्या महाराष्ट्रो भवेत् ।

(१) पद्यरचनायाः पुस्तकमेकं मान्यवराणां मुम्बापुरप्रान्तीयशिक्षाविभागाध्यक्षाणा-
मनुज्ञया पुण्यपत्तनस्थदक्षिणपाठशालायां संस्कृतसाहित्यस्य प्रधानाध्यापकैर्विद्वद्वरेण्य
श्री के. बी. पाठकमहोदयैः सानुकम्पमस्मत्सविधे प्रेषितं प्रायः शुद्धम् ।

(२) अपरं च जयपुरराजगुरुकैलासवासी श्रीरूपदत्तमहोदयानां पुस्तकालयत
उपलब्धं नितान्तमशुद्धम् ।

ग्रन्थेऽस्मिन् संगृहीतानि च बहूनि पद्यानि काव्यमालासहकारिसंपादकानां कै० पं०
श्रीकाशीनाथपरबमहोदयानां सुभाषितरत्नभाण्डागारस्य साहाय्येन संशोधितानि ।

संस्कृतसाहित्योन्नतये समर्पितजीवितानां श्री के. बी. पाठकमहोदयानामुपकार-
गौरवं च शिरसा वहन्तस्तेषां चिरकृतज्ञाः स्मः ।

पद्यरचनायां येषां कवीनां पद्यानि सनामनिर्देशं संगृहीतानि तेषां नामान्यत्र संगृह्यन्ते ।
इन्द्रकविः, उमापत्युपाध्यायः, अचलः, अमरुकः, अम्बष्ठः, अवन्तिवर्मा, अविलम्बः,
आनन्दवर्धनः, भर्तृहरिः, बाबूमिश्रः, कविकङ्कणः, कविराजः, कालिदासः, अकबरीय-
कालिदासः (?) कृष्णमिश्रः, गणपतिः, गदाधरः, गुणाकरः, जयदेवः, जघनचपला,
त्रिविक्रमः, दण्डी, देवेश्वरः, धरणीधरः, नारायणः, निद्रादरिद्रः, परिमलः, पाणिनिः,
बिहणः, भानुकरः, भानुमिश्रः, भासः, भोजदेवः, (भोजप्रबन्धः), महादेवः, (महा-
नाटकम्) माघः, मैथिलः, मोरिका, रघुपतिः, रङ्गनाथः, रत्नाकरः, रामचन्द्रः, लक्ष्मणः,
लक्ष्मणठक्कुरः, लक्ष्मणसेनः, लीलावतीकारः, वररुचिः, वराहमिहिरः, वामनः, वाणी-
विलासः, वाल्मीकिः, वाहिनीपतिः, विकटनितम्बा (वेणीसंहारनाटकम्), वैद्यभानुः,
श्रीव्यासः, शकटद्विः, शङ्कराचार्यः, शार्ङ्गधरः, श्रीहर्षः, षाण्मासिकः, सुबन्धुः, हरिहरः,
हर्षदत्तश्चेति ।

केदारनाथवासुदेवशर्माणौ

काव्यमालासंपादकौ ।

आङ्गोलकरश्रीलक्ष्मणभट्टः।

आङ्गोलकरोपनामकः श्रीलक्ष्मणभट्टः कदा समुत्पन्न इति प्रमाणानुपलम्भान्न शक्यते निर्णेतुम्; परं नायमेकस्माद्वर्षशतकादर्वाचीन इति शक्यते वक्तुम् । यदाधारेणास्याः पद्यरचनाया मुद्रणं जातं तत्पुस्तकद्वयमपि शताद्वर्षेभ्यः प्राचीनेषु पत्रेषु लिखितमिति । कविरयं जात्या महाराष्ट्रो भवेत् ।

(१) पद्यरचनायाः पुस्तकमेकं मान्यवराणां मुम्बापुरप्रान्तीयशिक्षाविभागाध्यक्षाणा-
मनुज्ञया पुण्यपत्तनस्थदक्षिणपाठशालायां संस्कृतसाहित्यस्य प्रधानाध्यापकैर्विद्वद्वरेण्य
श्री के. बी. पाठकमहोदयैः सानुकम्पमस्मत्सविधे प्रेषितं प्रायः शुद्धम् ।

(२) अपरं च जयपुरराजगुरुकैलासवासी श्रीरूपदत्तमहोदयानां पुस्तकालयत
उपलब्धं नितान्तमशुद्धम् ।

ग्रन्थेऽस्मिन् संगृहीतानि च बहूनि पद्यानि काव्यमालासहकारिसंपादकानां कै० पं०
श्रीकाशीनाथपरबमहोदयानां सुभाषितरत्नभाण्डागारस्य साहाय्येन संशोधितानि ।

संस्कृतसाहित्योन्नतये समर्पितजीवितानां श्री के. बी. पाठकमहोदयानामुपकार-
गौरवं च शिरसा वहन्तस्तेषां चिरकृतज्ञाः स्मः ।

पद्यरचनायां येषां कवीनां पद्यानि सनामनिर्देशं संगृहीतानि तेषां नामान्यत्र संगृह्यन्ते ।
इन्द्रकविः, उमापत्युपाध्यायः, अचलः, अमरुकः, अम्बष्ठः, अवन्तिवर्मा, अविलम्बः,
आनन्दवर्धनः, भर्तृहरिः, बाबूमिश्रः, कविकङ्कणः, कविराजः, कालिदासः, अकबरीय-
कालिदासः (?) कृष्णमिश्रः, गणपतिः, गदाधरः, गुणाकरः, जयदेवः, जघनचपला,
त्रिविक्रमः, दण्डी, देवेश्वरः, धरणीधरः, नारायणः, निद्रादरिद्रः, परिमलः, पाणिनिः,
बिहणः, भानुकरः, भानुमिश्रः, भासः, भोजदेवः, (भोजप्रबन्धः), महादेवः, (महा-
नाटकम्) माघः, मैथिलः, मोरिका, रघुपतिः, रङ्गनाथः, रत्नाकरः, रामचन्द्रः, लक्ष्मणः,
लक्ष्मणठक्कुरः, लक्ष्मणसेनः, लीलावतीकारः, वररुचिः, वराहमिहिरः, वामनः, वाणी-
विलासः, वाल्मीकिः, वाहिनीपतिः, विकटनितम्बा (वेणीसंहारनाटकम्), वैद्यभानुः,
श्रीव्यासः, शकटद्विः, शङ्कराचार्यः, शार्ङ्गधरः, श्रीहर्षः, षाण्मासिकः, सुबन्धुः, हरिहरः,
हर्षदत्तश्चेति ।

केदारनाथवासुदेवशर्माणौ

काव्यमालासंपादकौ ।

पद्यरचनाया विषयानुक्रमः ।

| | पृष्ठे | श्लोकाः | | पृष्ठे | श्लोकाः |
|------------------------------|--------|---------|--------------------------------|--------|---------|
| प्रथमो व्यापारः— | | | १६ प्रतापः | १२ | १९—२६ |
| १ मङ्गलाचरणादि | १ | १—५ | १७ कीर्तिप्रतापौ | १४ | २७—२९ |
| २ अथावताराः— | | | १८ दानम् | १४ | ३०—३७ |
| तेषु मत्स्यः | १ | ६ | १९ विदायः | १५ | ३८—३९ |
| कूर्मः | २ | ७—८ | इति द्वितीयो व्यापारः । | | |
| वराहः | २ | ९—१० | अथ तृतीयो व्यापारः— | | |
| नृसिंहः | २ | ११—१२ | २० राजवर्णनम् | १६ | १—४ |
| वामनः | ३ | १३ | २१ सौन्दर्यप्रधाना | | |
| भार्गवो रामः | ३ | १४—१६ | नृपस्तुतिः | १७ | ५—८ |
| दाशरथी रामः | ३ | १७—१९ | २२ धरित्रीपतियात्रा | १७ | ९—१६ |
| हली रामः | ४ | २०—२१ | २३ पताका | १९ | १७—१८ |
| बुद्धः | ४ | २२ | २४ तुरङ्गः | १९ | १९—२३ |
| कृष्णः | ५ | २४ | २५ कृपाणः | २० | २४—२७ |
| (कृष्णस्य वाम्यम्) | ५ | २५ | २६ वीरवाक्यम् | २१ | २८—३२ |
| ३ ईश्वरः | ५ | २६—२८ | २७ रणः | २२ | ३३—४१ |
| ४ शम्भोस्ताण्डवम् | ६ | २९ | २८ रणभग्नेऽपदशा | २३ | ४२—४३ |
| ५ गणेशः | ६ | ३०—३१ | २९ रणक्षितिः ; | २३ | ४४—४८ |
| ६ कार्तिकेयः | ६ | ३२—३३ | ३० अरिपलायनम् | २४ | ४९—५४ |
| ७ भवानी | ६ | ३४—३८ | ३१ अरिनारी | २५ | ५५—६६ |
| ८ लक्ष्मीः | ७ | ३९—४१ | ३२ अरिदम्पती | २७ | ६७ |
| ९ गङ्गा | ८ | ४२—४३ | ३३ अरिनगरम् | २८ | ६८—७४ |
| १० मणिकर्णी | ८ | ४४—४६ | इति तृतीयो व्यापारः । | | |
| ११ यमुना | ९ | ४७ | अथ चतुर्थो व्यापारः— | | |
| इति प्रथमो व्यापारः । | | | विषयसूचना | २९ | १ |
| द्वितीयो व्यापारः— | | | ३४ अथ शृङ्गारः— | | |
| १२ विषयसूचना | ९ | १ | कामप्रभावः | २९ | २ |
| १३ कीर्तिः | ९ | २—१६ | बालावर्णनम् | २९ | ३—५ |
| १४ द्विषत्कीर्तिः | १२ | १७ | वयःसंधिः | ३९ | ६—१२ |
| १५ शौर्यौदार्यप्रधाना | | | तारुण्यम् | ३१ | १३—१७ |
| कीर्तिः | १२ | १८ | | | |

पद्यरचनाया विषयानुक्रमः ।

| | पृष्ठे | श्लोकाः | | पृष्ठे | श्लोकाः |
|---------------------------|--------|---------|-----------------------------|--------|---------|
| प्रथमो व्यापारः— | | | १६ प्रतापः | १२ | १९—२६ |
| १ मङ्गलाचरणादि | १ | १—५ | १७ कीर्तिप्रतापौ | १४ | २७—२९ |
| २ अथावताराः— | | | १८ दानम् | १४ | ३०—३७ |
| तेषु मत्स्यः | १ | ६ | १९ विदायः | १५ | ३८—३९ |
| कूर्मः | २ | ७—८ | इति द्वितीयो व्यापारः । | | |
| वराहः | २ | ९—१० | अथ तृतीयो व्यापारः— | | |
| नृसिंहः | २ | ११—१२ | २० राजवर्णनम् | १६ | १—४ |
| वामनः | ३ | १३ | २१ सौन्दर्यप्रधाना | | |
| भार्गवो रामः | ३ | १४—१६ | नृपस्तुतिः | १७ | ५—८ |
| दाशरथी रामः | ३ | १७—१९ | २२ धरित्रीपतियात्रा | १७ | ९—१६ |
| हली रामः | ४ | २०—२१ | २३ पताका | १९ | १७—१८ |
| बुद्धः | ४ | २२ | २४ तुरङ्गः | १९ | १९—२३ |
| कृष्णः | ५ | २४ | २५ कृपाणः | २० | २४—२७ |
| (कृष्णस्य वाम्यम्) | ५ | २५ | २६ वीरवाक्यम् | २१ | २८—३२ |
| ३ ईश्वरः | ५ | २६—२८ | २७ रणः | २२ | ३३—४१ |
| ४ शम्भोस्ताण्डवम् | ६ | २९ | २८ रणभग्नेऽपदशा | २३ | ४२—४३ |
| ५ गणेशः | ६ | ३०—३१ | २९ रणक्षितिः ; | २३ | ४४—४८ |
| ६ कार्तिकेयः | ६ | ३२—३३ | ३० अरिपलायनम् | २४ | ४९—५४ |
| ७ भवानी | ६ | ३४—३८ | ३१ अरिनारी | २५ | ५५—६६ |
| ८ लक्ष्मीः | ७ | ३९—४१ | ३२ अरिदम्पती | २७ | ६७ |
| ९ गङ्गा | ८ | ४२—४३ | ३३ अरिनगरम् | २८ | ६८—७४ |
| १० मणिकर्णी | ८ | ४४—४६ | इति तृतीयो व्यापारः । | | |
| ११ यमुना | ९ | ४७ | अथ चतुर्थो व्यापारः— | | |
| इति प्रथमो व्यापारः । | | | विषयसूचना | २९ | १ |
| द्वितीयो व्यापारः— | | | ३४ अथ शृङ्गारः— | | |
| १२ विषयसूचना | ९ | १ | कामप्रभावः | २९ | २ |
| १३ कीर्तिः | ९ | २—१६ | बालावर्णनम् | २९ | ३—५ |
| १४ द्विषत्कीर्तिः | १२ | १७ | वयःसंधिः | ३९ | ६—१२ |
| १५ शौर्यौदार्यप्रधाना | | | तारुण्यम् | ३१ | १३—१७ |
| कीर्तिः | १२ | १८ | | | |

| पृष्ठे | श्लोकाः |
|----------------------------|---------|
| ३५ अथ बालावयववर्णनम्— | |
| तत्र, केशपाशः ३१ | १८—१९ |
| सीमन्तसिन्दूरम् ३२ | २० |
| भालसिन्दूरम् ३२ | २१ |
| अलकाः ३२ | २२ |
| आननम् ३२ | २३—२४ |
| भ्रुवौ ३३ | २६—२८ |
| नयने ३३ | २९—३१ |
| अपाङ्गः ३४ | ३२—३५ |
| नासामौक्तिकम् ३४ | ३६—३७ |
| कर्णटाटङ्गम् ३५ | ३८—३९ |
| अधरः ३५ | ४० |
| बाहू ३५ | ४३—४४ |
| अङ्गुल्यः ३६ | ४५ |
| स्तनौ ३६ | ४६ |
| हारः ३६ | ४९ |
| मध्यः ३६ | ५०—५४ |
| रोमावली ३७ | ५५—६१ |
| जघनम् ३८ | ६२ |
| ऊरू ३८ | ६३ |
| पादौ ३८ | ६४ |
| ३६ इतस्ततो वर्णनम् ३९ | ६५—६७ |
| इति चतुर्थो व्यापारः । | |
| पञ्चमो व्यापारः— | |
| ३७ विरहिणीवर्णनम् ३९ | १—२३ |
| सरोपालम्भः ४२ | २४—२५ |
| इति पञ्चमो व्यापारः । | |
| अथ षष्ठो व्यापारः— | |
| ३८ नायकविप्रलम्भः ४३ | १—२० |
| इति षष्ठो व्यापारः । | |
| अथ सप्तमो व्यापारः— | |
| ३९ कुलाङ्गना ४६ | २—५ |
| ४० कुलाङ्गनाकोपः ४७ | ६—७ |

| पृष्ठे | श्लोकाः |
|-------------------------|---------|
| ४१ प्रोष्यत्पतिका ४७ | ८—१२ |
| ४२ प्रोषितपतिका ४८ | १३—१४ |
| ४३ उत्कण्ठिता ४८ | १५—१६ |
| ४४ अथाङ्गनावान्तरभेदाः— | |
| तत्र, नवोढा ४९ | १७—१९ |
| विस्त्रब्धनवोढा ४९ | २१—२२ |
| मुग्धा ५० | २३ |
| मध्या ५० | २५ |
| प्रौढा ५० | २५ |
| असती ५० | २६ |
| विदग्धासती ५० | २७ |
| गुप्तासती ५१ | २९ |
| लक्षितासती ५१ | ३० |
| वेद्या ५१ | ३१ |
| कुलटा ५१ | ३२—३६ |
| कुलटोपदेशः ५२ | ३७—४१ |
| इति सप्तमो व्यापारः । | |
| अष्टमो व्यापारः— | |
| सौन्दर्यगर्विता ५३ | १ |
| प्रेमगर्विता ५३ | २ |
| खण्डिता ५३ | ३ |
| कलहान्तरिता ५३ | ४—६ |
| ४५ दूती ५४ | ७—९ |
| ४६ दूत्युपहासः ५४ | १०—१२ |
| ४७ मानिनीमानः ५५ | १३—१४ |
| ४८ मानापनोदः ५५ | १५ |
| ४९ अथ परस्परप्रीति— | |
| प्रलापः ५५ | १६ |
| तत्र, नायिकायाः— | |
| नायकस्य ५५ | १७ |
| ५० रतप्रशंसा ५६ | १९ |
| ५१ रतारम्भः ५६ | २०—२१ |
| ५२ रतम् ५७ | २५—३१ |

| पृष्ठे | श्लोकाः |
|----------------------------|---------|
| ३५ अथ बालावयववर्णनम्— | |
| तत्र, केशपाशः ३१ | १८—१९ |
| सीमन्तसिन्दूरम् ३२ | २० |
| भालसिन्दूरम् ३२ | २१ |
| अलकाः ३२ | २२ |
| आननम् ३२ | २३—२४ |
| भ्रुवौ ३३ | २६—२८ |
| नयने ३३ | २९—३१ |
| अपाङ्गः ३४ | ३२—३५ |
| नासामौक्तिकम् ३४ | ३६—३७ |
| कर्णताटङ्कम् ३५ | ३८—३९ |
| अधरः ३५ | ४० |
| बाहू ३५ | ४३—४४ |
| अङ्गुल्यः ३६ | ४५ |
| स्तनौ ३६ | ४६ |
| हारः ३६ | ४९ |
| मध्यः ३६ | ५०—५४ |
| रोमावली ३७ | ५५—६१ |
| जघनम् ३८ | ६२ |
| ऊरू ३८ | ६३ |
| पादौ ३८ | ६४ |
| ३६ इतस्ततो वर्णनम् ३९ | ६५—६७ |
| इति चतुर्थो व्यापारः । | |
| पञ्चमो व्यापारः— | |
| ३७ विरहिणीवर्णनम् ३९ | १—२३ |
| सरोपालम्भः ४२ | २४—२५ |
| इति पञ्चमो व्यापारः । | |
| अथ षष्ठो व्यापारः— | |
| ३८ नायकविप्रलम्भः ४३ | १—२० |
| इति षष्ठो व्यापारः । | |
| अथ सप्तमो व्यापारः— | |
| ३९ कुलाङ्गना ४६ | २—५ |
| ४० कुलाङ्गनाकोपः ४७ | ६—७ |

| पृष्ठे | श्लोकाः |
|-------------------------|---------|
| ४१ प्रोष्यत्पतिका ४७ | ८—१२ |
| ४२ प्रोषितपतिका ४८ | १३—१४ |
| ४३ उत्कण्ठिता ४८ | १५—१६ |
| ४४ अथाङ्गनावान्तरभेदाः— | |
| तत्र, नवोढा ४९ | १७—१९ |
| विस्त्रब्धनवोढा ४९ | २१—२२ |
| मुग्धा ५० | २३ |
| मध्या ५० | २५ |
| प्रौढा ५० | २५ |
| असती ५० | २६ |
| विदग्धासती ५० | २७ |
| गुप्तासती ५१ | २९ |
| लक्षितासती ५१ | ३० |
| वेद्या ५१ | ३१ |
| कुलटा ५१ | ३२—३६ |
| कुलटोपदेशः ५२ | ३७—४१ |
| इति सप्तमो व्यापारः । | |
| अष्टमो व्यापारः— | |
| सौन्दर्यगर्विता ५३ | १ |
| प्रेमगर्विता ५३ | २ |
| खण्डिता ५३ | ३ |
| कलहान्तरिता ५३ | ४—६ |
| ४५ दूती ५४ | ७—९ |
| ४६ दूत्युपहासः ५४ | १०—१२ |
| ४७ मानिनीमानः ५५ | १३—१४ |
| ४८ मानापनोदः ५५ | १५ |
| ४९ अथ परस्परप्रीति— | |
| प्रलापः ५५ | १६ |
| तत्र, नायिकायाः— | |
| नायकस्य ५५ | १७ |
| ५० रतप्रशंसा ५६ | १९ |
| ५१ रतारम्भः ५६ | २०—२१ |
| ५२ रतम् ५७ | २५—३१ |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|--------------|--------|---------|
| ५३ विपरीतम् | ५८ | ३२—३८ |
| ५४ रतावसानम् | ५९ | ३९—४० |
| ५५ रताशंसनम् | ५९ | ४२ |
| ५६ रतनिद्रा | ५९ | ४३ |

इत्यष्टमो व्यापारः ।

अथ नवमो व्यापारः—

| | | |
|----------------------|----|-------|
| ५७ प्रभातानुनयः | ६० | १—२ |
| ५८ वायुः | ६० | ३—९ |
| ५९ प्रभातम् | ६१ | १०—१७ |
| ६० मध्याह्नः | ६२ | १८—२३ |
| ६१ जलक्रीडा | ६३ | २४—२८ |
| ६२ वनक्रीडा | ६४ | २९—३३ |
| ६३ भ्रमरीनृत्यक्रीडा | ६४ | ३४—३८ |
| ६४ कन्दुकक्रीडा | ६४ | ३९—४१ |
| ६५ दृष्टीलनक्रीडा | ६६ | ४२—४३ |
| ६६ हिन्दोलक्रीडा | ६६ | ४४—४६ |
| ६७ संध्या | ६७ | ४७—५० |
| ६८ अन्धकारः | ६७ | ५१—५२ |
| ६९ अभिसारिका | ६७ | ५३—५८ |

इति नवमो व्यापारः ।

अथ दशमो व्यापारः—

| | | |
|------------------|----|-------|
| ७० चक्रवाकावस्था | ६८ | १—२ |
| ७१ तारावर्णनम् | ६९ | ३—७ |
| ७२ चन्द्रः | ७० | ८—१० |
| ७३ सकलङ्कचन्द्रः | ७० | १३—१८ |
| ७४ हर्म्यम् | ७१ | १९—२३ |

इति दशमो व्यापारः ।

अथैकादशो व्यापारः—

| | | |
|------------------|----|-----|
| ७५ विषयसूचनम् | ७२ | १ |
| ७६ अनुकूलो नायकः | ७२ | २—४ |
| ७७ दक्षिणनायकः | ७३ | ५—७ |
| ७८ पृष्ठो नायकः | ७३ | ८—९ |
| ७९ धूर्तो नायकः | ७३ | १० |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|-------------------|--------|---------|
| ८० मानी नायकः | ७४ | ११ |
| ८१ अनभिज्ञो नायकः | ७४ | १२—१३ |
| ८२ शिशुनायकः | ७४ | १४—१६ |
| ८३ वृद्धनायकः | ७४ | १७—१८ |
| ८४ विदग्धनायकः | ७५ | १९ |
| ८५ देशान्तरोपगत- | | |

नायकः ७५ २०—२२

८६ अथ षट्पुवर्णनम्—

| | | |
|-----------------|----|-------|
| तत्र, वर्षर्तुः | ७५ | २३ |
| जलधरः | ७५ | २४—२७ |
| घनदुर्दिनम् | ७६ | २८ |
| घनगर्जितम् | ७६ | ३१—३३ |
| विद्युत् | ७७ | ३४—३५ |
| वर्षाविहारिणी | ७७ | ३६ |
| खद्योतः | ७७ | ३७—३८ |
| हंसः | ७७ | ४० |

इत्येकादशो व्यापारः ।

अथ द्वादशो व्यापारः—

| | | |
|------------|----|-------|
| शरत् | ७८ | १—९ |
| हेमन्तः | ७९ | १०—१८ |
| शिशिरः | ८० | १९—२३ |
| वसन्तसंधिः | ८१ | २४—२९ |
| वसन्तः | ८२ | ३०—३४ |
| ग्रीष्मः | ८२ | ३५—४१ |

इति द्वादशो व्यापारः ।

अथ त्रयोदशो व्यापारः—

| | | |
|--------------|----|-------|
| ८७ हास्यरसः | ८३ | १—५ |
| ८८ करुणरसः | ८४ | ६—१४ |
| ८९ रौद्ररसः | ८५ | १५—१८ |
| ९० वीररसः | ८६ | १९ |
| ९१ भयानकरसः | ८६ | २०—२१ |
| ९२ बीभत्सरसः | ८७ | २२—२३ |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|--------------|--------|---------|
| ५३ विपरीतम् | ५८ | ३२—३८ |
| ५४ रतावसानम् | ५९ | ३९—४० |
| ५५ रताशंसनम् | ५९ | ४२ |
| ५६ रतनिद्रा | ५९ | ४३ |

इत्यष्टमो व्यापारः ।

अथ नवमो व्यापारः—

| | | |
|----------------------|----|-------|
| ५७ प्रभातानुनयः | ६० | १—२ |
| ५८ वायुः | ६० | ३—९ |
| ५९ प्रभातम् | ६१ | १०—१७ |
| ६० मध्याह्नः | ६२ | १८—२३ |
| ६१ जलक्रीडा | ६३ | २४—२८ |
| ६२ वनक्रीडा | ६४ | २९—३३ |
| ६३ भ्रमरीनृत्यक्रीडा | ६४ | ३४—३८ |
| ६४ कन्दुकक्रीडा | ६४ | ३९—४१ |
| ६५ हृत्प्रीलनक्रीडा | ६६ | ४२—४३ |
| ६६ हिन्दोलक्रीडा | ६६ | ४४—४६ |
| ६७ संध्या | ६७ | ४७—५० |
| ६८ अन्धकारः | ६७ | ५१—५२ |
| ६९ अभिसारिका | ६७ | ५३—५८ |

इति नवमो व्यापारः ।

अथ दशमो व्यापारः—

| | | |
|------------------|----|-------|
| ७० चक्रवाकावस्था | ६८ | १—२ |
| ७१ तारावर्णनम् | ६९ | ३—७ |
| ७२ चन्द्रः | ७० | ८—१० |
| ७३ सकलङ्कचन्द्रः | ७० | १३—१८ |
| ७४ हर्म्यम् | ७१ | १९—२३ |

इति दशमो व्यापारः ।

अथैकादशो व्यापारः—

| | | |
|------------------|----|-----|
| ७५ विषयसूचनम् | ७२ | १ |
| ७६ अनुकूलो नायकः | ७२ | २—४ |
| ७७ दक्षिणनायकः | ७३ | ५—७ |
| ७८ वृष्टो नायकः | ७३ | ८—९ |
| ७९ धूर्तो नायकः | ७३ | १० |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|-------------------|--------|---------|
| ८० मानी नायकः | ७४ | ११ |
| ८१ अनभिज्ञो नायकः | ७४ | १२—१३ |
| ८२ शिशुनायकः | ७४ | १४—१६ |
| ८३ वृद्धनायकः | ७४ | १७—१८ |
| ८४ विदग्धनायकः | ७५ | १९ |
| ८५ देशान्तरोपगत- | | |

नायकः ७५ २०—२२

८६ अथ षट्पुवर्णनम्—

| | | |
|-----------------|----|-------|
| तत्र, वर्षर्तुः | ७५ | २३ |
| जलधरः | ७५ | २४—२७ |
| घनदुर्दिनम् | ७६ | २८ |
| घनगर्जितम् | ७६ | ३१—३३ |
| विद्युत् | ७७ | ३४—३५ |
| वर्षाविहारिणी | ७७ | ३६ |
| खद्योतः | ७७ | ३७—३८ |
| हंसः | ७७ | ४० |

इत्येकादशो व्यापारः ।

अथ द्वादशो व्यापारः—

| | | |
|------------|----|-------|
| शरत् | ७८ | १—९ |
| हेमन्तः | ७९ | १०—१८ |
| शिशिरः | ८० | १९—२३ |
| वसन्तसंधिः | ८१ | २४—२९ |
| वसन्तः | ८२ | ३०—३४ |
| ग्रीष्मः | ८२ | ३५—४१ |

इति द्वादशो व्यापारः ।

अथ त्रयोदशो व्यापारः—

| | | |
|--------------|----|-------|
| ८७ हासरसः | ८३ | १—५ |
| ८८ कण्ठरसः | ८४ | ६—१४ |
| ८९ रौद्ररसः | ८५ | १५—१८ |
| ९० वीररसः | ८६ | १९ |
| ९१ भयानकरसः | ८६ | २०—२१ |
| ९२ बीभत्सरसः | ८७ | २२—२३ |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|-------------------------|--------|---------|
| ९३ अद्भुतरसः | ८७ | २४ |
| अत्युक्तिः | ८७ | २५—२६ |
| ९४ शान्तरसः | ८७ | २७—६८ |
| इति त्रयोदशो व्यापारः । | | |
| अथ चतुर्दशो व्यापारः— | | |
| ९५ कल्पद्रुमः | ९३ | २—३ |
| ९६ चम्पकः | ९३ | ४—६ |
| ९७ केसरतरुः | ९३ | ७ |
| ९८ अगुरुः | ९४ | ८—९ |
| ९९ आम्रः | ९४ | १०—१२ |
| १०० द्राक्षा | ९४ | १३—१४ |
| १०१ पलाशः | ९४ | १५—१६ |
| १०२ तालः | ९५ | १७ |
| १०३ वृक्षः | ९५ | १८—२१ |
| १०४ कमलिनी | ९६ | २२—२३ |
| १०५ कुसुद्वती | ९६ | २४—२५ |
| १०६ मृङ्गः | ९६ | २६—३२ |
| १०७ पिकः | ९७ | ३३—३६ |
| १०८ चातकः | ९८ | ३५—३६ |
| १०९ शुक्रः | ९८ | ३७—४० |
| ११० हंसः | ९९ | ४१—४२ |
| ११० समुद्रः | ९९ | ४३—४७ |
| ११२ तडागः | १०० | ४८—४९ |
| ११३ गिरिनिर्झरः | १०० | ५०—५१ |
| ११४ जलम् | १०० | ५२ |
| ११५ कूपः | १०१ | ५३—५४ |
| ११६ महीधरः | १०१ | ५५—५६ |
| ११७ केसरी | १०१ | ५७—६१ |
| ११८ गजः | १०२ | ६२—७० |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|-------------------------|--------|---------|
| ११९ मृगः | १०३ | ७१ |
| १२० मेघः | १०३ | ७२—८० |
| १२१ वायुः | १०५ | ८१—८२ |
| १२२ चन्द्रान्यापदेशः | १०५ | ८३—८६ |
| १२३ रवेरन्यापदेशः | १०५ | ८७—९० |
| इति चतुर्दशो व्यापारः । | | |
| अथ पञ्चदशो व्यापारः— | | |
| १२४ समस्यापूर्तयः | १०६ | १—२६ |
| १२५ बहिर्लपिकाः | १०९ | २७ |
| १२६ चित्रकाव्यम् | ११०—२८ | २९ |
| १२७ सज्जनः | ११० | ३० |
| १२८ उदारः | ११० | ३१—३२ |
| १३० प्रशंसा | ११० | ३३—३४ |
| १३१ संसर्गप्रशंसा | १११ | ३५—३९ |
| १३२ धनस्तुतिः | १११ | ४०—४६ |
| १३३ कृपणः | ११२ | ४७—५१ |
| १३४ अर्थी | ११३ | ५२ |
| १३५ दरिद्रः | ११३ | ५३—५६ |
| १३६ खलः | ११३ | ५७—६० |
| १३७ कुपुत्रः | ११४ | ६१ |
| १३८ कापुरुषः | ११४ | ६२—६४ |
| १३९ कर्कशः | ११५ | ६५—६६ |
| १४० पण्डितः | ११५ | ६७—६८ |
| १४१ मुनिः | ११५ | ६९ |
| १४२ तपोवनम् | ११५ | ७०—७३ |
| १४३ महावनम् | ११६ | ७४ |
| १४४ मृगया | ११६ | ७५—८० |
| काव्यप्रशंसा | ११६ | ८०—९३ |
| इति पञ्चदशो व्यापारः । | | |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|--------------|--------|---------|
| ९३ अद्भुतरसः | ८७ | २४ |
| अत्युक्तिः | ८७ | २५—२६ |
| ९४ शान्तरसः | ८७ | २७—६८ |

इति त्रयोदशो व्यापारः ।

अथ चतुर्दशो व्यापारः—

| | | |
|-----------------|-----|-------|
| ९५ कल्पद्रुमः | ९३ | २—३ |
| ९६ चम्पकः | ९३ | ४—६ |
| ९७ केसरतरुः | ९३ | ७ |
| ९८ अगुरुः | ९४ | ८—९ |
| ९९ आम्रः | ९४ | १०—१२ |
| १०० द्राक्षा | ९४ | १३—१४ |
| १०१ पलाशः | ९४ | १५—१६ |
| १०२ तालः | ९५ | १७ |
| १०३ वृक्षः | ९५ | १८—२१ |
| १०४ कमलिनी | ९६ | २२—२३ |
| १०५ कुसुमवती | ९६ | २४—२५ |
| १०६ शृङ्गः | ९६ | २६—३२ |
| १०७ पिकः | ९७ | ३३—३६ |
| १०८ चातकः | ९८ | ३५—३६ |
| १०९ शुकः | ९८ | ३७—४० |
| ११० हंसः | ९९ | ४१—४२ |
| ११० समुद्रः | ९९ | ४३—४७ |
| ११२ तडागः | १०० | ४८—४९ |
| ११३ गिरिनिर्झरः | १०० | ५०—५१ |
| ११४ जलम् | १०० | ५२ |
| ११५ कूपः | १०१ | ५३—५४ |
| ११६ महीधरः | १०१ | ५५—५६ |
| ११७ केसरी | १०१ | ५७—६१ |
| ११८ गजः | १०२ | ६२—७० |

| | पृष्ठे | श्लोकाः |
|----------------------|--------|---------|
| ११९ मृगः | १०३ | ७१ |
| १२० मेघः | १०३ | ७२—८० |
| १२१ वायुः | १०५ | ८१—८२ |
| १२२ चन्द्रान्यापदेशः | १०५ | ८३—८६ |
| १२३ रवेरन्यापदेशः | १०५ | ८७—९० |

इति चतुर्दशो व्यापारः ।

अथ पञ्चदशो व्यापारः—

| | | |
|-------------------|-----------|-------|
| १२४ समस्यापूर्तयः | १०६ | १—२६ |
| १२५ बहिर्लीपिकाः | १०९ | २७ |
| १२६ चित्रकाव्यम् | ११०—२८—२९ | |
| १२७ सज्जनः | ११० | ३० |
| १२८ उदारः | ११० | ३१—३२ |
| १३० प्रशंसा | ११० | ३३—३४ |
| १३१ संसर्गप्रशंसा | १११ | ३५—३९ |
| १३२ धनस्तुतिः | १११ | ४०—४६ |
| १३३ कृपणः | ११२ | ४७—५१ |
| १३४ अर्थी | ११३ | ५२ |
| १३५ दरिद्रः | ११३ | ५३—५६ |
| १३६ खलः | ११३ | ५७—६० |
| १३७ कुपुत्रः | ११४ | ६१ |
| १३८ कापुरुषः | ११४ | ६२—६४ |
| १३९ कर्कशः | ११५ | ६५—६६ |
| १४० पण्डितः | ११५ | ६७—६८ |
| १४१ मुनिः | ११५ | ६९ |
| १४२ तपोवनम् | ११५ | ७०—७३ |
| १४३ महावनम् | ११६ | ७४ |
| १४४ मृगया | ११६ | ७५—८० |
| काव्यप्रशंसा | ११६ | ८०—९३ |

इति पञ्चदशो व्यापारः ।

पद्यरचनाश्लोकानां वर्णक्रमेणानुक्रमणिका ।

| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
|---------------------------|-----------|-------------------------|-----------|
| अंसेन कर्णे चितुकेन वक्षः | ६३ । २४ | अनेन सर्वार्थिकृतार्थता | १५ । ३५ |
| अकरोः किमु नेत्र | ५३ । ५ | अन्तर्बलान्यहममुष्य | १०१ । ५८ |
| अकूपाराद्वारि | १०४ । ७४ | अन्यार्थमङ्गीकृत | १४ । ३१ |
| अग्रे गीतं सरसकवयः | ८९ । ४३ | अन्यासु तावदुपमर्द | ९६ । २६ |
| अचलं चलदिव चक्षुः | ३१ । १२ | अन्योन्यास्फालभिन्न | २४ । ४७ |
| अचिन्तनीया विधिवश्चनेयं | ७५ । १८ | अपण्यं भूशृङ्गनम— | २७ । ६७ |
| अज्ञानन्दाहातं विशति | ९१ । ५५ | अपसर मधुकर दूरं | ९७ । ३१ |
| अणोरणीयान्महतो | १०९ । २५ | अपि त्वया कैरविणि | ९६ । २४ |
| अणोरणीयान्महतो | १०९ । २६ | अपि दिनमणिरेष क्लेशित | ८० । १४ |
| अत्युल्लसद्विसरहस्य | ८३ । ४० | अपेक्षन्ते न च स्नेहं | ११० । ३० |
| अत्रासितं शयितमत्र | ४४ । ७ | अबलाकृतिं समुपकल्प्य | ६४ । ३० |
| अथ व्यस्यन्व्याघ्रान् | ११६ । १७ | अभूत्प्राची पिङ्गा | ६१ । ११ |
| अथ शृङ्गारशृङ्गार | २९ । १ | अभ्युल्लसन्ति विनिवारित | ७९ । ११ |
| अथ संक्षेपतो वक्ष्ये | ४६ । १ | अमरैर्गतं मधुकरै | १०० । ४९ |
| अथ संसारसंहार | ८३ । ३९ | अमुक्तां भूषयन्तु स्वां | ८ । ४४ |
| अथानवद्यपद्येषु | ९ । १ | अमुष्मिन्नारामे तरुभि | ९८ । ३८ |
| अथोत्तरस्यां दिशि खड्ग | ७८ । ४ | अमृत्यस्य मम स्वर्ण | ३८ । ६४ |
| अदम्भा हि रम्भा विलक्षा | २९ । ५ | अम्बरमेष रमण्यै | ७९ । १२ |
| अद्यापि तन्मनसि | ४५ । १८ | अम्बरविपिनमिदानीं | ६९ । ६ |
| अद्यारभ्य कठोरकार्मुक | २१ । २८ | अम्भोरुहाक्षि शम्भो | ४८ । १६ |
| अधाक्षीन्नो लङ्कां | २८ । ७१ | अयं कामो निजामो वा | १७ । ६ |
| अधिगतपरमार्थान् | ११५ । ६७ | अयं निजः परो वेति | ११० । ३१ |
| अधिदेहलि हन्त | ४१ । १२ | अयं पुरः पार्वणशर्वरीशः | ७० । १३ |
| अधिपञ्चवटीकुटीरवार्ता | ३ । १७ | अयं मृगः समायाति | १०९ । २० |
| अध्यायोधनवेदि | १३ । २१ | अयं रेवाकुञ्जः कुसुम | ५० । २६ |
| अनवाप्तवयसि रहसि | ७४ । १४ | अयमुदयमहीशृत् | ६१ । १२ |
| अनुनयमगृहीत्वा व्याज | ६२ । १६ | अये नृपतिमण्डली | १२ । १९ |
| अनुभूतचरेषु दीर्घिकाणां | ८१ । २६ | अये मातर्दृष्टा मुख | ३१ । २० |
| अनुवनमनुयान्तं | ८४ । ७ | अये मातस्तातः | २७ । ६६ |

पद्यरचनाश्लोकानां वर्णक्रमेणानुक्रमणिका ।

| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
|---------------------------|-----------|-------------------------|-----------|
| अंसेन कर्णे चिवुकेन वक्षः | ६३ । २४ | अनेन सर्वार्थिकृतार्थता | १५ । ३५ |
| अकरोः किमु नेत्र | ५३ । ५ | अन्तर्बलान्यहममुष्य | १०१ । ५८ |
| अकूपाराद्वारि | १०४ । ७४ | अन्यार्थमङ्गीकृत | १४ । ३१ |
| अग्रे गीतं सरसकवयः | ८९ । ४३ | अन्यासु तावदुपमर्द | ९६ । २६ |
| अचलं चलदिव चक्षुः | ३१ । १२ | अन्योन्यास्फालभित्त | २४ । ४७ |
| अचिन्तनीया विधिवश्चनेयं | ७५ । १८ | अपर्णेयं भूभृद्वनम— | २७ । ६७ |
| अज्ञानन्दाहार्तिं विशति | ९१ । ५५ | अपसर मधुकर दूरं | ९७ । ३१ |
| अणोरणीयान्महतो | १०९ । २५ | अपि लया कैरविणि | ९६ । २४ |
| अणोरणीयान्महतो | १०९ । २६ | अपि दिनमणिरेष क्लेशित | ८० । १४ |
| अत्युल्लसद्विसरहस्य | ८३ । ४० | अपेक्षन्ते न च स्नेहं | ११० । ३० |
| अत्रासितं शयितमत्र | ४४ । ७ | अबलाकृतिं समुपकल्प्य | ६४ । ३० |
| अथ व्यस्यन्व्याघ्रान् | ११६ । १७ | अभूत्प्राची पिङ्गा | ६१ । ११ |
| अथ शृङ्गारशृङ्गार | २९ । १ | अभ्युल्लसन्ति विनिवारित | ७९ । ११ |
| अथ संक्षेपतो वक्ष्ये | ४६ । १ | अमरैर्गतं मधुकरै | १०० । ४९ |
| अथ संसारसंहार | ८३ । ३९ | अमुक्तां भूषयन्तु स्वां | ८ । ४४ |
| अथानवद्यपद्येषु | ९ । १ | अमुष्मिन्नारामे तरुभि | ९८ । ३८ |
| अथोत्तरस्यां दिशि खञ्ज | ७८ । ४ | अमूल्यस्य मम स्वर्ण | ३८ । ६४ |
| अदम्भा हि रम्भा विलक्षा | २९ । ५ | अम्बरमेष रमण्यै | ७९ । १२ |
| अद्यापि तन्मनसि | ४५ । १८ | अम्बरविपिनमिदानीं | ६९ । ६ |
| अद्याभ्य कठोरकार्मुक | २१ । २८ | अम्भोरुहाक्षि शम्भो | ४८ । १६ |
| अधाक्षीन्नो लङ्कां | २८ । ७१ | अयं कामो निजामो वा | १७ । ६ |
| अधिगतपरमार्थान् | ११५ । ६७ | अयं निजः परो वेति | ११० । ३१ |
| अधिदेहलि हन्त | ४१ । १२ | अयं पुरः पार्वणशर्वरीशः | ७० । १३ |
| अधिपञ्चवटीकुटीरवार्ता | ३ । १७ | अयं मृगः समायाति | १०९ । २० |
| अध्यायोधनवेदि | १३ । २१ | अयं रेवाकुञ्जः कुसुम | ५० । २६ |
| अनवाप्तवयसि रहसि | ७४ । १४ | अयमुदयमहीभृत् | ६१ । १२ |
| अनुनयमगृहीत्वा व्याज | ६२ । १६ | अये नृपतिमण्डली | १२ । १९ |
| अनुभूतचरेषु दीर्घिकाणां | ८१ । २६ | अये मातर्दृष्टा मुख | ३१ । २० |
| अनुवनमनुयान्तं | ८४ । ७ | अये मातस्तातः | २७ । ६६ |

| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
|-------------------------|-----------|-----------------------------|-----------|
| अरण्यहरिणग्राम | ११६।७५ | आभात्येतद्विचन्द्रं | ९।२ |
| अरुणदलनलिन्याः त्रिगुध | ७२।२ | आभुग्नाङ्गुलिपल्लवौ | ३१।१९ |
| अर्थान्केचिदुपासते | ११८।८४ | आलिङ्गसे चारुलतां | ९७।२९ |
| अर्थिनां कृपणा दृष्टिः | ११०।३२ | आलिङ्गिताः परैर्यान्ति | ११२।४४ |
| अलक्षितकुचाभोगं | ६५।३८ | आश्रयः क्रियतामेष | १०४।७६ |
| अलक्षितगतागतैः | १९।२२ | आस्तां भवान्तरविधौ | ९०।४७ |
| अलसमुजलताभिः | २८।६८ | आह्लादयत्वेष खरैः | २।११ |
| अलसं वपुषि श्लथं | १७।८ | उक्तं यत्कृपणं वचो | ५९।४३ |
| अविरतमिदमम्भः स्वेच्छया | ६३।२८ | उच्चैस्तरादम्बरशैलमौले | ६७।४८ |
| अविशीर्णकान्तपात्रे | ८५।११ | उत्खातं निधिशङ्कया | ८९।४२ |
| अश्रीमहि वयं भिक्षा | ८९।४४ | उत्थाय हृदि लीयन्ते | ११३।५९ |
| असंख्यपुष्पोऽपि मनोभव | ६४।३१ | उत्फुल्लगल्लैरालापा | ११७।८२ |
| असारं संसारं | ८५।९ | उत्सार्य कुन्तलमुपास्य | ६०।३ |
| अस्ताद्रिलम्बिरविविम्ब | ६६।४७ | उत्सृष्टुमम्बुजदृशा | ८२।३३ |
| अस्यामपूर्वं इव कोऽपि | ३२।२४ | उदञ्चद्वक्षोजद्वय | ३१।१७ |
| अस्यैव रम्भोरु तवानन— | ३२।२३ | उदयति तरुणिभतरणौ | ३१।१३ |
| अस्त्राध्यायः पिकानां | ६३।२१ | उद्धूयेत तनूलता | ४०।६ |
| अहल्याकेलिकाले | १०९।२३ | उद्भिदुरं स्तनवदनं | ७४।१७ |
| अहो बाणस्य संधानं | ७८।३ | उद्यद्गर्हिषि दर्दुरारवपुषि | ४८।१२ |
| अहौ वा हारे वा बलवति | ९२।६२ | उद्यद्विवेकतपन | ८८।३५ |
| आकाशदेशात्परिपातु | ८७।८५ | उद्यन्महीपालमरीचि | ११७।८९ |
| आकाशे नटनं सरोरुह | ५७।२५ | उपगूहति दवदहने | ११६।७६ |
| आख्याते हसितं पितामह | ७।३९ | उपनदपुलिने | ९५।१६ |
| आचुम्ब्य बिम्बाधरमङ्ग— | ८०।२० | उपभुक्तखदिरवीटक | ८४।२ |
| आत्तमात्तमधिकान्त | ६३।२७ | उपरिस्था भक्तिरन्त | ८८।३७ |
| आत्मज्ञानविवेक | ९०।५४ | उपश.....विद्या | ९१।५९ |
| आत्मीयं चरणं दधाति | ७२।३ | उमाभिर्मां समुद्रीक्ष्य | ११९।९१ |
| आदाय मांसमखिलं | ८५।१४ | उरोरुहाम्भोरुहदर्श | ५६।२२ |
| आपत्सेव हि महतां | ९४।९ | उषसि भ्रमरयुवानः | ८१।२७ |
| आपृच्छन्ते मलयजतरू | ८१।८५ | ऊरीकर्तुं तुहिनकिरण | ९।४७ |
| आभाति शोभातिशय | ३१।१८ | ऊर्ध्वाकृतप्रीव | ९८।३५ |
| | | इतल्लसद्भिद्रुतभू— | २७।६३ |

| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
|-------------------------|-----------|-----------------------------|-----------|
| अरण्यहरिणग्राम | ११६। ७५ | आभात्येतद्विचन्द्रं | ९। २ |
| अरुणदलनलिन्याः स्निग्ध | ७२। २ | आभुमाङ्गुलिपल्लवौ | ३१। १९ |
| अर्थान्केचिदुपासते | ११८। ८४ | आलिङ्गसे चारुलतां | ९७। २९ |
| अर्थिनां कृपणा दृष्टिः | ११०। ३२ | आलिङ्गिताः परैर्यान्ति | ११२। ४४ |
| अलक्षितकुचाभोगं | ६५। ३८ | आश्रयः क्रियतामेष | १०४। ७६ |
| अलक्षितगतागतैः | १९। २२ | आस्तां भवान्तरविधौ | ९०। ४७ |
| अलसभुजलताभिः | २८। ६८ | आह्लादयत्वेष खरैः | २। ११ |
| अलसं वपुषि श्लथं | १७। ८ | उक्तं यत्कृपणं वचो | ५९। ४३ |
| अविरतमिदमम्भः स्वेच्छया | ६३। २८ | उच्चैस्तरादम्बरशैलमौले | ६७। ४८ |
| अविशीर्णकान्तपात्रे | ८५। ११ | उत्खातं निधिशङ्कया | ८९। ४२ |
| अश्रीमहि वयं भिक्षा | ८९। ४४ | उत्थाय हृदि लीयन्ते | ११३। ५९ |
| असंख्यपुष्पोऽपि मनोभव | ६४। ३१ | उत्फुल्लगद्गैरालापा | ११७। ८२ |
| असारं संसारं | ८५। ९ | उत्सार्य कुन्तलमुपास्य | ६०। ३ |
| अस्ताद्रिलम्बिरविबिम्ब | ६६। ४७ | उत्सृष्टमम्बुजदशा | ८२। ३३ |
| अस्यामपूर्वं इव कोऽपि | ३२। २४ | उदञ्चद्वक्षोजद्वय | ३१। १७ |
| अस्यैव रम्भोरु तवानन— | ३२। २३ | उदयति तरुणिभतरणौ | ३१। १३ |
| अस्त्राध्यायः पिकानां | ६३। २१ | उद्धूयेत तनूलता | ४०। ६ |
| अहल्याकेलिकाले | १०९। २३ | उद्भिदुरं स्तनवदनं | ७४। १७ |
| अहो बाणस्य संधानं | ७८। ३ | उद्यद्गर्हिषि दर्दुरारवपुषि | ४८। १२ |
| अहौ वा हारे वा बलवति | ९२। ६२ | उद्यद्विवेकतपन | ८८। ३५ |
| आकाशदेशात्परिपातु | ८७। ८५ | उद्यन्महीपालमरीचि | ११७। ८९ |
| आकाशे नटनं सरोरुह | ५७। २५ | उपगूहति दवदहने | ११६। ७६ |
| आख्याते हसितं पितामह | ७। ३९ | उपनदपुलिने | ९५। १६ |
| आनुम्य बिम्बाधरमङ्ग— | ८०। २० | उपभुक्तखदिरवीटक | ८४। २ |
| आत्तमात्तमधिकान्त | ६३। २७ | उपरिस्था भक्तिरन्त | ८८। ३७ |
| आत्मज्ञानविवेक | ९०। ५४ | उपश विद्या | ९१। ५९ |
| आत्मीयं चरणं दधाति | ७२। ३ | उमालिमां समुद्रीक्ष्य | ११९। ९१ |
| आदाय मांसमखिलं | ८५। १४ | उरोरुहाम्भोरुहदर्श | ५६। २२ |
| आपत्स्वेव हि महतां | ९४। ९ | उषसि भ्रमरयुवानः | ८१। २७ |
| आपृच्छन्ते मलयजतरु | ८१। ८५ | ऊरीकर्तुं तुहिनकिरण | ९। ४७ |
| आभाति शोभातिशय | ३१। १८ | ऊर्ध्वाकृतग्रीव | ९८। ३५ |
| | | इतन्नसद्विद्रुतभू— | २७। ६३ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|-----------------------------|----------------------------------|
| इदं नभसि भीषणभ्रमद | ६७।५२ कल्पद्रुमोऽपि कालेन |
| इयं चिद्रूपापि प्रकट | ८।४२ कल्लोलसंचलदगाध |
| इयं धत्ते धीरे मलयज | ३९।२ कवयः परितुष्यन्ति |
| इयं पल्ली भिल्लैः | ९८।३९ कविलप्रोद्धुम्फश्रवण |
| इयं बाला पल्ली | ९६।२१ कश्चिन्नवपल्लव |
| इयं संध्यातल्पं किमकृत | ६९।५ कस्तूरी जायते कस्मात् |
| इह तुरगशतैः प्रयान्तु मूढाः | ११५।६८ काञ्ची काञ्ची न घत्ते |
| इह महिषविषाण | ११६।७४ काञ्चीदाम निवेशयन् |
| एक एव खगो मानी | ९८।३६ कान्ते कलितचोलान्ते |
| एकत्र कौलव्रतभङ्ग | ६८।५८ कान्ते नितान्तं दयिता |
| एकस्त्वमावहसि | ९०।४८ कापूरुषः कुक्कुरश्च |
| एकानपाङ्गैरपरांस्तरङ्गै | ५२।४१ कामं कामदुघं भुङ्क्व |
| एकान्तसुन्दरविधानजडः | २९।४ कामं वनेषु हरिणास्तृणेन |
| एणाद्याः परिषत्रैषा | ९४।८ कामसंगरविधौ मृगीदृशः |
| एतत्पुरः स्फुरति | ७३।५ कामस्य जेतुकामस्य |
| एते वारिकणान्किरन्ति | ५१।३२ कामिनो हन्त हेमन्त |
| एतस्य रहसि वक्षसि | ७३।९ का मेघादुपयाति कृष्ण |
| एनं विहाय तुलसी— | ६६।४३ कामेन कामं प्रहिता जवेन |
| एष एव मनस्तापः | १०३।६९ किं कवेस्तस्य काव्येन |
| ओंकारो यस्य कन्दः | ५।२८ किं कोमलैः कलरवैः |
| कण्ठस्य विदधे क्रान्ति | ३५।४१ किं कौमुदी शशिकला |
| कनकमृगमुदस्य | ८४।६ किंचित्कोपकलाकलाप |
| कन्धाखण्डमिदं प्रयच्छ | ११३।५५ किं जातोऽसि चतुष्पथे |
| कमलाकुचकनकाचल | ५।२४ किं तेन हेमगिरिणा |
| करं प्रसार्य रविणा | १०६।८९ किं लं निगूहसे दृति |
| करवारिरुहेण संधुनाने | ३३।३९ किंवा परेण बहुना |
| कर्णेन निर्जितोऽस्मीति | १०७।६ किंशुके शुक मा तिष्ठ |
| कर्णौ तावत्कुवलयदृशां | ३३।२८ किमकारि मन्दमतिना |
| कलभाः पाकधिनम्रा | ७९।७ कियद्वारं वारस्थित |
| कलाधिनाथानयनाय सायं | ७१।१७ कीर्त्यास्य चन्द्रकरकोमलया |
| कलास्तास्ताः सम्यक् | १०५।८३ कुचौ तु परिचर्चितौ |
| कल्पद्रुमोऽपि कालेन | ९२।६४ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|-----------------------------|----------------------------------|
| इदं नभसि भीषणभ्रमद | ६७।५२ कल्पद्रुमोऽपि कालेन |
| इयं चिद्रूपापि प्रकट | ८।४२ कल्लोलसंचलदगाध |
| इयं धत्ते धीरे मलयज | ३९।२ कवयः परितुष्यन्ति |
| इयं पल्ली भिल्लैः | ९८।३९ कविलप्रोद्गुम्फश्रवण |
| इयं बाला पल्ली | ९६।२१ कश्चिन्नवपल्लव |
| इयं संध्यातल्पं किमकृत | ६९।५ कस्तूरी जायते कस्मात् |
| इह तुरगशतैः प्रयान्तु मूढाः | ११५।६८ काञ्ची काञ्ची न धत्ते |
| इह महिषविषाण | ११६।७४ काञ्चीदाम निवेशयन् |
| एक एव खगो मानी | ९८।३६ कान्ते कलितचोलान्ते |
| एकत्र कौलव्रतभङ्ग | ६८।५८ कान्ते नितान्तं दयिता |
| एकस्त्वमावहसि | ९०।४८ कापूरुषः कुक्कुरश्च |
| एकानपाङ्गैरपरांस्तरङ्गै | ५२।४१ कामं कामदुघं भुङ्क्व |
| एकान्तसुन्दरविधानजडः | २९।४ कामं वनेषु हरिणास्तृणेन |
| एणाद्याः परिषन्नैषा | ९४।८ कामसंगरविधौ मृगीदृशः |
| एतत्पुरः स्फुरति | ७३।५ कामस्य जेतुकामस्य |
| एते वारिकणान्किरन्ति | ५१।३२ कामिनो हन्त हेमन्त |
| एतस्य रहसि वक्षसि | ७३।९ का मेघादुपयाति कृष्ण |
| एनं विहाय तुलसी— | ६६।४३ कामेन कामं प्रहिता जवेन |
| एष एव मनस्तापः | १०३।६९ किं कवेस्तस्य काव्येन |
| ओंकारो यस्य कन्दः | ५।२८ किं कोमलैः कलरवैः |
| कण्ठस्य विदधे क्रान्ति | ३५।४१ किं कौमुदी शशिकला |
| कनकमृगमुदस्य | ८४।६ किंचित्कोपकलाकलाप |
| कन्थाखण्डमिदं प्रयच्छ | ११३।५५ किं जातोऽसि चतुष्पथे |
| कमलाकुचकनकाचल | ५।२४ किं तेन हेमगिरिणा |
| करं प्रसार्य रविणा | १०६।८९ किं लं निगूहसे दूति |
| करवारिरुहेण संधुनाने | ३३।३९ किंवा परेण बहुना |
| कर्णेन निर्जितोऽस्मीति | १०७।६ किंशुके शुक्र मा तिष्ठ |
| कर्णौ तावत्कुवलयदृशां | ३३।२८ किमकारि मन्दमतिना |
| कलभाः पाकयिनम्रा | ७९।७ कियद्वारं वारस्थित |
| कलाधिनाथानयनाय सायं | ७१।१७ कीर्त्यास्य चन्द्रकरकोमलया |
| कलास्तास्ताः सम्यक् | १०५।८३ कुचौ तु परिचर्चितौ |
| कल्पद्रुमोऽपि कालेन | ९२।६४ |

| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
|----------------------------|-----------|----------------------------|-----------|
| कुन्दं दन्तैर्मधुनि गदितैः | ४६।२० | क्षीणांशुः शशलाञ्छनः | ६०।२ |
| कुरङ्गीणां यूथं | १०१।५७ | क्षुत्क्षामोऽपि जराकृशोऽपि | १०२।६० |
| कुरवककुचाघातक्रीडा | २६।२० | क्षोणीकाम निजामशाह | १३।२४ |
| कूर्मः पादोऽत्र यष्टिः | १३।२६ | क्षोणीकाम निजामशाह | १६।४ |
| कुवलयनयनाकुचान्त | ४५।१६ | क्षोणीकाम निजाम | २०।२६ |
| कृत्वा सिंहकलेवरं | ५।२५ | क्षोणीपर्यटनव्रते | ११।२० |
| कृपाणकिरणानलं | २२।३३ | क्षोणीपाल त्वदरिहरिणी | २६।५७ |
| कृष्णं समरसतृष्ण | १६।३ | खं यान्ति नो नीरधरा | ४४।८ |
| केनाप्यनर्थरुचिना | ९०।५१ | खद्योतपोतप्रकराः | ७७।३७ |
| केयं माता पिशाची | ८६।१७ | खद्योतो द्योतते | १०५।८७ |
| केलिं कुरुष्व परिभुङ्क्ष्व | १०२।६३ | खलानां कण्टकानां च | ११४।५९ |
| केशः कुन्दमिषादिवो | ५१।३१ | ख्याता वयं समधुपा | ७१।१५ |
| कोकानुव्रीवयन्तः | ६२।१४ | गगनविपिनसिंहः कामभू | ७०।८ |
| कोकः स्तोक्विमुक्त | ५१।३० | गच्छ गच्छसि चेत्कान्त | ४८।११ |
| कोदण्डं न ददाति | २२।३७ | गजस्य पङ्कमग्रस्य | १०३।७० |
| कोदण्डस्तव हस्तगो | २२।३६ | गणेश्वरकवेर्वचो | ११८।८९ |
| कोपं चम्पक मुञ्च | ९३।६ | गणैरुत्तुङ्गतां याति | १११।३४ |
| कोपो यत्र भ्रुकुटिरचना | ५५।१३ | गतप्राया रात्रिः शशिमुखि | ६०।१ |
| कौपे पयसि लघीयसि | १०२।६४ | गताः केचित्प्रबोधाय | ८४।४ |
| क्रीडन्नयानवया | ४।२१ | गतागतकुतूहलं नयनयोः | ४६।४ |
| क्रीडाकारि तडागवारिणि | १०२।६२ | गन्तुं यदि व्यवसितासि | ६८।५६ |
| क्रीडातुङ्गतुरङ्गटाप | ८६।१८ | गम्भीरनाभीहृदसंवि- | ३७।५७ |
| क्रीडामूलं दुकूलं | १६।३९ | गाढे तमसि सरन्ती | ६७।५३ |
| क्रीडासु सत्रीडमहो विलासा | ७५।१९ | गेहे गेहे सुभगमुदशो | १७।५ |
| क्रोडं तातस्य गच्छन् | ६।३१ | घनतरघनवृन्दच्छादिते | ७६।२८ |
| कौञ्चः क्रीडतु कूर्दतां | १००।४८ | घनतरघनवृन्दच्छादिते | ७६।२९ |
| क्वचित्कृष्णार्जुनगुणा | ३४।३३ | घनोद्गमे गाढतरेऽन्धकारे | ७६।३० |
| क्षणं कान्ताराग | २५।५२ | घनोऽयं चेदश्चेत् | ४०।४ |
| क्षत्रियस्योरसि क्षत्रं | २३।४२ | प्रातः तालफलाशया | २६।६१ |
| क्षपां क्षामीकृत्य प्रसभ | ७७।३५ | चञ्चल्या दहति क्षत | ६।२९ |
| क्षितिप किमपि चित्रं | १४।२७ | चञ्चद्भुजभ्रमित | ८६।१६ |
| क्षीणः क्षीणः समीपलं | १०५।८५ | चन्द्रबिम्बरविबिम्बतारका | ७६।३२ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|----------------------------|-----------------------------------|
| कुन्दं दन्तैर्मधुनि गदितैः | ४६।२० क्षीणांशुः शशलाञ्छनः |
| कुरङ्गीणां यूथं | १०१।५७ क्षुत्क्षामोऽपि जराकृशोऽपि |
| कुरवककुचाघातक्रीडा | २६।२० क्षोणीकाम निजामशाह |
| कूर्मः पादोऽत्र यष्टिः | १३।२६ क्षोणीकाम निजामशाह |
| कुवलयनयनाकुचान्त | ४५।१६ क्षोणीकाम निजाम |
| कृत्वा सिंहकलेवरं | ५।२५ क्षोणीपर्यटनव्रते |
| कृपाणकिरणानलं | २२।३३ क्षोणीपाल त्वदरिहरिणी |
| कृष्णं समरसत्पुष्प | १६।३ खं यान्ति नो नीरधरा |
| केनाप्यनर्थरुचिना | ९०।५१ खद्योतपोतप्रकराः |
| केयं माता पिशाची | ८६।१७ खद्योतो द्योतते |
| केलिं कुरुष्व परिभुङ्क्ष्व | १०२।६३ खलानां कण्टकानां च |
| केशः कुन्दमिषादिवो | ५१।३१ ख्याता वयं समधुपा |
| कोकानुव्रीवयन्तः | ६२।१४ गगनविपिनसिंहः कामभू |
| कोकः स्तोकविमुक्त | ५१।३० गच्छ गच्छसि चेत्कान्त |
| कोदण्डं न ददाति | २२।३७ गजस्य पङ्कमग्रस्य |
| कोदण्डस्तव हस्तगो | २२।३६ गणेश्वरकवेर्वचो |
| कोपं चम्पक मुञ्च | ९३।६ गणैरुत्तुङ्गतां याति |
| कोपो यत्र भ्रुकुटिरचना | ५५।१३ गतप्राया रात्रिः शशिमुखि |
| कौपे पयसि लघीयसि | १०२।६४ गताः केचित्प्रबोधाय |
| क्रीडन्नयानवया | ४।२१ गतागतकुतूहलं नयनयोः |
| क्रीडाकारि तडागवारिणि | १०२।६२ गन्तुं यदि व्यवसितासि |
| क्रीडातुङ्गतुरङ्गटाप | ८६।१८ गम्भीरनाभीहृदसंवि- |
| क्रीडामूलं दुकूलं | १६।३९ गाढे तमसि सरन्ती |
| क्रीडासु सत्रीडमहो विलासा | ७५।१९ गेहे गेहे सुभगमुदृशो |
| क्रोडं तातस्य गच्छन् | ६।३१ धनतरधनवृन्दच्छादिते |
| कौञ्चः क्रीडतु कूर्दतां | १००।४८ धनतरधनवृन्दच्छादिते |
| क्वचित्कृष्णार्जुनगुणा | ३४।३३ धनोद्गमे गाढतरेऽन्धकारे |
| क्षणं कान्ताराग | २५।५२ धनोऽयं चेदश्चेत् |
| क्षत्रियस्योरसि क्षत्रं | २३।४२ प्रातः तालफलाशया |
| क्षपां क्षामीकृत्य प्रसभ | ७७।३५ चञ्चल्या दहति क्षत |
| क्षितिप किमपि चित्रं | १४।२७ चञ्चद्भुजप्रमित |
| क्षीणः क्षीणः समीपलं | १०५।८५ चन्द्रबिम्बरविबिम्बतारका |
| | ६०।२ |
| | १०२।६० |
| | १३।२४ |
| | १६।४ |
| | २०।२६ |
| | ११।२० |
| | २६।५७ |
| | ४४।८ |
| | ७७।३७ |
| | १०५।८७ |
| | ११४।५९ |
| | ७१।१५ |
| | ७०।८ |
| | ४८।११ |
| | १०३।७० |
| | ११८।८९ |
| | १११।३४ |
| | ६०।१ |
| | ८४।४ |
| | ४६।४ |
| | ६८।५६ |
| | ३७।५७ |
| | ६७।५३ |
| | १७।५ |
| | ७६।२८ |
| | ७६।२९ |
| | ७६।३० |
| | ४०।४ |
| | २६।६१ |
| | ६।२९ |
| | ८६।१६ |
| | ७६।३२ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|------------------------------|-----------|
| चन्द्रे गते सभिकतामिह | ७९। ९ |
| चन्द्रोऽनेन कलङ्कितो | ११७। ७९ |
| चमूभरन्यश्चदुदञ्च | १०७। ३ |
| चरमगिरिनिकुञ्जमुष्ण | ६७। ५१ |
| चलं चेतः पुंसां सहज | ५३। ४ |
| चलद्वलाकादशनाभिराम | ७५। २५ |
| चित्राय त्वयि चिन्तिते | ४०। ७ |
| चित्राय त्वयि चिन्तिते | १०८। १४ |
| चित्रोत्कीर्णादपि विषधरात् | ६७। ५४ |
| चिरं ध्याता रामा | ९२। ६६ |
| चिरं बुद्ध्या | ९३। १ |
| चिरादुपेतः प्रथमं प्रदान | ७३। ६ |
| चुम्बनेषु परिवर्तिता | ४९। २० |
| चुलुकयसि चन्द्रदीधिति | ४०। ५ |
| चूडारत्नमपांनिधि | ४२। १७ |
| चूतानां चिरनिर्गतापि | ८१। २४ |
| चेत्पौरादपि शङ्कसे | ५२। ३९ |
| चोलाञ्चलेन चलहारलता | ६५। ३६ |
| चोलाञ्जना कुचनिचोल | ६१। ९ |
| चोली चोलीं नतु कल— | १७। ९ |
| जडता जडतामम्ब | ८। ४३ |
| जनस्थाने भ्रान्तं | ११३। ५२ |
| जनिः सरोऽङ्गादति | ९६। २५ |
| जन्तुः संसारकान्तारे | ८८। २९ |
| जन्मेदं वध्यतां नीतं | ९१। ५६ |
| जाता शिखण्डिनी प्राग् | ११८। ८५ |
| जातिर्यतु रसातलं | १११। ४० |
| जानीमस्तव गौरि | ४२। २२ |
| जानीमो वदनं सरोरुह | ३९। ६६ |
| जानीमो वयमास | ३९। ६५ |
| जाने युष्मत्प्रयाणे | १७। १० |
| जाने कोपपराङ्मुखी | ४५। १५ |
| जीवेन तुलितं प्रेम | ४२। १८ |
| झञ्झानिलोऽपि सुरतान्त | ६०। ५ |
| तटमुपगतं पद्मे पद्मे | ७८। ४० |
| तन्मनस्विन्मनः स्वीयं | ८८। ३९ |
| तपोवने केसरिणीकरिण्यो | ११५। ७० |
| तप्ता मही विरहिणा | ८३। ३८ |
| तरले जीवने जन्तुः | ८८। ३१ |
| तर्कज्ञानां तर्कशास्त्रार्क | १। ३ |
| तर्तुं पर्वतसंनिभेन | १०७। ५ |
| तव कुवलयार्क्षि | ३०। ८ |
| तवानने मानिनि | १०६। २ |
| तवैष विद्रुमच्छायो | ३५। ४० |
| तवोपकण्ठस्थिततार | ३५। ४६ |
| तस्मिन्काले जलद | ४४। १२ |
| तस्याः पद्मपलाशाक्ष्याः | ३८। ६२ |
| तस्या मुखेन्दोरवल्लो— | ३७। ५४ |
| तस्याः स्तनौ विरहता— | ४२। १९ |
| ताटङ्कमस्यास्तरलेक्षणायाः | ३५। ३९ |
| तादृग्दण्डविवर्तन | २४। ४९ |
| तापो नापगतस्तृषा | १०३। ६८ |
| ताराक्षतान्प्रयिकिरन् | ७०। ११ |
| तारापतेर्बिम्बमिव | ३४। ३६ |
| तारुण्यं मुखमण्डलेन | ४७। ६ |
| तावत्कविविहङ्गानां | ११८। ८६ |
| तीक्ष्णं रविस्तपति नीच | ७८। ५ |
| तुङ्गब्रह्माण्डसिंहासन | ११। १४ |
| तुङ्गाभोगे स्तनगिरि | ३७। ५२ |
| तुषारभारविक्षुण्णं प्रेक्ष्य | ८०। १९ |
| ते क्षत्रियाः कुण्डलिनो | २३। ४१ |
| ते ते चातकपोतका | १०३। ७२ |
| ते भूमीपतयो जयन्ति | ११८। ८८ |
| त्रियामा शतयामा स्यात् | १०९। २१ |

| पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. | |
|----------------------------|---------|-----------------------------|---------|
| चन्द्रे गते समिकतामिदृ | ७९। ९ | जीवेन तुलितं प्रेम | ४२। १८ |
| चन्द्रोऽनेन कलङ्कितो | ११७। ७९ | झञ्झानिलोऽपि सुरतान्त | ६०। ५ |
| चमूभरन्यश्चदुदञ्च | १०७। ३ | तटमुपगतं पद्मे पद्मे | ७८। ४० |
| चरमगिरिनिकुञ्जमुष्ण | ६७। ५१ | तन्मनस्विन्मनः स्वीयं | ८८। ३९ |
| चलं चेतः पुंसां सहज | ५३। ४ | तपोवने केसरिणीकरिण्यो | ११५। ७० |
| चलद्वलाकादशनाभिराम | ७५। २५ | तप्ता मही विरहिणा | ८३। ३८ |
| चित्राय त्वयि चिन्तिते | ४०। ७ | तरले जीवने जन्तुः | ८८। ३१ |
| चित्राय त्वयि चिन्तिते | १०८। १४ | तर्कज्ञानां तर्कशास्त्रार्क | १। ३ |
| चित्रोत्कीर्णादपि विषधरात् | ६७। ५४ | तर्तुं पर्वतसंनिभेन | १०७। ५ |
| चिरं ध्याता रामा | ९२। ६६ | तव कुवलयक्षि | ३०। ८ |
| चिरं बुद्ध्या | ९३। १ | तवानने मानिनि | १०६। २ |
| चिरादुपेतः प्रथमं प्रदान | ७३। ६ | तवैष विद्रुमच्छायो | ३५। ४० |
| चुम्बनेषु परिवर्तिता | ४९। २० | तवोपकण्ठस्थिततार | ३५। ४६ |
| चुलुकयसि चन्द्रदीधिति | ४०। ५ | तस्मिन्काले जलद | ४४। १२ |
| चूडारत्नमपानिधि | ४२। १७ | तस्याः पद्मपलाशाक्ष्याः | ३८। ६२ |
| चूतानां चिरनिर्गतापि | ८१। २४ | तस्या मुखेन्दोरवलो- | ३७। ५४ |
| चेत्पौरादपि शङ्कसे | ५२। ३९ | तस्याः स्तनौ विरहता- | ४२। १९ |
| चेलाञ्चलेन चलहारलता | ६५। ३६ | ताटङ्कमस्यास्तरलेक्षणायाः | ३५। ३९ |
| चोलाङ्गना कुचनिचोल | ६१। ९ | तादृग्दण्डविवर्तन | २४। ४९ |
| चोली चोलीं नतु कल— | १७। ९ | तापो नापगतस्तृषा | १०३। ६८ |
| जडता जडतामम्ब | ८। ४३ | ताराक्षतान्प्रविकिरन् | ७०। ११ |
| जनस्थाने भ्रान्तं | ११३। ५२ | तारापतेर्बिम्बमिव | ३४। ३६ |
| जनिः सरोऽङ्गादति | ९६। २५ | तारुण्यं मुखमण्डलेन | ४७। ६ |
| जन्तुः संसारकान्तारे | ८८। २९ | तावत्कविविहङ्गानां | ११८। ८६ |
| जन्मेदं वध्यतां नीतं | ९१। ५६ | तीक्ष्णं रविस्तपति नीच | ७८। ५ |
| जाता शिखण्डिनी प्राग् | ११८। ८५ | तुङ्गब्रह्माण्डसिंहासन | ११। १४ |
| जातिर्योतु रसातलं | १११। ४० | तुङ्गाभोगे स्तनगिरि | ३७। ५२ |
| जानीमस्तव गौरि | ४२। २२ | तुषारभारविभुषणं प्रेक्ष्य | ८०। १९ |
| जानीमो वदनं सरोरुह | ३९। ६६ | ते क्षत्रियाः कुण्डलिनो | २३। ४१ |
| जानीमो वयमास | ३९। ६५ | ते ते चातकपोतका | १०३। ७२ |
| जाने युष्मत्प्रयाणे | १७। १० | ते भूमीपतयो जयन्ति | ११८। ८८ |
| जाने कोपपराङ्मुखी | ४५। १५ | त्रियामा शतयामा स्यात् | १०९। २१ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|-----------------------------|-----------|
| त्वं दूति निरगाः कुञ्जं | ५४। १२ |
| त्वत्कीर्तिमौक्तिकफलानि | १०८। १५ |
| त्वत्प्रतापानलज्वाला | १३। २५ |
| त्वत्प्रतापार्कबिम्बेन | १४। २८ |
| त्वदरिणृपतिकेली | २८। ६९ |
| त्वदरिणृपतिमाशा | २४। ५० |
| त्वदीयमुखपङ्कजं | ५५। १७ |
| त्वद्याने वाजिराजि | १८। १२ |
| त्वद्वैरिणो दूरपला- | २८। ७२ |
| त्वद्वैरिभवनलिखित | २८। ७० |
| त्वमद्य सिन्धो जगदेक | ९९। ४४ |
| त्वमध्वनीनाध्वनि | ९५। १७ |
| त्वमेव चातकाधार | १०५। ८० |
| त्वया वीरगुणाकृष्टा | १५। ३७ |
| त्वामालिख्य प्रणयकुपितां | ४४। ११ |
| दक्षिणाशाप्रवृत्तस्य | १०६। ८८ |
| दत्तं करं वक्षसि | ४९। २१ |
| दधत्यधरचुम्बनं नयन | ८०। १५ |
| दयिताबाहुपाशस्य | ३५। ४४ |
| दरिद्रजनरञ्जनस्तव | ७। ३५ |
| दशमुखभजमानिहीकः (?) | ७६। २७ |
| दानार्थिनो मधुकरा | १०२। ६५ |
| दाने द्राघीयसि | १४। ३२ |
| दामोदरकराघातै | १०७। १२ |
| दासेरकस्य दासीयं | ९४। १३ |
| दिग्बालाकरकन्दुकः | ७०। १२ |
| दिदृक्षमाणः क्षणमायताक्ष्या | ७५। २० |
| दिवसे घटिकास्त्रिशत् | ५१। ३४ |
| दिव्यचक्षुरहं जातः | ४३। २ |
| दिव्यहरेर्मुखकुहरे | ८७। २६ |
| दीपाङ्कुरः स्फुरति | ४९। २२ |
| दुग्धाम्भोधावगाधे | ९। ५ |
| दुग्धाम्भोधेः परिचुलकनं | ९। ३ |
| दुर्दिवसे घनतिमिरे | ५२। ३६ |
| दुःसहसंतापभयात् | ६२। १८ |
| दृग्भ्यां यस्य विलोकनाय | २। ८ |
| दृष्ट्वा पतिः पद्मदशं | ७३। ७ |
| दृशा विदधिरे दिशः | ६६। ४४ |
| दृशा सपदि मीलितं | ५६। २४ |
| दृशौ किमस्याश्चपलाय- | ३४। ३१ |
| दृश्यं चेन्मुखपङ्कजं | ५५। १८ |
| देव क्षोणितलाधिपे | १४। ३० |
| देव त्वत्करनीरदे | १५। ३६ |
| देव त्वद्यशसा | १०। ६ |
| देव त्वद्विजये | १८। ११ |
| देहं हेमद्युति | ३७। ५१ |
| देहे दुर्ललितस्य | ५०। २७ |
| देह्याज्ञां विज्ञ राज्ञां | ८५। १५ |
| दैवाद्वानेष्वधिगतेषु | ८९। ४६ |
| दोलायमानाः प्रियनुद्यमानाः | ६६। ४६ |
| द्राक्षां प्रदेहि मधु वा | ९८। ४० |
| द्वारं खड्गिभिरावृतं | २५। ५० |
| द्वारे स्तम्भविलम्बा | ४८। १५ |
| द्वारे कल्पतरून् गृहेषु | ३। १६ |
| धनमर्जय काकुत्स्थ | ११२। ४३ |
| धन्योऽसौ पौत्रिणीपुत्रो | १०७। १० |
| धर्मे सक्तिर्भवे भक्तिः | ८८। ३८ |
| धाटीधेतोभवनर | ४१। ४३ |
| धीरसिंहारिमारीणां | २६। ५८ |
| धुन्वन्त्या करपल्लवं | ७३। १० |
| धूलीभिर्दिवमन्धयन् | १९। २१ |
| नतभ्रुवो लोचनखज | ३४। ३० |
| न तादृक्पूर्वे न च | ९४। १२ |
| न दन्तुरमुरःस्थलं | ३०। ११ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|----------------------------|----------------------------------|
| त्वं दूति निरगाः कुञ्जं | दुग्धाम्भोधेः परिचुलकनं ९१ ३ |
| त्वत्कीर्तिमौक्तिकफलानि | दुर्दिवसे घनतिमिरे ५२ ३६ |
| त्वत्प्रतापानलज्वाला | दुःसहसंतापभयात् ६२ १८ |
| त्वत्प्रतापार्कबिम्बेन | दृग्भ्यां यस्य विलोकनाय २१ ८ |
| त्वदरिनुपतिकेली | दृष्ट्वा पतिः पद्मदशं ७३ ७ |
| त्वदरिनुपतिमाशा | दृशा विदधिरे दिशः ६६ ४४ |
| त्वदीयमुखपङ्कजं | दृशा सपदि मीलितं ५६ २४ |
| त्वद्याने वाजिराजि | दृशौ किमस्याश्चपलाय- ३४ ३१ |
| त्वद्वैरिणो दूरपला- | दृश्यं चेन्मुखपङ्कजं ५५ १८ |
| त्वद्वैरिभवनलिखित | देव क्षोणितलाधिपे १४ ३० |
| त्वमद्य सिन्धो जगदेक | देव त्वत्करनीरदे १५ ३६ |
| त्वमध्वनीनाध्वनि | देव त्वद्यशसा १० ६ |
| त्वमेव आतकाधार | देव लद्विजये १८ ११ |
| त्वया वीरगुणाकृष्टा | देहं हेमद्युति ३७ ५१ |
| त्वामालिख्य प्रणयकुपितां | देहे दुर्ललितस्य ५० २७ |
| दक्षिणाशाप्रवृत्तस्य | देह्यानां विज्ञ राज्ञां ८५ १५ |
| दत्तं करं वक्षसि | दैवाद्धनेष्वधिगतेषु ८९ ४६ |
| दधत्यधरचुम्बनं नयन | दोलायमानाः प्रिययुद्यमानाः ६६ ४६ |
| दयिताबाहुपाशस्य | द्राक्षां प्रदेहि मधु वा ९८ ४० |
| दरिद्रजनरजनस्तव | द्वारं खड्गिभिरावृतं २५ ५० |
| दशमुखभजमानिहीकः (?) | द्वारि स्तम्भविलम्भा ४८ १५ |
| दानार्थिनो मधुकरा | द्वारे कल्पतरून् गृहेषु ३ १६ |
| दाने द्राघीयसि | धनमर्जय काकुत्स्थ ११२ ४३ |
| दामोदरकराघातै | धन्योऽसौ पौत्रिणीपुत्रो १०७ १० |
| दासेरकस्य दासीयं | धर्मे सक्तिर्भवे भक्तिः ८८ ३८ |
| दिग्बालाकरकन्दुकः | धाटीश्चेतोभवनर ४१ ४३ |
| दिदक्षमाणः क्षणमायताक्ष्या | धीरसिंहारिमारीणां २६ ५८ |
| दिवसे घटिकास्त्रिशत् | धुन्वन्त्या करपल्लवं ७३ १० |
| दिव्यचक्षुरहं जातः | धूलीभिर्दिवमन्धयन् १९ २१ |
| दिव्यहरेर्मुखकुहरे | नतभ्रुवो लोचनखज ३४ ३० |
| दीपाङ्कुरः स्फुरति | न तादृक्पूर्वे न च ९४ १२ |
| दुग्धाम्भोधावगाधे | न दन्तुरमुरःस्थलं ३० ११ |

| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
|--------------------------|-----------|--------------------------|-----------|
| न नीतमुपनासिकं | ५४। ८ | नीराणि नक्रवडवानल | १०५। ८६ |
| नभोलताकुञ्जमुपागतायाः | ७०। १० | नीरात्तीरमुपागता | ५०। २३ |
| नमस्तस्मै करालाय | ८७। २७ | नूनं कलत्रात्किमुपद्रुतो | ३६। ४० |
| नयनस्य तुलां चक्रे | ३३। २९ | नूनमूरुद्वयं तस्या | ३८। ६३ |
| नयनोत्पलजलधारा | ४१। १५ | नृपतिनिजामचमूचर | १९। १७ |
| नराः संसारकान्तारे | ८८। ३० | नैतस्य प्रसरद्वयेन | ६६। ४२ |
| नरैर्विफलजन्मभिः | ५६। १९ | नैवालवालवल्यं | १०४। ७५ |
| न शीलं दृग्भङ्गी | ३०। १० | नैषा वेगं मृदुतरतनुः | ५७। २८ |
| न स्थातव्यं न गन्तव्यं | १११। ३६ | नो तावत्कलयामि | २१। २९ |
| नायं मुञ्चति सुभ्रुवामपि | ४७। ८ | नौश्च दुर्जनजिह्वा च | ११४। ६० |
| नारीणां खलबन्धुर | ५२। ३८ | पतितैः शिरीषरजसां | ६४। २९ |
| नारीणां वचनेन कर्म | ११४। ६२ | पत्युः प्रवृत्तस्य रतौ | ५८। ३१ |
| नालिङ्गन्ति पयोधरौ | २५। ५१ | पदन्यासो गेहात् | ४६। ३ |
| नाशिष्यः किमभूद्भुवः | ३। १५ | पद्मायास्तनहेमसद्धानि | ८। ४१ |
| निजामवसुधाधिपे | १९। १८ | पपात गङ्गा हरमौलि | ५९। ३८ |
| निदाघकाले किल | ८२। ३५ | पपात मेरोः सुरसिन्धु— | ५८। ३६ |
| निद्रितस्य बत शम्बर | ७६। ३३ | पयोदजालजम्बाल | ७८। २ |
| निधानमानन्दनिधे | ९२। ६८ | पयोधरस्तावदयं | ३८। ६१ |
| निपीय पीयूषमयूख— | ७१। १९ | पयोधराकारधरो हि | ६५। ४१ |
| नियमितपाथोनिधिना | ४। १९ | परस्पराश्लेषवशं गता— | ६३। २५ |
| निर्णेतव्यो मनसिज | ३७। ६० | परस्परेण क्षतयोः | २३। ४० |
| निर्मासं मुखमण्डले | २०। २३ | परिभ्रमन्त्या भ्रमरी— | ६४। ३५ |
| निर्वेदः सरसीरुहस्य | ७०। ९ | परिम्लानं पीनस्तन | ४०। ८ |
| निशम्य केलीभवनोप— | ७५। २१ | परिहरति वयो यथा यथा | ३१। १४ |
| निशाधिनाथस्य कराभि— | ६९। ७ | परीक्ष्य सत्कुलं विद्यां | ११३। ५३ |
| निःशेषच्युतचन्दनं स्तन | ५४। ११ | पर्यस्तालकगण्डपालि | ७४। १३ |
| निषेवन्तामेते वृषमहिष | १०३। ६६ | पाणौ पद्मधिया मधूक | ६४। ३२ |
| निष्पात्याशु हिमांशु | ४। २० | पाथोधरीयपटलेन | ७७। ३८ |
| निष्पीतपीनतिमिराणि | ९९। ४३ | पाथं दुग्धाम्बुधिरपि | ९। ४ |
| निष्पीते कलशोद्भवेन | २१। ३२ | पायान्मायाजरठकमठा | २। ७ |
| निहत निहत तूणे धत्त | ११७। ७८ | पायान्मायामृगेन्द्रो | २। १२ |
| निरं दूरं तदपि विरसं | १०४। ७३ | पित्रोनैव वचः शृणोति | ११४। ६१ |

| पु. श्लो. | पु. श्लो. |
|--------------------------|---------------------------------|
| न नीतमुपनासिकं | नीराणि नक्रवडवानल १०५।८६ |
| नभोलताकुञ्जमुपागतायाः | नीरात्तीरमुपागता ५०।२३ |
| नमस्तस्मै करालाय | नूनं कलत्रात्किमुपद्रुतो ३६।४० |
| नयनस्य तुलां चक्रे | नूनमूर्खद्वयं तस्या ३८।६३ |
| नयनोत्पलजलधारा | नृपतिनिजामचमूचर १९।१७ |
| नराः संसारकान्तारे | नैतस्य प्रसरद्वयेन ६६।४२ |
| नरैर्विफलजन्मभिः | नैवालवालवल्यं १०४।७५ |
| न शीलं हरभङ्गी | नैषा वेगं स्रुततरतनुः ५७।२८ |
| न स्थातव्यं न गन्तव्यं | नो तावत्कलयामि २१।२९ |
| नायं मुञ्चति सुभ्रुवामपि | नौश्च दुर्जनजिह्वा च ११४।६० |
| नारीणां खलबन्धुर | पतितैः शिरीषरजसां ६४।२९ |
| नारीणां वचनेन कर्म | पत्युः प्रवृत्तस्य रतौ ५८।३१ |
| नालिङ्गन्ति पयोधरौ | पदन्यासो गेहात् ४६।३ |
| नाशिष्यः किमभूद्भुवः | पद्मायास्तनहेमसद्धानि ८।४१ |
| निजामवसुधाधिपे | पपात गङ्गा हरमौलि ५९।३८ |
| निदाघकाले किल | पपात मेरोः सुरसिन्धु— ५८।३६ |
| निद्रितस्य बत शम्बर | पयोदजालजम्बाल ७८।२ |
| निधानमानन्दनिधे | पयोधरस्तावदयं ३८।६१ |
| निपीय पीयूषमयूख— | पयोधराकारधरो हि ६५।४१ |
| नियमितपाथोनिधिना | परस्पराश्लेषवशं गता— ६३।२५ |
| निर्णेतव्यो मनसिज | परस्परेण क्षतयोः २३।४० |
| निर्मासं मुखमण्डले | परिभ्रमन्त्या भ्रमरी— ६४।३५ |
| निर्वेदः सरसीरुहस्य | परिम्लानं पीनस्तन ४०।८ |
| निशम्य केलीभवनोप— | परिहरति वयो यथा यथा ३१।१४ |
| निशाधिनाथस्य कराभि— | परीक्ष्य सत्कुलं विद्यां ११३।५३ |
| निःशेषच्युतचन्दनं स्तन | पर्यस्तालकगण्डपालि ७४।१३ |
| निषेवन्तामेते वृषमहिष | पाणौ पद्मधिया मधूक ६४।३२ |
| निष्पात्याशु हिमांशु | पाथोधरीयपटलेन ७७।३८ |
| निष्पीतपीनतिमिराणि | पाद्यं दुग्धाम्बुधिरपि ९।४ |
| निष्पीते कलशोद्भवेन | पायान्मायाजरठकमठा २।७ |
| निहत निहत तूणे धत्त | पायान्मायामृगेन्द्रो २।१२ |
| निररं दूरं तदपि विरसं | पित्रोनैव वचः शृणोति ११४।६१ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|----------------------------|-------------------------------------|
| पिपासुरिव संचल— | बीभत्साविषया ९०।५२ |
| पीत्वा गर्जन्यपस्ते | भक्ते द्वेषो जडे प्रीतिः ११२।४३ |
| पुच्छं चेदहमुत्क्षिपामि | भङ्क्त्वा भोक्तुं न भुङ्क्ते ६९।२ |
| पुनः पुनर्भुवि क्षिप्तः | भङ्गदं भङ्गुरं भोगं ८८।३४ |
| पुनरपि मिलनं यदा | भल्लैर्भिन्नाः प्रतिनृपतयः २२।३४ |
| पुत्रमन्दिरकलत्र | भवत्तुरगनिष्ठुर २३।४४ |
| प्रकटयति वियोगिप्रेय | भानोः पादैर्दहनपरुषैः ६३।२३ |
| प्रतप्तायः पिण्डाविव | भामिन्यो विदधतु ५२।४० |
| प्रतिनगरमटन्ती | भालस्थलीचन्द्रकलाकलङ्क ३२।२२ |
| प्रदोषमातङ्गमनङ्गदेवः | भित्तौ भित्तौ प्रतिफल— ७२।२१ |
| प्रबोधभाजः परमस्य | भिक्षितकमलकुटुम्बा ६०।६ |
| प्रयान्ति पान्थास्त्वरया | भुक्तानि यैस्त्व फलानि ९५।१९ |
| प्रवर्तस्वेति को नाम | भूभृन्मौलितटीषु २०।२४ |
| प्रविशति हरितामः | भूयादेष सतां हिताय २।१० |
| प्रशान्ते नूपुरारावे | भृङ्गीरवो मङ्गलगीत ८२।२९ |
| प्रस्थानं रतिमन्दिरात् | भेकैः कोटरशायिभिः १०४।७७ |
| प्रस्थानं वलयैः कृतम् | भेरीभाङ्कृतिभिस्तुरङ्ग १८।१६ |
| प्रागल्भ्यं प्रथयन्त्यशो | भ्रमच्चरणपल्लवक्वण ६५।४० |
| प्राचीमहीधरशिला | भ्रमन्वनान्ते नवमञ्जरीषु ९३।५ |
| प्राज्ञाः कापि प्रतिज्ञापि | भ्रमात्प्रकीर्णे भ्रमरीषु ६४।३४ |
| प्रातः प्रकाममहिफेन | भ्रान्त्वा भूवलयं ११।१३ |
| प्रातः स्मेरसरोरुहामय | भ्रूरेखायुगलं भाति ३३।२७ |
| प्रावृषेण्यस्य मालिन्यं | मज्जन्या रससिन्धौ ५८।३० |
| प्रियतममजातयौवन | मत्तेभकुम्भपरिणाहि ५९।३९ |
| प्रियसखि न तथा | मदकलकृतान्तकासर ४२।२१ |
| प्रियो मयेवौऽवचितैः | मदनमवलोक्य निष्फल ९६।२७ |
| प्रेरयन्ति हृदयं न लोचनं | मदानने चुम्बनचञ्च ५०।२५ |
| फेत्कारकृत्फेरुभि | मद्रोः शृङ्गं सप्ततालप्रमाणं १०९।२२ |
| बन्धुव्रजैः सुभट | मधुपानसमुल्लसत्प्रवालं ५४।३५ |
| बालक्रीडनमिन्दुशेखर | मध्याह्नमीयुषि रवौ ६२।१९ |
| बाले तवोरोजसुवेले | मध्याह्ने नूनमापोऽपि ६२।२० |
| बाह्यः परिग्रहविधिः | मध्योऽयं बलिसद्य ३५।४८ |

| | पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. |
|----------------------------|-----------|------------------------------|-----------|
| पिपासुरिव संचल— | ३४।३२ | बीभत्साविषया | ९०।५२ |
| पीत्वा गर्जन्यपस्ते | ९९।४५ | भक्ते द्वेषो जडे प्रीतिः | ११२।४३ |
| पुच्छं चेदहमुत्क्षिपामि | १।६ | भङ्क्त्वा भोक्तुं न भुङ्क्ते | ६९।२ |
| पुनः पुनर्भुवि क्षिप्तः | ८८।२८ | भङ्गदं भङ्गुरं भोगं | ८८।३४ |
| पुनरपि मिलनं यदा | ४५।१७ | भल्लैर्भिन्नाः प्रतिनृपतयः | २२।३४ |
| पुत्रमन्दिरकलत्र | ९२।६७ | भवतुरगनिष्ठुर | २३।४४ |
| प्रकटयति वियोगिप्रेय | ६७।४९ | भानोः पादैर्दहनपरुषैः | ६३।२३ |
| प्रतप्तायः पिण्डाविव | २९।२ | भामिन्यो विदधतु | ५२।४० |
| प्रतिनगरमटन्ती | ११।११ | भालस्थलीचन्द्रकलाकलङ्क | ३२।२२ |
| प्रदोषमातङ्गमनङ्गदेवः | ७१।१४ | भित्तौ भित्तौ प्रतिफल— | ७२।२१ |
| प्रबोधभाजः परमस्य | ७९।८ | भिक्षितकमलकुटुम्बा | ६०।६ |
| प्रयान्ति पान्थास्त्वरया | ८२।३० | भुक्तानि यैस्त्व फलानि | ९५।१९ |
| प्रवर्तस्वेति को नाम | ११९।९२ | भूम्नमौलितटीषु | २०।२४ |
| प्रविशति हरिताभः | १०७।४ | भूयादेष सतां हिताय | २।१० |
| प्रशान्ते नूपुरारावे | ५८।३२ | भृङ्गीरवो मङ्गलगीत | ८२।२९ |
| प्रस्थानं रतिमन्दिरात् | २७।६३ | भेकैः कोटरशायिभिः | १०४।७७ |
| प्रस्थानं वलयैः कृतम् | ४७।९ | भेरीभाङ्कृतिभिस्तुरङ्ग | १८।१६ |
| प्रागल्भ्यं प्रथयन्त्यशो | ११४।६४ | भ्रमच्चरणपल्लवक्षण | ६५।४० |
| प्राचीमहीधरशिला | ७७।३९ | भ्रमन्वनान्ते नवमञ्जरीषु | ९३।५ |
| प्राज्ञाः कापि प्रतिज्ञापि | १।५ | भ्रमात्प्रकीर्णं भ्रमरीषु | ६४।३४ |
| प्रातः प्रकाममहिफेन | ८३।१ | भ्रान्त्वा भूवल्यं | ११।१३ |
| प्रातः स्मेरसरोरुहामय | ३१।१ | भ्रूरेखायुगलं भाति | ३३।२७ |
| प्रावृषेण्यस्य मालिन्यं | १०५।७९ | मज्जन्त्या रससिन्धौ | ५८।३० |
| प्रियतममजातयौवन | ७४।१५ | मत्तेभकुम्भपरिणाहि | ५९।३९ |
| प्रियसखि न तथा | ४२।२३ | मदकलकृतान्तकासर | ४२।२१ |
| प्रियो मयेवौऽवचितैः | ५१।२८ | मदनमवलोक्य निष्फल | ९६।२७ |
| प्रेरयन्ति हृदयं न लोचनं | ४६।२ | मदानने चुम्बनचञ्च | ५०।२५ |
| फेत्कारकृत्फेरुभि | ८७।२२ | मद्रोः शङ्कं सप्ततालप्रमाणं | १०९।२२ |
| बन्धुव्रजैः सुभट | ८९।४५ | मधुपानसमुल्लसत्प्रवालं | ५४।३५ |
| बालक्रीडनमिन्दुशेखर | ४।१८ | मध्याह्नमीयुषि रवौ | ६२।१९ |
| बाले तद्योरोजसुवेल | ३७।५५ | मध्याह्ने नूनमापोऽपि | ६२।२० |
| बाह्याः परिग्रहविधिः | ९०।४९ | मध्योऽयं बलिसद्य | ३५।४८ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. | | |
|-----------------------------|-----------|--------------------------|--------|
| मन्दं निधेहि चरणौ | ६८।५७ | यत्पादाः शिरसा | १०६।९० |
| मन्दं मन्दं ध्वनति जलदो | ७७।३६ | यत्त्वन्नेत्रसमानकान्ति | ४५।१३ |
| मन्दानिलाहतविलोल | १०८।१७ | यत्राखण्डलदन्तिदन्त | १०८।१८ |
| मन्येऽरण्ये कुलगिरि | १०।७ | यत्रालसा हरिणशाव | ७१।२० |
| मम प्रियां कैरविणीं करेण | ७१।१६ | यदर्ज्यते परिक्लेशे | ११२।४७ |
| मध्यायाते सपदि शयना | ४७।७ | यदाभूदस्माकं प्रथम— | ५५।१४ |
| मलयपवनचञ्चच्चन्द्र— | ८३।४१ | यदि प्राप्नोति मां तन्वी | १०७।७ |
| मल्लीमाल्यधिया | ५।२७ | यदि समरमपास्य | २३।४३ |
| महता पण्यपुञ्जेन | ९१।५८ | यदीयसौधस्फुरदिन्द्र— | ७२।२३ |
| माकन्द क्षिप मामरन्द | ४४।१७ | यदेतल्लावण्यं | ७।३८ |
| मातङ्गकुम्भसंसर्ग | ३५।४२ | यद्यध्वनीन चिरमध्वनि | ९४।५१ |
| माध्वीकदुर्भिक्ष | ८३।३७ | यद्यपि न भवति हानिः | ९५।१४ |
| मायया कर्षिता ह्येते | ८८।३३ | यद्यपि बहुगुणगम्यं | १०१।५३ |
| मायावद्वकुतूहले | ४।२२ | यद्वैभवाय निजवैरिणि | १००।५१ |
| माला बालाम्बुजदलमयी— | ५४।७ | यवनीनयनाम्बुधोरणी | ४।२३ |
| मिलितमिहिराभासं | २२।३५ | यशःकिरणधोरणी | १५।३३ |
| मिश्रितोरुमिलिताधरं | ५९।४३ | यशोधननिधेर्यदा | ११९।९० |
| मुक्ते काञ्चनकुण्डले | ६५।६७ | यस्य क्षोणिपतेर्विहायसि | ११।१५ |
| मुखं प्रियायाः समुदीक्षमाणः | ७५।२२ | यस्याः कुसुमशय्यापि | ८५।१२ |
| मुखे हारावासिर्नयन— | २६।५९ | यस्यालीढमृणालतन्तु | २।९ |
| मुहुर्व्यजनवीजनैः | ५४।९ | यस्यास्ति वित्तं स नरः | १११।४१ |
| मूर्धः शीतरुचः कलां | ८।४६ | या कामिनी सा यदि मानि— | ७६।३१ |
| मूर्ध्नो मन्मथशासितुः | ६।२२ | याचितेन बहुचातक | ७७।३४ |
| मृगसहितं मृगलाञ्छन | ११६।७२ | यात्रामङ्गलसंविधान | ४७।१० |
| मृगाङ्गमागतं वीक्ष्य | ६७।५० | यस्याः संयमवान्कचोऽपि | ३२।२१ |
| मृत्युः शरीरसोप्सारं | ११२।४९ | याम्या दिशः संनिधि | ८१।२३ |
| मृत्योर्बिम्बेभि किं मूढ | ९१।६१ | यावत्स्वस्थमिदं शरीर- | ८९।४१ |
| मेखलीयति मेदिन्याः | १९।२० | यासां कटाक्षविशिखैः | ३४।३४ |
| मौलिं मानविधिं विना | २७।६५ | युद्धकुद्धभटचिह्न | १०७।९ |
| म्लायद्वक्त्ररुचः | १५।३४ | युष्मद्दोर्दण्डमण्डल्य | २४।४५ |
| यः खोद्वाराय गृह्णाति | ८८।३२ | यूनां धैर्यतृणाङ्कुरं | ३७।५९ |
| यत्करोत्यरतिक्लेशं | ११२।४८ | येनोद्गधात्त्वदरि | १३।२२ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|-----------------------------|-----------|
| मन्दं निधेहि चरणौ | ६८।५७ |
| मन्दं मन्दं ध्वनति जलदो | ७७।३६ |
| मन्दानिलाहतविलोल | १०८।१७ |
| मन्येऽरण्ये कुलगिरि | १०।७ |
| मम प्रियां कैरविणीं करेण | ७१।१६ |
| मध्यायाते सपदि शयना | ४७।७ |
| मलयपवनचञ्चन्द्र— | ८३।४१ |
| मल्लीमाल्यधिया | ५।२७ |
| महता पण्यपुञ्जेन | ९१।५८ |
| माकन्द क्षिप मामरन्द | ४४।१७ |
| मातङ्गकुम्भसंसर्ग | ३५।४२ |
| माध्वीकदुर्भिक्ष | ८३।३७ |
| मायया कर्षिता ह्येते | ८८।३३ |
| मायाबद्धकुतूहले | ४।२२ |
| माला बालाम्बुजदलमयी— | ५४।७ |
| मिलितमिहिराभासं | २२।३५ |
| मिश्रितोरुमिलिताधरं | ५९।४३ |
| मुक्ते काञ्चनकुण्डले | ६५।६७ |
| मुखं प्रियायाः समुदीक्षमाणः | ७५।२२ |
| मुखे हारावासिर्नयन— | २६।५९ |
| मुहुर्नयनवीजनैः | ५४।९ |
| मूर्ध्नः शीतरुचः कलां | ८।४६ |
| मूर्ध्नो मन्मथशासितुः | ६।२२ |
| मृगसहितं मृगलाञ्छन | ११६।७२ |
| मृगाङ्गमागतं वीक्ष्य | ६७।५० |
| मृत्युः शरीरगोसारं | ११२।४९ |
| मृत्योर्बिम्बे किं मूढ | ९१।६१ |
| मेखलीयति मेदिन्याः | १९।२० |
| मौलि मानविधिं विना | २७।६५ |
| म्लायद्वक्त्ररुचः | १५।३४ |
| यः खोद्वाराय गृह्णाति | ८८।३२ |
| यत्करोत्यरतिक्लेशं | ११२।४८ |
| यत्पादाः शिरसा | १०६।९० |
| यत्त्वन्नेत्रसमानकान्ति | ४५।१३ |
| यत्राखण्डलदन्तिदन्त | १०८।१८ |
| यत्रालसा हरिणशाव | ७१।२० |
| यदर्ज्यते परिक्लेशे | ११२।४७ |
| यदाभूदस्माकं प्रथम— | ५५।१४ |
| यदि प्राप्नोति मां तन्वी | १०७।७ |
| यदि समरमपास्य | २३।४३ |
| यदीयसौधस्फुरदिन्द्र— | ७२।२३ |
| यदेतल्लावण्यं | ७।३८ |
| यद्यध्वनीन चिरमध्वनि | ९४।५१ |
| यद्यपि न भवति हानिः | ९५।१४ |
| यद्यपि बहुगुणगम्यं | १०१।५३ |
| यद्वैभवाय निजवैरिणि | १००।५१ |
| यवनीनयनाम्बुधोरणी | ४।२३ |
| यशःकिरणधोरणी | १५।३३ |
| यशोधननिधेर्यदा | ११९।९० |
| यस्य क्षोणिपतेर्विहायसि | ११।१५ |
| यस्याः कुसुमशय्यापि | ८५।१२ |
| यस्यालीढमृगालतन्तु | २।९ |
| यस्यास्ति वित्तं स नरः | १११।४१ |
| या कामिनी सा यदि मानि— | ७६।३१ |
| याचितेन बहुचातक | ७७।३४ |
| यात्रामङ्गलसंविधान | ४७।१० |
| यस्याः संयमवान्कचोऽपि | ३२।२१ |
| याम्या दिशः संनिधि | ८१।२३ |
| यावत्स्वस्थमिदं शरीर- | ८९।४१ |
| यासां कटाक्षविशिखैः | ३४।३४ |
| युद्धकुद्धभटचिह्न | १०७।९ |
| युष्मद्दोर्दण्डमण्डल्य | २४।४५ |
| यूनां धैर्यतृणाङ्कुरं | ३७।५९ |
| येनोद्गधात्त्वदरि | १३।२२ |

| पु. श्लो. | पु. श्लो. |
|---------------------------|-------------------------------|
| रक्तं नक्तंचरौघः पिवति | लोकाणां मानपात्रं ११०।२८ |
| रघुतिलकनृपाल— | वक्त्रं ननु कुन्तलादिव ११३।५७ |
| रणत्कङ्कणानां झणनूपुराणां | वक्षोजखण्डितसुरोज ५३।३ |
| रतिरभसनितान्तश्रान्त | वक्षोजद्वयशीलनेऽपि ७२।४ |
| रत्नैरापूरितस्यापि | वक्त्राम्भोरुहपञ्चकं १।१ |
| रभसादभिसर्तुमुद्यता | वतंसनीलोत्पलषट्पद ३४।३५ |
| रम्भोरुदेहपरिरम्भ | वध्वा वयो मां त्रिवली ३७।५३ |
| राकातारापतिरुचि | वनी मुनीनां तटिनी ४५।१४ |
| राजन्नचण्डरुचिमण्डल | वन्देऽहं कालिकामष्ट ७।३७ |
| राजन्दिषस्ते भय | वपुषि तव तनोति रत्न ५३।३ |
| राजन्नचण्डरुचिमण्डल | वयं बाल्ये बालास्तरुण ५३।३७ |
| राजानः शशिभास्करान् | वर्षासु जाता नवयौवनश्री ७६।२६ |
| राजेति क्षणदाकरं | वलत्कुचं व्याकुलकेशपाशं ५८।३७ |
| रामे ब्राह्मणवेषधारिणि | वल्मीकाप्रनिमग्नमूर्ति ११५।६९ |
| रेखा काचन कज्जलस्य | वहद्बहलमारुतप्रसर ६३।२२ |
| रे पद्मिनीपत्र भव— | व.....हरकिसलयो ७३।८ |
| रेरे रसाल तरुसाल | वाणी कण्ठाभरण १०।९ |
| रे सारङ्गा वनवसतयः | वातं स्थावरयन् १९।१९ |
| रोहणाचलशैलेषु | वादानाशानुयुक्तो नगर ११०।२९ |
| लक्ष्मि क्षमस्व वचनीय | वान्ति कङ्कारुभगा ७९।६ |
| लक्ष्मीर्यादोनिधेर्यादो | वापीतोयं तटरुहवनं ६८।१ |
| लक्ष्मीविभ्रमकुञ्ज | वासो विधूय स्तनयोः ६०।४ |
| लङ्काधामनि वीरभावु | वाहव्यूहखुरक्षतां १८।१४ |
| लज्जा प्रौढमृगीदृशामिव | विकीर्णहरिचन्दन ८७।२३ |
| लज्जावशान्नमितमन्थर | विप्रेक्षः सर्वविघ्नान् ६।३० |
| लतां पुष्पवतीं दृष्ट्वा | विज्ञास्तु विज्ञाप्यमिदं १।४ |
| लतामूले लीनो | विद्वद्गोष्ठीगरिष्ठ १०।८ |
| लवङ्गलतिकाभङ्ग | विधे पिधेहि शीतांशु १०७।१३ |
| लसन्मल्लीमाल्यं | विधौ पुरस्ये ९६।२२ |
| लिखति न गणयति | विना सायं कोऽयं ३३।२५ |
| लीलावसूंसरोरुह | विनिर्गतं मानदमालम् ८७।२४ |
| लुलाये गोमायौ | वियोगार्तिनलिन्याः किं ६२।१७ |

| पु. श्लो. | पु. श्लो. |
|---------------------------|-------------------------------|
| रक्तं नक्तंचरौघः पिवति | लोकाणां मानपात्रं ११०।२८ |
| रघुतिलकनृपाल— | वक्त्रं ननु कुन्तलादिव ११३।५७ |
| रणत्कङ्कणानां झणनूपुराणां | वक्षोजखण्डितसुरोज ५३।३ |
| रतिरभसनितान्तश्रान्त | वक्षोजद्वयशीलनेऽपि ७२।४ |
| रत्नैरापूरितस्यापि | वक्त्राभोरुहपञ्चकं १।१ |
| रभसादभिसर्तुमुद्यता | वतंसनीलोत्पलषट्पद ३४।३५ |
| रम्भोरुदेहपरिरम्भ | वध्वा वयो मां त्रिवली ३७।५३ |
| राकातारापतिरुचि | वनी मुनीनां तटिनी ४५।१४ |
| राजन्नचण्डरुचिमण्डल | वन्देऽहं कालिकामष्ट ७।३७ |
| राजन्दिषस्ते भय | वपुषि तव तनोति रत्न ५३।३ |
| राजन्नचण्डरुचिमण्डल | वयं बाल्ये बालास्तरुण ५३।३७ |
| राजानः शशिभास्करान् | वर्षासु जाता नवयौवनश्री ७६।२६ |
| राजेति क्षणदाकरं | वलत्कुचं व्याकुलकेशपाशं ५८।३७ |
| रामे ब्राह्मणवेषधारिणि | वल्मीकाप्रनिमग्नमूर्ति ११५।६९ |
| रेखा काचन कज्जलस्य | वहद्बहलमारुतप्रसर ६३।२२ |
| रे पद्मिनीपत्र भव— | व.....हरकिसलयो ७३।८ |
| रेरे रसाल तरुसाल | वाणी कण्ठाभरण १०।९ |
| रे सारङ्गा वनवसतयः | वातं स्थावरयन् १९।१९ |
| रोहणाचलशैलेषु | वादानाशानुयुक्तो नगर ११०।२९ |
| लक्ष्मि क्षमस्व वचनीय | वान्ति कङ्कारुभगा ७९।६ |
| लक्ष्मीर्यादोनिधेर्यादो | वापीतोयं तटरुहवनं ६८।१ |
| लक्ष्मीविभ्रमकुञ्ज | वासो विधूय स्तनयोः ६०।४ |
| लङ्काधामनि वीरभावु | वाहव्यूहखुरक्षतां १८।१४ |
| लज्जा प्रौढमृगीदृशामिव | विकीर्णहरिचन्दन ८७।२३ |
| लज्जावशान्नमितमन्थर | विप्रेक्षः सर्वविघ्नान् ६।३० |
| लतां पुष्पवतीं दृष्ट्वा | विज्ञास्तु विज्ञाप्यमिदं १।४ |
| लतामूले लीनो | विद्वद्गोष्ठीगरिष्ठ १०।८ |
| लवङ्गलतिकाभङ्ग | विधे पिधेहि शीतांशु १०७।१३ |
| लसन्मल्लीमाल्यं | विधौ पुरस्ये ९६।२२ |
| लिखति न गणयति | विना सायं कोऽयं ३३।२५ |
| लीलावसूंसरोरुह | विनिर्गतं मानदमालम् ८७।२४ |
| लुलाये गोमायौ | वियोगार्तिनलिन्याः किं ६२।१७ |

| पृ. श्लो. | | पृ. श्लो. | |
|--------------------------|---------|-------------------------------|---------|
| विरमति कथनं विना | ५३। ६ | शङ्गे शिरीषमालां | ६। ३३ |
| विरम नाथ विमुञ्च | ४९। १९ | शैल्यं नाम गुणस्तवैव | ११०। ५२ |
| विरलविरलीभूताः | ६१। १० | शोषं गते सरसि | १०४। ७८ |
| विलोक्य कमलाकान्त | ११६। ७१ | श्यामाकतन्दुलविलेप | ११६। ७३ |
| विवेकविधुरं किल | ९३। २ | श्रीखण्डद्रवदीर्घिका | ४२। २० |
| विहायसि विहारिणी | ५८। ३३ | श्रीखण्डानिलनिर्वृतो | ४३। ५ |
| वीणावंशाश्रया तुम्बी | १११। ३७ | श्वश्रूः कुब्ध्यतु निर्दिश | ५१। २९ |
| वीरक्षीरसमुद्रसानु | ११। १२ | संग्रामाङ्गणमागतेन | ८६। १९ |
| वीर त्वत्खड्गधारा | २०। २५ | संतप्तायसि संस्थितस्य | १११। ३८ |
| वृथा धूलीधारा | १०५। ८१ | संत्यक्तजल्पे परिवृत्तवक्त्रे | ७४। ११ |
| वृन्देन तारावलि तन्दु | ६२। १५ | संनिगृह्य चिकुरं तमो | ६१। १३ |
| वेळत्पक्षति राजहंस | १८। १५ | संन्यासमाप काञ्ची | ५७। २७ |
| व्यजनं व्यजनं जलं जलं | ४१। ९ | संभावितो न तरुणीकर— | ९३। ७ |
| व्यज्यमानकलङ्कस्य | १०५। ८४ | संमुखं मुखविधुं न चुम्ब | ७४। १६ |
| व्यतीतकल्पे शिशिरैक | ८१। २८ | संमूर्च्छितं संयुगसंग्र— | २३। ३८ |
| व्याकोशकोकनदशोक | ३९। २ | संशोच्य शोकविदसौ | ९०। ५० |
| व्याप्रीव तिष्ठति जरा | ८९। ४० | संसारतापदहनैः | ८८। ३६ |
| व्यासादीन्कविपुङ्गवान् | ११५। ६६ | सुगुणैः सेवितोपान्तो | १०१। ५४ |
| शङ्कुव्याकीर्णरङ्कुद्रुत | ११७। ८० | सतां समालोकयतां | ३५। ४७ |
| शङ्के पङ्केरुहदल | ४१। १४ | सति द्राक्षाफले क्षीरे | ११२। ५० |
| शत्रुनीरजदृशो | १६। २ | सतां समालोकयतां | ३५। ४७ |
| शब्दवद्भिरलंकारैः | ३५। ४३ | स दृश्यमानवदन | ३०। ६ |
| शर्वरीषु किल शैशिरीषु | ८१। २२ | स प्राप्तानपि भोगान् | ११३। ५१ |
| शशी हर्तुं लोभात् | ३५। ३८ | समरविहरदस्म | २१। ३१ |
| शान्ते मन्मथसंगरे | ५९। ४० | समर्प्य हृदि दारुणां | ४८। १४ |
| शिरसि शिरसिजं दृशो | ५१। ३३ | समस्तापास्तांशौ | ७१। १८ |
| शिरो व्याधुन्वत्याः | ७। ४० | समस्तावनीनाथमौले | २५। ५५ |
| शिव शिव सहस्रैव | ४३। २५ | समुत्कीर्णे तन्व्या | ४३। ४ |
| शीतलादिव संत्रस्तं | ७५। २४ | समुन्नमदुरःस्थल | ३०। ७ |
| शीलानि ते चन्दन | ८५। १० | सर्वं छुण्ठितमुद्गटैः | १७। ७ |
| शून्ये सद्गनि योजिता | ७४। १२ | सर्वस्य जन्तोर्भवति प्रभोदो | १०६। १ |
| शृगालशशशार्दूल | ९७। ३४ | स वेदो निर्वेदमृति | ९२। ६३ |

| वि. श्लो. | पृ. | श्लो. | पृ. |
|------------------------|---------|------------------------------|---------|
| विरमति कथनं विना | ५३। ६ | शङ्के शिरीषमालां | ६। ३३ |
| विरम नाथ विमुञ्च | ४९। १९ | शैल्यं नाम गुणस्तवैव | ११०। ५२ |
| विरलविरलीभूताः | ६१। १० | शोषं गते सरसि | १०४। ७८ |
| विलोक्य कमलाकान्त | ११६। ७१ | श्यामाकतन्दुलविलेप | ११६। ७३ |
| विवेकविधुरं किल | ९३। २ | श्रीखण्डद्रवदीर्घिका | ४२। २० |
| विहायसि विहारिणी | ५८। ३३ | श्रीखण्डानिलनिर्वृतो | ४३। ५ |
| वीणावंशाश्रया तुम्बी | १११। ३७ | श्वश्रूः कुध्यतु निर्दिश | ५१। २९ |
| वीरक्षीरसमुद्रसातु | १११। १२ | संग्रामाङ्गणमागतेन | ८६। १९ |
| वीर त्वत्खड्गधारा | २०। २५ | संतप्तायसि संस्थितस्य | १११। ३८ |
| वृथा धूलीधारा | १०५। ८१ | संत्यक्जल्पे परिवृत्तवक्त्रे | ७४। ११ |
| वृन्देन तारावलि तन्दु | ६२। १५ | संनिगृह्य चिकुरं तमो | ६१। १३ |
| वेष्टपक्षति राजहंस | १८। १५ | संन्यासमाप काञ्ची | ५७। २७ |
| व्यजनं व्यजनं जलं जलं | ४१। ९ | संभावितो न तरुणीकर— | ९३। ७ |
| व्यज्यमानकलङ्कस्य | १०५। ८४ | संमुखं मुखविधुं न चुम्ब | ७४। १६ |
| व्यतीतकल्पे शिशिरैक | ८१। २८ | संमूर्च्छितं संयुगसंग्र— | २३। ३८ |
| व्याक्रोशकोकनदशोक | ३९। २ | संशोच्य शोकविदसौ | ९०। ५० |
| व्याप्रीव तिष्ठति जरा | ८९। ४० | संसारतापदहनैः | ८८। ३६ |
| व्यासादीन्कविपुङ्गवान् | ११५। ६६ | सुगुणैः सेवितोपान्तो | १०१। ५४ |
| शङ्कुव्याकीर्णरङ्कुडुत | ११७। ८० | सतां समालोकयतां | ३५। ४७ |
| शङ्के पङ्केरुहदल | ४१। १४ | सति द्राक्षाफले क्षीरे | ११२। ५० |
| शत्रुनीरजदृशो | १६। २ | सतां समालोकयतां | ३५। ४७ |
| शब्दवद्विरलंकारैः | ३५। ४३ | स दृश्यमानवदन | ३०। ६ |
| शर्वरीषु किल शैशिरीषु | ८१। २२ | स प्राप्तानपि भोगान् | ११३। ५१ |
| शशी हर्तुं लोभात् | ३५। ३८ | समरविहरदस्म | २१। ३१ |
| शान्ते मन्मथसंगरे | ५९। ४० | समर्प्य हृदि दारुणां | ४८। १४ |
| शिरसि शिरसिजं दृशो | ५१। ३३ | समस्तापास्तांशौ | ७१। १८ |
| शिरो व्याधुन्वत्याः | ७। ४० | समस्तावनीनाथमौले | २५। ५५ |
| शिव शिव सहसैव | ४३। २५ | समुत्कीर्णं तन्व्या | ४३। ४ |
| शीतलादिव संत्रस्तं | ७५। २४ | समुन्नमदुरःस्थल | ३०। ७ |
| शीलानि ते चन्दन | ८५। १० | सर्वं लुण्ठितमुद्गटैः | १७। ७ |
| शून्ये सद्मनि योजिता | ७४। १२ | सर्वस्य जन्तोर्भवति प्रमोदो | १०६। १ |
| शृगालशशाशार्दूल | ९७। ३४ | स वेदो निर्वेदमृति | ९२। ६३ |

| पृ. श्लो. | पृ. श्लो. |
|----------------------------|--------------------------------|
| सहचरि परिपन्थिनं | ७७।३७ स्फूर्जद्भुजाविंशतिकं |
| सहस्रनेत्रे प्रियगात्र | ५५।१६ स्मरकल्पद्रुमो बाले |
| साधारणतस्त्वुज्या | ९३।४ खच्छाम्बराच्छादित— |
| सानन्दकन्दुकविहारविधौ | ६५।३९ खतो ददाति नो नीरं |
| सानन्दमेष मकरन्द | ९७।३२ खदेहघर्मोदकपिच्छले |
| सामगायनपूतं मे | ८४।३ खप्ने न क्षितिपावतंस |
| सारङ्गाक्ष्याः कुचकलश | ३६।३९ खयं खगुणनिस्तारा |
| सिंहः शिशुरपि निपतति | १०२।६१ खस्यस्तु विद्रुमवनाय |
| सिन्धोः सुधांशुशकलं | ६९।३ खापे प्रियानन |
| सीतामपास्य त्रपया | ८५।८ खामोदवासितसमग्र |
| सुखशय्या ताम्बूलं | ५२।४ हंसी वेत्ति पराग— |
| सुदीर्घरेखाशालिन्या | ३५।४५ हन्तालि संतापनिवृत्तये |
| सुधामयोऽपि क्षयरोग | ३४।३७ हरक्रोधज्वालावलि |
| सुभाषितरसावलि | ११९।९३ हरिपत्राम्बकां फुल्ल |
| सुभाषितस्याध्ययने | ९८।३७ हसन्ती वा हसन्ती वा |
| सुमेरुशिखरप्रान्त | १०७।११ हस्त इव भूतिमलिनो |
| स्खलदंशुकमव्यवस्थता— | ४६।१९ हस्तस्वेदक्षपित इव |
| स्खलितं करकङ्कणं निशायां | ६।३४ हस्ताम्भोजालिमाला |
| स्तन्यं जातो न जग्राह | १०२।५९ हस्ती वन्यः स्फटिक— |
| स्तब्धेऽर्धाङ्गे चरण | ५।२६ हारस्तुष्यति कङ्कणं |
| स्थगयति नयनाद्यं | ४०।३ हारो नारोपितः कण्ठे |
| स्थलकमलतरूणां | ८२।३१ हा हन्त मानससरः |
| स्थानं नास्ति क्षणं नास्ति | ५२।३५ हीनहत्या दधात्येव |
| स्थूलप्रावरणोऽतिवृत्त | ९१।६० हृदयमाश्रयसे यदि |
| स्नातं वारिषु निर्मलेषु | ८।४५ हृदि लग्नेन बाणेन |
| स्नाताः प्रावृषि | २८।७३ हे दारिद्र्य नमस्तुभ्यं |
| स्निग्धालिवृद्धसौहार्दां | १०७।८ हेमन्तहिमनिस्पदं |
| स्पृष्टाकृष्टासिपिष्टोत्कर | २४।४८ हे हेमन्त स्मरिष्यामि |
| स्फुटतरमटवीनां | २५।५६ ह्रिया सखीनां हरिरम्बुजा |
| स्फुरत्तुषारांशुमरीचि | ७२।२२ |

| | | | |
|----------------------------|--------|--------------------------|--------|
| सहचरि परिपन्थिनं | ७७।३७ | स्फूर्जद्भुजाविंशतिकं | ८६।२० |
| सहस्रनेत्रे प्रियगात्र | ५५।१६ | स्मरकल्पद्रुमो बाले | ३३।२६ |
| साधारणतरुबुद्ध्या | ९३।४ | खच्छाम्बराच्छादित— | ७८।१ |
| सानन्दकन्दुकविहारविधौ | ६५।३९ | स्वतो ददाति नो नीरं | १०५।८२ |
| सानन्दमेष मकरन्द | ९७।३२ | स्वदेहधर्मोदकपिच्छले | ८२।३६ |
| सामगायनपूतं मे | ८४।३ | खप्ते न क्षितिपावतंस | २७।६४ |
| सारङ्गाक्ष्याः कुचकलश | ३६।३९ | खयं खगुणनिस्तारा | ११०।३३ |
| सिंहः शिशुरपि निपतति | १०२।६१ | स्वस्त्यस्तु विद्रुमवनाय | ९९।४७ |
| सिन्धोः सुधांशुशकलं | ६९।३ | स्वापे प्रियानन | ५०।२४ |
| सीतामपास्य त्रपया | ८५।८ | स्वामोदवासितसमग्र | ९७।३० |
| मुखशय्या ताम्बूलं | ५२।४ | हंसी वेत्ति पराग— | ९९।४२ |
| सुदीर्घरेखाशालिन्या | ३५।४५ | हन्तालि संतापनिवृत्तये | ४०।१० |
| सुधामयोऽपि क्षयरोग | ३४।३७ | हरक्रोधज्वालावलि | ३८।५८ |
| सुभाषितरसावलि | ११९।९३ | हरिपत्राम्बकां फुल्ल | ७।३६ |
| सुभाषितस्याध्ययने | ९८।३७ | हसन्ती वा हसन्ती वा | ८०।१८ |
| सुमेरुशिखरप्रान्त | १०७।११ | हस्त इव भूतिमलिनी | ११४।५८ |
| स्खलदंशुकमव्यवस्थता— | ४६।१९ | हस्तस्वेदलपित इव | ५६।२९ |
| स्खलितं करकङ्कणं निशायां | ६।३४ | हस्ताम्भोजालिमाला | २०।२७ |
| स्तन्यं जातो न जग्राह | १०२।५९ | हस्ती वन्यः स्फटिक— | २८।७४ |
| स्तब्धेऽर्धाङ्गे चरण | ५।२६ | हारखुव्यति कङ्कणं | ५७।२६ |
| स्थगयति नयनाद्यं | ४०।३ | हारो नारोपितः कण्ठे | ४३।१ |
| स्थलकमलतरुणां | ८२।३१ | हा हन्त मानससरः | ९८।४१ |
| स्थानं नास्ति क्षणं नास्ति | ५२।३५ | हीनहत्या दधात्येव | १०८।१६ |
| स्थूलप्रावरणोऽतिवृत्त | ९१।६० | हृदयमाश्रयसे यदि | ४२।२४ |
| स्नातं वारिषु निर्मलेषु | ८।४५ | हृदि लग्नेन बाणेन | ११८।८७ |
| स्नाताः प्रावृषि | २८।७३ | हे दारिद्र्य नमस्तुभ्यं | ११३।५४ |
| स्निग्धालिवृद्धसौहार्दां | १०७।८ | हेमन्तहिमनिस्पदं | ७९।१० |
| स्पृष्टाकृष्टासिपिष्ठोत्कर | २४।४८ | हे हेमन्त स्मरिष्यामि | ८०।१७ |
| स्फुटतरमटवीनां | २५।५६ | हिया सखीनां हरिरम्बुजा | ६३।२६ |
| स्फुरत्तुषारांशुमरीचि | ७२।२२ | | |

काव्यमाला ।

आङ्गोलकरश्रीमल्लक्ष्मणभट्टविरचिता

पद्यरचना ।

वक्राम्भोरुहपञ्चकं विकचयन्नेत्रत्रयं दर्शयँ-

लालाटं दहनं स्फुटं प्रकटयंस्तोयं कचैर्मोचयन् ।

बालं चन्द्रमुदञ्चयन्विरचयन्द्राक्ताण्डवाडम्बरा-

नाश्रर्याणि निदर्शयञ्जगदयं पायान्नटो धूर्जटिः ॥ १ ॥

कवित्वप्रोद्गुम्फश्रवणकृतज्ञम्पव्यतिकरं

चिरं येषां स्वान्तं समजनि नितान्तं रसवशम् ।

अमीषां पीयूषापचितसुरयोषाधरपुटो-

लसन्माधुर्ये वा समुदयति किं वा रतिरपि ॥ २ ॥

तर्कज्ञानां तर्कशास्त्रार्कसंपत्संपर्केण क्लिश्यमानान्तराणाम् ।

विश्रान्त्यर्थं संगता कल्पशाखिच्छायेवेयं निर्मितिल्क्ष्मणस्य ॥ ३ ॥

विज्ञास्तु विज्ञाप्यमिदं पुराणपद्येषु किं चर्वितचर्वणेन ।

यद्यस्ति कौतूहलमीक्षणीया क्षणं कृतिः संप्रति लक्ष्मणीया ॥ ४ ॥

प्राज्ञाः कापि प्रतिज्ञापि तथा वै करवै यथा ।

बुधा अपि सुधास्वादं लभन्ते विबुधा इव ॥ ५ ॥

(ममैव लक्ष्मणस्य)

अथावतारेषु मत्स्यः ।

पुच्छं चेदहमुत्क्षिपाम्यनवधिस्तुच्छीभवेदम्बुधिः

क्रीडां चेतकलये मनागपि जले पीडा परं यादसाम् ।

निःस्यन्दो भृशमत्र निर्भरभरव्रज्जाण्डभाण्डक्षय-

क्षोभात्कुञ्चितवेष एष भगवान्प्रीणातु मीनाकृतिः ॥ ६ ॥

काव्यमाला ।

आङ्गोलकरश्रीमल्लक्ष्मणभट्टविरचिता

पद्यरचना ।

वक्राम्भोरुहपञ्चकं विकचयन्नेत्रत्रयं दर्शयँ-

लालाटं दहनं स्फुटं प्रकटयंस्तोयं कचैर्मोचयन् ।

बालं चन्द्रमुदञ्चयन्विरचयन्द्राक्ताण्डवाडम्बरा-

नाश्चर्याणि निदर्शयञ्जगदयं पायान्नटो धूर्जटिः ॥ १ ॥

कवित्वप्रोद्गुम्फश्रवणकृतज्ञम्पव्यतिकरं

चिरं येषां स्वान्तं समजनि नितान्तं रसवशम् ।

अमीषां पीयूषापचितसुरयोषाधरपुटो-

लसन्माधुर्ये वा समुदयति किं वा रतिरपि ॥ २ ॥

तर्कज्ञानां तर्कशास्त्रार्कसंपत्संपर्केण क्लिश्यमानान्तराणाम् ।

विश्रान्त्यर्थं संगता कल्पशाखिच्छायेवेयं निर्मितिल्क्ष्मणस्य ॥ ३ ॥

विज्ञास्तु विज्ञाप्यमिदं पुराणपद्येषु किं चर्वितचर्वणेन ।

यद्यस्ति कौतूहलमीक्षणीया क्षणं कृतिः संप्रति लक्ष्मणीया ॥ ४ ॥

प्राज्ञाः कापि प्रतिज्ञापि तथा वै करवै यथा ।

बुधा अपि सुधास्वादं लभन्ते विबुधा इव ॥ ५ ॥

(ममैव लक्ष्मणस्य)

अथावतारेषु मत्स्यः ।

पुच्छं चेदहमुत्क्षिपाम्यनवधिस्तुच्छीभवेदम्बुधिः

क्रीडां चेत्कलये मनागपि जले पीडा परं यादसाम् ।

निःस्यन्दो भृशमत्र निर्भरभरब्रह्माण्डभाण्डक्षय-

क्षोभात्कुञ्चितवेष एष भगवान्प्रीणातु मीनाकृतिः ॥ ६ ॥

अथ कूर्मः—

पायान्मायाजरठकमठाधीश्वरो ब्रह्मनित्या-

धिष्ठानोच्चैर्मठ इव महान्पत्तने पन्नगानाम् ।

धत्ते धन्या यदुपरि धरा शेषशीर्षोषितासौ

कन्दोन्मीलन्नवकमलिनीकाण्डपत्रस्य लक्ष्मीम् ॥ ७ ॥

दृग्भ्यां यस्य विलोकनाय जगतो द्रागीषदुत्तोलित-

ग्रीवाग्नोपरि विस्फुरद्गहगणे छत्रायितायां भुवि ।

हा धिग्भूः किमभूदभूत्तदितरत्किं वेति पर्याकुलो

हन्यादेष हठादधानि कमठाधीशः कठोराणि मे ॥ ८ ॥

अथ वराहः—

यस्यालीढमृणालतन्तुवदियं दन्तोपरि स्वर्धुनी

दृक्कोणोषितदूषिके इव नभस्येतौ विवस्वद्विधू ।

किंच स्निग्धसटाग्रलग्नलिनीपत्राभमेतन्नभः

सोऽयं कोलकलेवरः कलयतां कल्याणमव्याहतम् ॥ ९ ॥

(रामचन्द्रस्यैते)

भूयादेष सतां हिताय भगवान्कोलावतारो हरिः

सिन्धोः क्लेशमपास्य यस्य दशनप्रान्ते नटन्त्या भुवः ।

तारा हारति वारिदस्तिलकति स्वर्वाहिनी माल्यति

क्रीडादर्पणति क्षपापतिरहर्देवश्च ताटङ्कति ॥ १० ॥

(भानुकरस्य)

अथ नृसिंहः—

आह्लादयत्वेष खरैर्नखाग्रैर्दैतेयवक्षःखनिमुत्खनन्वः ।

प्रह्लादहृद्यं हृदये द्वितीयमन्वेष्टुमिच्छन्निव सूनुरत्नम् ॥ ११ ॥

(लक्ष्मणस्य)

पायान्मायामृगेन्द्रो जगदखिलमसौ यत्तनूदञ्चदर्वि-

ज्ज्वालाजालावलीढं बत भुवि सकलं व्याकुलं किं न भूयात् ।

अथ कूर्मः—

पायान्मायाजरठकमठाधीश्वरो ब्रह्मनित्या-

धिष्ठानोच्चैर्मठ इव महान्पत्तने पन्नगानाम् ।

धत्ते धन्या यदुपरि धरा शेषशीर्षोषितासौ

कन्दोन्मीलन्नवकमलिनीकाण्डपत्रस्य लक्ष्मीम् ॥ ७ ॥

दृग्भ्यां यस्य विलोकनाय जगतो द्रागीषदुत्तोलित-

ग्रीवाग्नोपरि विस्फुरद्ब्रह्मणे छत्रायितायां भुवि ।

हा धिग्भूः किमभूदभूत्तदितरत्किं वेति पर्याकुलो

हन्यादेष हठादघानि कमठाधीशः कठोराणि मे ॥ ८ ॥

अथ वराहः—

यस्यालीढमृणालतन्तुवदियं दन्तोपरि स्वर्धुनी

दृक्कोणोषितदूषिके इव नभस्येतौ विवस्वद्विधू ।

किंच स्निग्धसटाग्रलग्नलिनीपत्राभमेतन्नभः

सोऽयं कोलकलेवरः कलयतां कल्याणमव्याहृतम् ॥ ९ ॥

(रामचन्द्रस्यैते)

भूयादेष सतां हिताय भगवान्कोलावतारो हरिः

सिन्धोः क्लेशमपास्य यस्य दशनप्रान्ते नटन्त्या भुवः ।

तारा हारति वारिदस्तिलकति स्वर्वाहिनी माल्यति

क्रीडादर्पणति क्षपापतिरहर्देवश्च ताटङ्कति ॥ १० ॥

(भानुकरस्य)

अथ नृसिंहः—

आह्लादयत्वेष खरैर्नखाग्रैर्दैतेयवक्षःखनिमुत्खनन्वः ।

प्रह्लादहृद्यं हृदये द्वितीयमन्वेष्टुमिच्छन्निव सूनुरत्नम् ॥ ११ ॥

(लक्ष्मणस्य)

पायान्मायामृगेन्द्रो जगदखिलमसौ यत्तनूदञ्चदार्चि-

ज्ज्वालाजालावलीढं बत भुवि सकलं व्याकुलं किं न भूयात् ।

न स्याच्चेदाशु तस्याधिकविकटसटाकोटिभिः पाद्य(द्य)माना-
दिन्दोरानन्दकन्दात्तदुपरि तुहिनासारसंदोहवृष्टिः ॥ १२ ॥
(रामचन्द्रस्य)

अथ वामनः—

किं क्रमिष्यति किलैष वामनो यावदित्थमहसन्त दानवाः ।
तावदस्य न ममौ नभस्थले लङ्घितार्कशशिमण्डलः क्रमः ॥ १३ ॥
(माघस्य)

अथ भार्गवो रामः—

रामे ब्राह्मणवेषधारिणि धनुर्धृत्वा कराम्भोरुहे
संजन्याङ्गुलिकास्रमारचयितुं कैलासमाकर्षति ।
तात त्राहि सुत प्रयाहि दयिते निर्याहि सौधाद्वहि-
वारं वारमयं पुरान्तकपुरक्षोभः शिवायास्तु वः ॥ १४ ॥
(भानुकरस्य)

नाशिष्यः किमभूद्भवः किमभवन्नापुत्रिणी रेणुंका
नासीद्विश्वमकार्मुकं किमिति सा प्रीणालु रामप्रभा ।
विप्राणां प्रतिमन्दिरं मणिगणोन्मिश्राणि दण्डाहते-
नाब्धीशः समया यमोऽपि महिषेणाम्भांसि नोद्वाहितः ॥ १५ ॥
द्वारे कल्पतरुनृहेषु सुरभींश्चिन्तामणीनङ्गदे
पीयूषं सरसीषु वक्रकुहरे विद्याश्चतस्रो दश ।
यः किं कर्तुमयं तपस्यति भृगोर्वशावतंसो मुनिः
पायाद्वोऽवनिदेवपालनपरो भूदेवभूषामणिः ॥ १६ ॥
(महानाटकात्)

अथ दाशरथी रामः—

अधिपञ्चवटीकुटीरवर्ति स्फुटितेन्दीवरसुन्दरोरुमूर्ति ।
अपि लक्ष्मणलोचनैकलक्ष्यं भजत ब्रह्म सरोरुहायताक्षम् ॥ १७ ॥
(लक्ष्मणस्य)

न स्याच्चेदाशु तस्याधिकविकटसटाकोटिभिः पाद्य(द्य)माना-
दिन्दोरानन्दकन्दात्तदुपरि तुहिनासारसंदोहवृष्टिः ॥ १२ ॥
(रामचन्द्रस्य)

अथ वामनः—

किं क्रमिष्यति किलैष वामनो यावदित्थमहसन्त दानवाः ।
तावदस्य न ममौ नभस्थले लङ्घितार्कशशिमण्डलः क्रमः ॥ १३ ॥
(माघस्य)

अथ भार्गवो रामः—

रामे ब्राह्मणवेषधारिणि धनुर्धृत्वा कराम्भोरुहे
संजन्याङ्गुलिकास्रमारचयितुं कैलासमाकर्षति ।
तात त्राहि सुत प्रयाहि दयिते निर्याहि सौधाद्वहि-
वारं वारमयं पुरान्तकपुरक्षोभः शिवायास्तु वः ॥ १४ ॥
(भानुकरस्य)

नाशिष्यः किमभूद्भवः किमभवन्नापुत्रिणी रेणुंका
नासीद्विश्वमकार्मुकं किमिति सा प्रीणातु रामप्रभा ।
विप्राणां प्रतिमन्दिरं मणिगणोन्मिश्राणि दण्डाहते-
नाब्धीशः समया यमोऽपि महिषेणाम्भांसि नोद्वाहितः ॥ १५ ॥
द्वारे कल्पतरून्गृहेषु सुरभींश्चिन्तामणीनङ्गदे
पीयूषं सरसीषु वक्रकुहरे विद्याश्चतस्रो दश ।
यः किं कर्तुमयं तपस्यति भृगोर्वैशावतंसो मुनिः
पायाद्वोऽवनिदेवपालनपरो भूदेवभूषामणिः ॥ १६ ॥
(महानाटकात्)

अथ दाशरथी रामः—

अधिपञ्चवटीकुटीरवर्ति स्फुटितेन्दीवरसुन्दरोरुमूर्ति ।
अपि लक्ष्मणलोचनैकलक्ष्यं भजत ब्रह्म सरोरुहायताक्षम् ॥ १७ ॥
(लक्ष्मणस्य)

बालक्रीडनमिन्दुशेखरधनुर्भङ्गावधि प्रहृता-

नेकैतद्वनसेवनावधि कृपा सुग्रीवसख्यावधि ।

आज्ञा वारिधिबन्धनावधि यशो लङ्केशनाशावधि

श्रीरामस्य पुनातु लोकवशता जानक्युपेक्षावधि ॥ १८ ॥

(कस्यापि)

नियमितपाथोनिधिना प्रत्यावृत्तेन रामचन्द्रेण ।

अथ लङ्घिताः पदाभ्यां सरितो भयवामनीभूताः ॥ १९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ हली रामः—

निष्पात्याशु हिमांशुमण्डलमधः पीत्वा तदन्तःसुधां

कृत्वैनं चषकं हसन्निति हलापानाय कौतूहलात् ।

भो देव द्विजराजि मादृशि सुरास्पशोऽपि न श्रेयसे

मा मुञ्चेति तदर्थितो हलधरः पायादपायाज्जगत् ॥ २० ॥

क्रीडन्नद्यानवद्यामहमुपरि गदां भ्रामयित्वा जगत्यां

निष्पात्याकाशमुर्वीमुडुशशिदिनकृद्भारगुर्वी विधास्ये ।

यद्वा मद्भाल्यलीलोत्तरलतरहलाघातनिर्भिन्नभूमी-

निर्यत्पातालगङ्गोज्ज्वलबहलजलैः स्त्रावयिष्यामि विश्वम् ॥ २१ ॥

(रामचन्द्रस्यैतौ)

अथ बुद्धः—

मायाबुद्धकुतूहले भगवति व्यालोलयत्यागमा-

नोङ्कारेण भयातुरेण चलितं बिन्दुं विहाय क्वचित् ।

ओकारः करपञ्जरं पुरभिदो भेजे त्रिशूलच्छला-

द्भिन्दुश्चक्रमिषेण कैटभरिपोस्तस्थौ कराम्भोरुहे ॥ २२ ॥

अथ कल्की—

यवनीनयनाम्बुधोरणीभिर्धरणीनामपनीय तापवह्नीन् ।

सुकृतद्रुमसेकमाचरन्तं धृतकल्कं प्रणमामि निर्विकल्पम् ॥ २३ ॥

बालक्रीडनमिन्दुशेखरधनुर्भङ्गावधि प्रहृता-

नेकैतद्वनसेवनावधि कृपा सुग्रीवसख्यावधि ।

आज्ञा वारिधिबन्धनावधि यशो लङ्केशनाशावधि

श्रीरामस्य पुनातु लोकवशता जानक्युपेक्षावधि ॥ १८ ॥

(कस्यापि)

नियमितपाथोनिधिना प्रत्यावृत्तेन रामचन्द्रेण ।

अथ लङ्घिताः पदाभ्यां सरितो भयवामनीभूताः ॥ १९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ हली रामः—

निष्पात्याशु हिमांशुमण्डलमधः पीत्वा तदन्तःसुधां

कृत्वैनं चषकं हसन्निति हलापानाय कौतूहलात् ।

भो देव द्विजराजि मादृशि सुरास्पशोऽपि न श्रेयसे

मा मुञ्चेति तदर्थितो हलधरः पायादपायाज्जगत् ॥ २० ॥

क्रीडन्नद्यानवद्यामहमुपरि गदां भ्रामयित्वा जगत्यां

निष्पात्याकाशमुर्वीमुडुशशिदिनकृद्भारगुर्वी विधास्ये ।

यद्वा मद्भाल्यलीलोत्तरलतरहलाघातनिर्भिन्नभूमी-

निर्यत्पातालगङ्गोज्ज्वलबहलजलैः स्त्रावयिष्यामि विश्वम् ॥ २१ ॥

(रामचन्द्रस्यैतौ)

अथ बुद्धः—

मायाबुद्धकुतूहले भगवति व्यालोलयत्यागमा-

नोङ्कारेण भयातुरेण चलितं बिन्दुं विहाय क्वचित् ।

ओकारः करपञ्जरं पुरभिदो भेजे त्रिशूलच्छला-

द्भिन्दुश्चक्रमिषेण कैटभरिपोस्तस्थौ कराम्भोरुहे ॥ २२ ॥

अथ कल्की—

यवनीनयनान्मुधोरणीभिर्धरणीनामपनीय तापवह्नीन् ।

सुकृतद्रुमसेकमाचरन्तं धृतकल्कं प्रणमामि निर्विकल्पम् ॥ २३ ॥

अथ कृष्णः—

कमलाकुचकनकाचलजलधरमाभीरसुन्दरीमदनम् ।
अधिततशेषफणावलिकमलवनीभृङ्गमच्युतं वन्दे ॥ २४ ॥

अथ कृष्णस्य वाम्यम्—

कृत्वा सिंहकलेवरं विरचयन्खेदातुरान्कुञ्जरा-
न्वाराहीं तनुमेत्य लोलदलकान्विद्रावयन्गोपकान् ।
धृत्वा मत्स्यवपुस्तडागकुहरे कलोलमान्दोलय-
न्कृष्णः शैशवविग्रहं विरचयँल्लेभे भ्रमन्विभ्रमान् ॥ २५ ॥
(भानुकरस्यैते)

अथेश्वरः—

स्तब्धेऽर्धाङ्गे चरणपतनं नैव वामस्य पाणे-
वैमत्येनाञ्जलिविरचनं नापि वाचां प्रपञ्चः ।
अंशे जिह्वाकृषजडतया मानवत्यां मृडान्यां
कोऽन्यः कल्पोऽह्यनुनयविधायवर्धनारीश्वरेऽभूत् ॥ २६ ॥
(लक्ष्मणस्य)

मल्लीमाल्यधिया सुधाकरकलां कण्ठश्रियं कज्जल-
भ्रान्त्या भालविलोचनानलशिखां सिन्दूरपूराशया ।
कैलासे प्रतिबिम्बितात्स्ववपुषो गृह्णन्हसन्त्या मुहुः
पार्वत्याः प्रतिकर्मकर्मणि चिरं मुग्धो हरः पातु वः ॥ २७ ॥
(गणपतेः)

ओंकारो यस्य कन्दः सलिलमुपनिषन्ध्यायजालं मृणालं
ब्रह्माण्डं यस्य काण्डं प्रसरति परितो यस्य यागः परागः ।
भृङ्गध्वानः.....(?) विजनसुरधुनीतीरवासोऽधिवासो
यस्यानन्दो मरन्दः पुरहरचरणाभोरुहं तद्भ्रजामः ॥ २८ ॥
(भानुकरस्य)

अथ कृष्णः—

कमलाकुचकनकाचलजलधरमाभीरसुन्दरीमदनम् ।
अधिततशेषफणावलिकमलवनीभृङ्गमच्युतं वन्दे ॥ २४ ॥

अथ कृष्णस्य वाम्यम्—

कृत्वा सिंहकलेवरं विरचयन्खेदातुरान्कुञ्जरा-
न्वारहीं तनुमेत्य लोलदलकान्विद्रावयन्गोपकान् ।
धृत्वा मत्स्यवपुस्तडागकुहरे कलोलमान्दोलय-
न्कृष्णः शैशवविग्रहं विरचयँल्लेभे भ्रमन्विभ्रमान् ॥ २५ ॥
(भानुकरस्यैते)

अथेश्वरः—

स्तब्धेऽर्धाङ्गे चरणपतनं नैव वामस्य पाणे-
वैमत्येनाञ्जलिविरचनं नापि वाचां प्रपञ्चः ।
अंशे जिह्वाकृषजडतया मानवत्यां मृडान्यां
कोऽन्यः कल्पोऽह्यनुनयविधायार्धनारीश्वरेऽभूत् ॥ २६ ॥
(लक्ष्मणस्य)

मलीमाल्यधिया सुधाकरकलां कण्ठश्रियं कज्जल-
भ्रान्त्या भालविलोचनानलशिखां सिन्दूरपूराशया ।
कैलासे प्रतिबिम्बितात्स्ववपुषो गृह्णन्हसन्त्या मुहुः
पार्वत्याः प्रतिकर्मकर्मणि चिरं मुग्धो हरः पातु वः ॥ २७ ॥
(गणपतेः)

ओंकारो यस्य कन्दः सलिलमुपनिषन्ध्यायजालं मृणालं
ब्रह्माण्डं यस्य काण्डं प्रसरति परितो यस्य यागः परागः ।
भृङ्गध्वानः.....(?) विजनसुरधुनीतीरवासोऽधिवासो
यस्यानन्दो मरन्दः पुरहरचरणाम्भोरुहं तद्भ्रजामः ॥ २८ ॥
(भानुकरस्य)

अथ शम्भोस्ताण्डवम्—

चञ्चल्या दहति क्षतक्षितिचलच्चक्षुःश्रवःसंहति-
 त्रस्यद्विक्पतिदिग्गजमुतिधराधःशेषनश्यद्रति ।
 दोर्दण्डाहतिसंततिव्रुटदुरुब्रह्माण्डभाण्डस्थिति-
 त्रस्तस्वर्पतिसंभ्रमन्नति भवस्यास्तां मुदे ताण्डवम् ॥ २९ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ गणेशः—

विघ्नेशः सर्वविघ्नान्परिहरतु स यत्कर्णतालादुदञ्च-
 द्रायुव्याधूतगण्डस्थलयुगलगलद्भूरिसिन्दूरपूरैः ।
 आरुण्याद्वैतभावं गतवति जगति कापि नो भाति भानु-
 नैवासौ शीतभानुः कचिदपि नितरां भासते वा कृशानुः ॥ ३० ॥
 (लक्ष्मणस्य)

कोडं तातस्य गच्छन्विशदबिसधिया शावकं शीतभानो-
 राकर्षन्भालवैश्वानरनिशितशिखाशोचिषा तप्यमानः ।
 गङ्गाम्भः पातुमिच्छुर्भुजगपतिफणाफूत्कृतैर्दूयमानो
 मात्रा संबोध्य नीतो दुरितमपनयेद्भालवेषो गणेशः ॥ ३१ ॥

अथ कार्तिकेयः—

मूर्ध्नो मन्मथशासितुर्विगलिते क्षीराशयास्वादिते
 वक्त्रे बालतुषारभासि परितः कण्ठोदरे तिष्ठति ।
 शेषं वीक्ष्य विलोलशोणनयनं मित्राधरौष्ठश्रियं
 व्यातन्वन्करतालिकां विहसितं बालो विशाखो दधौ ॥ ३२ ॥
 शृङ्गे शिरीषमालां कण्ठे घण्टां पदेषु मञ्जीरम् ।
 विन्यस्य प्रतिभवनं भर्गवृषं भ्रामयामास ॥ ३३ ॥

(भानुमिश्रस्यैतौ)

अथ भवानी—

स्खलितं करकङ्कणं निशायामथ शर्वेण भुजङ्गनिर्मितं तत् ।
 उषसि प्रविलोक्य भीतवत्या भगवत्याः करधूननं धिनोतु ॥ ३४ ॥

अथ शम्भोस्ताण्डवम्—

चञ्चल्या दहति क्षतक्षितिचलचक्षुःश्रवःसंहति-
 त्रस्यद्विक्पतिदिग्गजमुतिधराधःशेषनश्यद्रति ।
 दोर्दण्डाहतिसंततिव्रुटदुरुब्रह्माण्डभाण्डस्थिति-
 त्रस्तस्वर्पतिसंभ्रमन्नति भवस्यास्तां मुदे ताण्डवम् ॥ २९ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ गणेशः—

विघ्नेशः सर्वविघ्नान्परिहरतु स यत्कर्णतालादुदञ्च-
 द्रायुव्याधूतगण्डस्थलयुगलगलद्भूरिसिन्दूरपूरैः ।
 आरुण्याद्वैतभावं गतवति जगति कापि नो भाति भानु-
 नैवासौ शीतभानुः कचिदपि नितरां भासते वा कृशानुः ॥ ३० ॥
 (लक्ष्मणस्य)

कोडं तातस्य गच्छन्विशदबिसधिया शावकं शीतभानो-
 राकर्षन्भालवैश्वानरनिशितशिखाशोचिषा तप्यमानः ।
 गङ्गाम्भः पातुमिच्छुर्भुजगपतिफणाफूत्कृतैर्दूयमानो
 मात्रा संबोध्य नीतो दुरितमपनयेद्दालवेषो गणेशः ॥ ३१ ॥

अथ कार्तिकेयः—

मूर्ध्नो मन्मथशासितुर्विगलिते क्षीराशयास्वादिते
 वक्त्रे बालतुषारभासि परितः कण्ठोदरे तिष्ठति ।
 शेषं वीक्ष्य विलोलशोणनयनं भिन्नाधरौष्ठश्रियं
 व्यातन्वन्करतालिकां विहसितं बालो विशाखो दधौ ॥ ३२ ॥
 शृङ्गे शिरीषमालां कण्ठे घण्टां पदेषु मञ्जीरम् ।
 विन्यस्य प्रतिभवनं भर्गवृषं आमयामास ॥ ३३ ॥

(भानुमिश्रस्यैतौ)

अथ भवानी—

स्वलितं करकङ्कणं निशायामथ शर्वेण भुजङ्गनिर्मितं तत् ।
 उषसि प्रविलोक्य भीतवत्या भगवत्याः करधूननं धिनोतु ॥ ३४ ॥

दरिद्रजनरञ्जनस्तव भवानि दृक्खञ्जनः

स चेदभिमुखो भवेत्स न भवेत्किमेवं जनः ।

पयोधरतटीभरालसनमद्वधूटीलस-

न्मणिद्युतिविदीपिताम्बरतटीमहीमण्डलः ॥ ३५ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

हरिपत्राम्बकां फुल्लनलास्यां कुन्तिगामिनीम् ।

केतुवाराचितां दाक्षीं घनकूचयुजं भजे ॥ ३६ ॥

वन्देऽहं कालिकामष्टभुजव्यूहवृतां शिवाम् ।

विध्यादिसुरसन्दोहैर्वन्दितां सुषमाम्बकाम् ॥ ३७ ॥

(एतौ भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

यदेतल्लावण्यं भगवति भवप्रेमलहरि

त्वदीयाङ्घ्रेस्मात्पथि सह रजोभिर्विगलति ।

विनिर्मातुं शातक्रतुवपुरपङ्केरुमुखी-

स्तदुञ्छव्यापारैरपहरति मन्ये कमलभूः ॥ ३८ ॥

(भानुकरस्य)

अथ लक्ष्मीः—

आख्याते हसितं पितामह इति त्रस्तं कपालीति च

व्यावृत्तं गुरुरित्ययं दहन इत्याविष्कृता भीरुता ।

पौलोमीपतिरित्यसूयितमथ व्रीडाविनम्रं श्रिया

पायाद्वः पुरुषोत्तमोऽयमिति यो न्यस्तः सपुष्पाञ्जलिः ॥ ३९ ॥

(क्षेमेन्द्रस्य)

शिरो व्याधुन्वत्यास्तव जननि सिन्दूरकणिका

निकामं दृक्पद्मे पतति किमतः पश्यसि न माम् ।

रतारम्भे किंतु प्रचलमणिकेयूरमुखरं

हरन्वक्षोवासः स खलु कृतकृत्यो मधुरिपुः ॥ ४० ॥

(भानुकरस्य)

हरिद्रजनरञ्जनस्तव भवानि दृक्खञ्जनः

स चेदभिमुखो भवेत्स न भवेत्किमेवं जनः ।

पयोधरतटीभरालसनमद्वधूटीलस-

न्मणिद्युतिविदीपिताम्बरतटीमहीमण्डलः ॥ ३५ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

हरिपत्राम्बकां फुल्लनलास्यां कुन्तिगामिनीम् ।

केतुवाराचितां दाक्षीं घनकूचयुजं भजे ॥ ३६ ॥

वन्देऽहं कालिकामष्टभुजव्यूहवृतां शिवाम् ।

विध्यादिसुरसन्दोहैर्वन्दितां सुषमाम्बकाम् ॥ ३७ ॥

(एतौ भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

यदेतल्लावण्यं भगवति भवप्रेमलहरि

त्वदीयाङ्घ्रेस्मात्पथि सह रजोभिर्विगलति ।

विनिर्मातुं शातक्रतुवपुरपङ्केरुमुखी-

स्तदुच्छव्यापारैरपहरति मन्ये कमलभूः ॥ ३८ ॥

(भानुकरस्य)

अथ लक्ष्मीः—

आख्याते हसितं पितामह इति त्रस्तं कपालीति च

व्यावृत्तं गुरुरित्ययं दहन इत्याविष्कृता भीरुता ।

पौलोमीपतिरित्यसूयितमथ व्रीडाविनम्रं श्रिया

पायाद्वः पुरुषोत्तमोऽयमिति यो न्यस्तः सपुष्पाञ्जलिः ॥ ३९ ॥

(क्षेमेन्द्रस्य)

शिरो व्याधुन्वत्यास्तव जननि सिन्दूरकणिका

निकामं दृक्पद्मे पतति किमतः पश्यसि न माम् ।

रतारम्भे किंतु प्रचलमणिकेयूरमुखरं

हरन्वक्षोवासः स खलु कृतकृत्यो मधुरिपुः ॥ ४० ॥

(भानुकरस्य)

काव्यमाला ।

पद्मायास्तनहेमसद्गनि मणिश्रेणीसमाकर्षके
किञ्चित्कम्बुकसंधिसंनिधिमिते शौरेः करे तस्करे ।
सद्यो जागृहि जागृहीति वलयध्वानैर्ध्रुवं जाग्रता
कामेन प्रतिबोधिताः प्रहरिका रोमाङ्कुराः पान्तु वः ॥ ४१ ॥
(कस्यापि)

अथ गङ्गा—

इयं चिद्रूपापि प्रकटजलरूपा भगवती
यदीयाम्भोबिन्दुर्वितरति च शम्भोरपि पदम् ।
पुनाना धुन्वाना निखिलमपि नानाविधमघं
जगत्कृत्स्नं पायादनुदिनमपायात्सुरधुनी ॥ ४२ ॥
(लक्ष्मणस्य)

जडता जडतामम्ब पङ्कः पङ्कं व्यपोहतु ।
भ्रान्तिस्तव मम भ्रान्तिमधोगतिरधोगतिम् ॥ ४३ ॥
(कस्यापि)

अथ मणिकर्णी—

अमुक्तां भूषयन्तु स्वां तनुं संसारसिन्धुगैः ।
मणिकर्णीं ताम्रपर्णीं मुक्तिमुक्ताफलैर्जनाः ॥ ४४ ॥
(लक्ष्मणस्य)

स्नातं वारिषु निर्मलेषु जटिलो जातः पुनः कुन्तलः
काये क्षालितमेव पङ्कपटलं कण्ठे पुनः कालिमा ।
उद्दामाः खलु वीचयः परिचितः क्रान्तः करो भस्मना
मातः श्रीमणिकर्णि कर्णपरुषं जल्पामि कोऽयं क्रमः ॥ ४५ ॥
मूर्ध्निः शीतरुचः कलां विसधिया व्यालोलमालोकते
कण्ठे नीलमपाकरोति सलिलैर्जम्बालजालभ्रमान् ।
भूयः प्रोञ्छति कुन्तलस्खलदयां धाराधिया स्वर्धुनी-
मन्योन्यं मणिकर्णि कौतुकमिदं निर्मज्य निर्गच्छता ॥ ४६ ॥

पद्मायास्तनहेमसद्मनि मणिश्रेणीसमाकर्षके
 किञ्चित्कम्बुकसंधिसंनिधिमिते शौरेः करे तस्करे ।
 सद्यो जागृहि जागृहीति वलयध्वानैर्ध्रुवं जाग्रता
 कामेन प्रतिबोधिताः प्रहरिका रोमाङ्कुराः पान्तु वः ॥ ४१ ॥
 (कस्यापि)

अथ गङ्गा—

इयं चिद्रूपापि प्रकटजलरूपा भगवती
 यदीयाम्भोबिन्दुर्वितरति च शम्भोरपि पदम् ।
 पुनाना धुन्वाना निखिलमपि नानाविधमघं
 जगत्कृत्स्नं पायादनुदिनमपायात्सुरधुनी ॥ ४२ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

जडता जडतामम्ब पङ्कः पङ्कं व्यपोहतु ।
 भ्रान्तिस्तव मम भ्रान्तिमधोगतिरधोगतिम् ॥ ४३ ॥
 (कस्यापि)

अथ मणिकर्णी—

अमुक्तां भूषयन्तु स्वां तनुं संसारसिन्धुगैः ।
 मणिकर्णी ताम्रपर्णी मुक्तिमुक्ताफलैर्जनाः ॥ ४४ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

स्नातं वारिषु निर्मलेषु जटिलो जातः पुनः कुन्तलः
 काये क्षालितमेव पङ्कपटलं कण्ठे पुनः कालिमा ।
 उद्दामाः खलु वीचयः परिचितः क्रान्तः करो भस्मना
 मातः श्रीमणिकर्णि कर्णपरुषं जल्पामि कोऽयं क्रमः ॥ ४५ ॥
 मूर्ध्नः शीतरुचः कलां विसधिया व्यालोलमालोक्ते
 कण्ठे नीलमपाकरोति सलिलैर्जम्बालजालभ्रमान् ।
 भूयः प्रोञ्छति कुन्तलस्खलदयां धाराधिया स्वर्धुनी-
 मन्योन्यं मणिकर्णि कौतुकमिदं निर्मज्य निर्गच्छता ॥ ४६ ॥

अथ यमुना—

ऊरीकर्तुं तुहिनकिरणप्रीतिधारामुदारां

दूरीकर्तुं दिनकरकरक्लेशबाधामगाधाम् ।

यस्याः पुण्ये पयसि विशति स्नातुकामा त्रियामा

प्रायस्तस्यास्तिमिरततिभिः श्यामलं नीरमस्याः ॥ ४७ ॥

(भानुकरस्यैते)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां प्रथमो व्यापारः ॥ १ ॥

द्वितीयो व्यापारः ।

अथानवद्यपद्येषु प्रतिपाद्यस्य कीर्तये ।

तत्पद्यकर्तृकीर्त्यै च कीर्त्यन्ते तानि कौतुकात् ॥ १ ॥

अथ कीर्तिः—

आभात्येतद्विचन्द्रं वियदपि निखिलं हन्ति(दन्ति)नस्तु त्रिदन्ता

गङ्गापूरश्चतुर्धा प्रविलसति लसत्पञ्चदन्तः करीन्द्रः ।

षड्वक्त्रः (सप्तवक्त्रः) परिणमति तथा षड्गुणाः सप्तसंख्याः

शङ्के त्वत्कीर्तिमूर्त्या नवमिव जगदालक्ष्यते क्षोणिपाल ॥ २ ॥

दुग्धाम्भोधेः परिचुलुकनं संपिधातुं सुधाया-

स्नासः सुत्रामगजमहसामातपत्रस्य मित्रम् ।

भङ्गो गङ्गाचपलपयसां तन्द्रिका चन्द्रिकाया-

स्त्वत्कीर्तिः सा जयति जगति क्षमापतीनां रतीश ॥ ३ ॥

पाद्यं दुग्धाम्बुधिरपि सुधानर्घ्यमर्घं तथैता-

स्ताराहारास्तनुमलयजं चन्दनं चन्द्रिकैव ।

इन्दोर्बिम्बं रुचिरमुकुरः स्वर्गतेति श्रुताया-

स्तत्त्वत्कीर्तिरुपहृतमिदं स्वःपथि स्वर्वधूभिः ॥ ४ ॥

दुग्धाम्भोधावगाधे विहरति सुधया क्षालयत्यङ्घ्रियुग्मं

कृत्स्नां ज्योत्स्नां दुकूलं कलयति मलयोद्भूतचर्चा तनोति ।

अथ यमुना—

ऊरीकर्तुं तुहिनकिरणप्रीतिधारामुदारां

दूरीकर्तुं दिनकरकरक्लेशबाधामगाधाम् ।

यस्याः पुण्ये पयसि विशति स्नातुकामा त्रियामा

प्रायस्तस्यास्तिमिरततिभिः श्यामलं नीरमस्याः ॥ ४७ ॥

(भानुकरस्यैते)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां प्रथमो व्यापारः ॥ १ ॥

द्वितीयो व्यापारः ।

अथानवद्यपद्येषु प्रतिपाद्यस्य कीर्तये ।

तत्पद्यकर्तृकीर्त्यै च कीर्त्यन्ते तानि कौतुकात् ॥ १ ॥

अथ कीर्तिः—

आभात्येतद्विचन्द्रं वियदपि निखिलं हन्ति(दन्ति)नस्तु त्रिदन्ता

गङ्गापूरश्चतुर्धा प्रविलसति लसत्पञ्चदन्तः करीन्द्रः ।

षड्वक्त्रः (सप्तवक्त्रः) परिणमति तथा षड्गुणाः सप्तसंख्याः

शङ्के त्वत्कीर्तिमूर्त्या नवमिव जगदालक्ष्यते क्षोणिपाल ॥ २ ॥

दुग्धाम्भोधेः परिचुलुकनं संपिधातुं सुधाया-

स्नासः सुत्रामगजमहसामातपत्रस्य मित्रम् ।

भङ्गो गङ्गाचपलपयसां तन्द्रिका चन्द्रिकाया-

स्त्वत्कीर्तिः सा जयति जगति क्षमापतीनां रतीश ॥ ३ ॥

पाद्यं दुग्धाम्बुधिरपि सुधानर्घ्यमर्घं तथैता-

स्ताराहारास्तनुमलयजं चन्दनं चन्द्रिकैव ।

इन्दोर्बिम्बं रुचिरमुकुरः स्वर्गतेति श्रुताया-

स्तत्त्वत्कीर्तिरुपहृतमिदं स्वःपथि स्वर्वधूभिः ॥ ४ ॥

दुग्धाम्भोधावगाधे विहरति सुधया क्षालयत्यङ्घ्रियुग्मं

कृत्स्नां ज्योत्स्नां दुकूलं कलयति मलयोद्भूतचर्चां तनोति ।

स्वच्छन्दं नृत्यति द्रागुरगपतिशिरस्येव निद्राति चन्द्रे
 त्वत्कीर्तिः स्वामिनीव त्रिजगति विहरत्येवमुर्वीश गुर्वी ॥ ५ ॥
 देव त्वद्यशसा सितांशुमहसा गीर्वाणवृन्देऽखिलं
 शंभोर्भावमवापिते तु सहसा चेतकौतुकं तच्छृणु ।
 साकृताः सकुतूहलाः सचकिताः सौत्कण्ठिताः साञ्छुताः
 साशङ्काश्च मुहुर्मुहुर्मधुरिपौ लक्ष्म्या दृशः पातिताः ॥ ६ ॥
 (एते लक्ष्मणस्य)

मन्येऽरण्ये कुलगिरिगुहागह्वरे पर्यटन्ती
 विद्धा दर्भैः किमपि चरणे वासुदेवस्य कीर्तिः ।
 इन्दौ कुन्दे कुमुदमुकुले चामरे चन्दने वा
 दत्त्वा (दत्त्वा) मृदुनि पुरतः पादमेषा प्रयाति ॥ ७ ॥
 (गणपतेः)

विद्वद्गोष्ठीगरिष्ठ प्रतिभट्टदमन श्रीनिजाम प्रतीमः
 कृत्वा त्वत्कीर्तिगाथां वहति गणविधिं पद्मयोनिः कठिन्या ।
 वक्त्रा लेखा गुरूणाममृतकरकलाकम्बुमल्लीमरालाः
 शुद्धा लेखा लघूनां विसभुजगनभोनिम्नगा दन्तिदन्ताः ॥ ८ ॥
 (भानुकरस्य)

वाणीकण्ठाभरण भवतो रुद्रचन्द्र क्षितीन्दोः
 कुन्दस्फीते यशसि नभसो बिम्बमालोकयन्त्यः ।
 त्वद्वैरिण्यो विरहविकला वक्षसि न्यस्तकामा
 पा(वा)रं वा(रं) भवकमलिनीपत्रबुद्ध्या मृशन्ति ॥ ९ ॥
 (रामचन्द्रस्य)

राजेति क्षणदाकरं विजयते दानोरुलक्ष्मीरिति
 स्वर्णागं बहुवाहिनीपतिरिति क्षीरोदमास्कन्दति ।
 दुर्गाधीश इति स्फुटं पुररिपुं विद्वेष्टि भोगोद्भट-
 श्रीरित्यर्दति वासुकिं स्वयशसा दिल्लीन्द्रचूडामणिः ॥ १० ॥
 (धरणीधरस्य)

स्वच्छन्दं नृत्यति द्रागुरगपतिशिरस्येव निद्राति चन्द्रे
 त्वत्कीर्तिः स्वामिनीव त्रिजगति विहरत्येवमुर्वीश गुर्वी ॥ ५ ॥
 देव त्वद्यशसा सितांशुमहसा गीर्वाणवृन्देऽखिलं
 शंभोर्भावमवापिते तु सहसा चेतकौतुकं तच्छृणु ।
 साकूताः सकुतूहलाः सचकिताः सौत्कण्ठिताः साञ्छुताः
 साशङ्काश्च मुहुर्मुहुर्मधुरिपौ लक्ष्म्या दृशः पातिताः ॥ ६ ॥
 (एते लक्ष्मणस्य)

मन्येऽरण्ये कुलगिरिशुहागहरे पर्यटन्ती
 विद्धा दम्भैः किमपि चरणे वासुदेवस्य कीर्तिः ।
 इन्दौ कुन्दे कुमुदमुकुले चामरे चन्दने वा
 दत्त्वा (दत्त्वा) मृदुनि पुरतः पादमेषा प्रयाति ॥ ७ ॥
 (गणपतेः)

विद्वद्गोष्ठीगरिष्ठ प्रतिभटदमन श्रीनिजाम प्रतीमः
 कृत्वा त्वत्कीर्तिगाथां वहति गणविधिं पद्मयोनिः कठिन्या ।
 वक्त्रा लेखा गुरुणाममृतकरकलाकम्बुमल्लीमरालाः
 शुद्धा लेखा लघूनां विसभुजगनभोनिम्नगा दन्तिदन्ताः ॥ ८ ॥
 (भानुकरस्य)

वाणीकण्ठाभरण भवतो रुद्रचन्द्र क्षितीन्दोः
 कुन्दस्फीते यशसि नभसो बिम्बमालोकयन्त्यः ।
 त्वद्वैरिण्यो विरहविकला वक्षसि न्यस्तकामा
 पा(वा)रं वा(रं) भवकमलिनीपत्रबुद्ध्या मृशन्ति ॥ ९ ॥
 (रामचन्द्रस्य)

राजेति क्षणदाकरं विजयते दानोरुलक्ष्मीरिति
 स्वर्नागं बहुवाहिनीपतिरिति क्षीरोदमास्कन्दति ।
 दुर्गाधीश इति स्फुटं पुररिपुं विद्वेष्टि भोगोद्भट-
 श्रीरित्यर्दति वासुकिं स्वयशसा दिल्लीन्द्रचूडामणिः ॥ १० ॥
 (धरणीधरस्य)

प्रतिनगरमटन्ती प्रत्यगारं व्रजन्ती
प्रतिनरपतिवक्षःकण्ठपीठे लुठन्ती ।

गिरिगरिमनितम्बाच्छादने सावधाना

तदपि च तव कीर्तिर्निर्मलैवेति चित्रम् ॥ ११ ॥

(कस्यापि)

वीरक्षीरसमुद्रसान्द्रलहरीलावण्यलक्ष्मीमुष-

स्त्वत्कीर्तिस्तुलनां कलङ्कमलिनो धत्तां कथं चन्द्रमाः ।

स्यादेवं त्वदरातिसौधशिखरप्रोद्भूतदूर्वाङ्कुर-

आसासक्तमतिः पतेद्यदि पुनस्तस्याङ्कशायी मृगः ॥ १२ ॥

आन्त्वा भूवल्यं दशास्यदमन त्वत्कीर्तिहंसी दिवं

याता ब्रह्ममरालसंगमवशाद्या तत्र गुर्विण्यभूत् ।

पश्य स्वर्गतरङ्गिणीपरिसरे कुन्दावदातं तया

मुक्तं भाति विशालमण्डकमिदं शीतद्युतेर्मण्डलम् ॥ १३ ॥

(महानाटकात्)

तुङ्गब्रह्माण्डसिंहासनमिदमुदयचित्रमध्यास्य नित्यं

न्यञ्चद्विव्यस्रवन्तीसितचमरचयं लालयन्दिग्वधूभिः ।

राकाचन्द्रातपत्रं दिनकरमुकुरं ग्राहयँल्लोकपाला-

न्निर्जित्यैन्द्रं करीन्द्रं तव जयति यशश्चक्रवर्तीबधेल ॥ १४ ॥

(अकबरीयकालिदासस्य)

यस्य क्षोणिपतेर्विहायसि यशोराशौ चमत्कुर्वति

द्राक्पर्पूरजोभ्रमेण वणिजो वीथीमुपस्कुर्वते ।

चञ्चुं चञ्चलयन्ति चन्द्रकिरणभ्रान्त्या चकोराः पयो-

बुद्ध्या व्योम्नि नियोजयन्ति कलशीमानीय वामभ्रुवः ॥ १५ ॥

(कस्यापि)

राजन्नचण्डरुचिमण्डलपुण्डरीका

दिग्दन्तिवक्त्रविचरन्नवदन्तिनका ।

प्रतिनगरमटन्ती प्रत्यगारं व्रजन्ती
प्रतिनरपतिवक्षःकण्ठपीठे लुठन्ती ।

गिरिगिरिमनितम्बाच्छादने सावधाना

तदपि च तव कीर्तिर्निर्मलैवेति चित्रम् ॥ ११ ॥

(कस्यापि)

वीरक्षीरसमुद्रसान्द्रलहरीलावण्यलक्ष्मीमुष-

स्त्वत्कीर्तिस्तुलनां कलङ्कमलिनो धत्तां कथं चन्द्रमाः ।

स्यादेवं त्वदरातिसौधशिखरप्रोद्भूतदूर्वाङ्कुर-

आसासक्तमतिः पतेद्यदि पुनस्तस्याङ्कशायी मृगः ॥ १२ ॥

आन्त्वा भूवल्यं दशास्यदमन त्वत्कीर्तिहंसी दिवं

याता ब्रह्ममरालसंगमवशाद्या तत्र गुर्विण्यभूत् ।

पश्य स्वर्गतरङ्गिणीपरिसरे कुन्दावदातं तया

मुक्तं भाति विशालमण्डकमिदं शीतद्युतेर्मण्डलम् ॥ १३ ॥

(महानाटकात्)

तुङ्गब्रह्माण्डसिंहासनमिदमुदयचित्रमध्यास्य नित्यं

न्यञ्चद्विव्यस्रवन्तीसितचमरचयं लालयन्दिग्वधूभिः ।

राकाचन्द्रातपत्रं दिनकरमुकुरं ग्राहयँल्लोकपाला-

न्निर्जित्यैन्द्रं करीन्द्रं तव जयति यशश्चक्रवर्तीबघेल ॥ १४ ॥

(अकबरीयकालिदासस्य)

यस्य क्षोणिपतेर्विहायसि यशोराशौ चमत्कुर्वति

द्राक्पर्पूररजोभ्रमेण वणिजो वीथीमुपस्कुर्वते ।

चञ्चुं चञ्चलयन्ति चन्द्रकिरणभ्रान्त्या चकोराः पयो-

बुद्ध्या व्योम्नि नियोजयन्ति कलशीमानीय वामभ्रुवः ॥ १५ ॥

(कस्यापि)

राजन्नचण्डरुचिमण्डलपुण्डरीका

दिग्दन्तिवक्त्रविचरन्नवदन्तिनका ।

उद्बुद्ध.....नीरधिवुद्धदाली
 कल्लोलिनीव तव वल्गति मल्लकीर्तिः ॥ १६ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ द्विषत्कीर्तिः—

रघुतिलकनृपाल त्वद्विषत्क्षोणिपाल-
 प्रविलसदपकीर्तिश्यामले विश्वजाले ।
 भगवति भजमाने कृष्णतां शूलपाणौ
 किमुदधिगिरिपुत्र्यौ चक्रतुस्तन्न विद्मः ॥ १७ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ शौर्यौदार्यप्रधाना कीर्तिः—

लभं रागावृताङ्गचा सुदृढमिह ययैवासियष्टचारिकण्ठे
 मातङ्गानामपीहोपरि परपुरुषैर्यो पतन्ती च दृष्टा ।
 तत्सक्तोऽयं न किञ्चिद्गणयति विदितं तेऽस्तु तेनास्मि दत्ता
 भृत्येभ्यः श्रीनियोगाद्गदितुमिति गतेवाम्बुधिं यस्य कीर्तिः ॥ १८ ॥
 कस्यापि । (हर्षदत्तस्य)

अथ प्रतापः—

अये नृपतिमण्डलीमुकुटरत्न युष्मद्भुजा-
 महोष्मतिसंजुषा बत भवत्प्रतापार्चिषा ।
 द्विषामतिभृशं यशःप्रकटपारदोध्मापना-
 दुदुस्फुटत तारकाः कपटतो विहायस्तटे ॥ १९ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

क्षोणीपर्यटनव्रते क्षितिपते युष्मत्प्रतापो भ्रम-
 त्सौराष्ट्रे मगधे कलिङ्गसविधे वङ्गे यदङ्गे गतः ।
 तत्पापं परिहर्तुमम्बरमणिव्याजेन सप्तार्णवे
 स्नात्वा विष्णुपदं स्पृशन्नपि भृशं भूयः परिभ्राम्यति ॥ २० ॥
 (कस्यापि)

उद्बुद्ध.....नीरधिबुद्बुदाली
कल्लोलिनीव तव वल्गति मल्लकीर्तिः ॥ १६ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ द्विषत्कीर्तिः—

रघुतिलकनृपाल त्वद्विषत्क्षोणिपाल-
प्रविलसदपकीर्तिश्यामले विश्वजाले ।
भगवति भजमाने कृष्णतां शूलपाणौ
किमुदधिगिरिपुत्र्यौ चक्रतुस्तन्न विद्मः ॥ १७ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ शौर्यौदार्यप्रधाना कीर्तिः—

लभं रागावृताङ्गचा सुदृढमिह ययैवासियष्टचारिकण्ठे
मातङ्गानामपीहोपरि परपुरुषैर्या पतन्ती च दृष्टा ।
तत्सक्तोऽयं न किञ्चिद्गणयति विदितं तेऽस्तु तेनास्मि दत्ता
भृत्येभ्यः श्रीनियोगाद्गदितुमिति गतेवाम्बुधि यस्य कीर्तिः ॥ १८ ॥
कस्यापि । (हर्षदत्तस्य)

अथ प्रतापः—

अये नृपतिमण्डलीमुकुटरत्न युष्मद्भुजा-
महोष्मततिसंजुषा बत भवत्प्रतापार्चिषा ।
द्विषामतिभृशं यशःप्रकटपारदोध्मापना-
दुदुस्फुटत तारकाः कपटतो विहायस्तटे ॥ १९ ॥
(लक्ष्मणस्य)

क्षोणीपर्यटनव्रते क्षितिपते युष्मत्प्रतापो भ्रम-
त्सौराष्ट्रे मगधे कलिङ्गसविधे वङ्गे यदङ्गे गतः ।
तत्पापं परिहर्तुमम्बरमणिव्याजेन सप्तार्णवे
स्नात्वा विष्णुपदं स्पृशन्नपि भृशं भूयः परिभ्राम्यति ॥ २० ॥
(कस्यापि)

अध्यायोधनवेदि मार्गणकुशानास्तीर्य खङ्गस्रुचा
हुत्वारेः पललं चरुं हविरसृक् तन्मस्तकस्वस्तिकैः ।
संवेष्ट्याहवनीयमानसदसिख्योऽसौ प्रतापानलो-
ऽस्थापि द्रागुदकाञ्जलीकृतचतुःपाथोधिना श्रीमता ॥ २१ ॥
(धरणीधरस्य)

येनोद्गधात्त्वदरिनिकरोर्ध्वेन्धनव्रातकात्सं-
भूतो धूमो गगनमसितत्वं निनायावलक्षम् ।
भूबिम्बाहस्कर नरपते हारिसिंह त्वदीयो-
ऽनन्तापीठे खलु विजयते स प्रतापकृशानुः ॥ २२ ॥
(भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

लङ्काधामनि वीर भानुनृपतेः प्रेक्ष्य प्रतापोदयं
प्रत्यागारमधीरनीरजदृशो भूयो हुताशम्रमात् ।
क्षुभ्यद्वाणि विधूतपाणि विगलन्मुक्तामणि प्रस्खल-
द्वाप्पश्रेणि विलोलवेणि दयितं कण्ठस्थले बिभ्रति ॥ २३ ॥
क्षोणीकाम निजामशाह भवतः प्रौढैः प्रतापानलै-
र्द्रागेव द्रवरूपतामुपगते चामीकराणां चये ।
अश्यद्वासवधामधोरणि मुहुर्मज्जद्ग्रामाणि
त्रस्यत्कामिनि निष्पतद्वनितलं मेरोः समुन्मीलति ॥ २४ ॥
त्वत्प्रतापानलज्वालादग्धं दुग्धोदधिं पुनः ।
नास्वादयति विस्वादमगस्त्यो विस्तृताञ्जलिः ॥ २५ ॥
(एते भानुकरस्य)

कूर्मः पादोऽत्र यष्टिर्भुजगपतिरसौ भाजनं भूतधात्री
तैलापूराः समुद्राः कनकगिरिरयं वृत्तवर्तिप्ररोहः ।
ज्योतिश्चण्डांशुरोचिर्गगनमलिनिमा कज्जलं दह्यमानाः
शत्रुश्रेणीपतङ्गा ज्वलति रघुपते त्वत्प्रतापप्रदीपः ॥ २६ ॥
(महानाटकात्)

अध्यायोधनवेदि मार्गणकुशानास्तीर्य खङ्गस्रुचा
 हुत्वारेः पललं चरुं हविरसृक् तन्मस्तकस्वस्तिकैः ।
 संवेष्ट्याहवनीयमानसदसिख्योऽसौ प्रतापानलो-
 ऽस्थापि द्रागुदकाञ्जलीकृतचतुःपाथोधिना श्रीमता ॥ २१ ॥
 (धरणीधरस्य)

येनोद्गधात्त्वदरिनिकरोर्द्रेन्धनव्रातकात्सं-
 भूतो धूमो गगनमसितत्वं निनायावलक्षम् ।
 भूविम्बाहस्कर नरपते हारिसिंह त्वदीयो-
 ऽनन्तापीठे खलु विजयते स प्रतापकृशानुः ॥ २२ ॥
 (भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

लङ्काधामनि वीर भानुनृपतेः प्रेक्ष्य प्रतापोदयं
 प्रत्यागारमधीरनीरजदृशो भूयो हुताशभ्रमात् ।
 क्षुब्धद्व्याणि विधूतपाणि विगलन्मुक्तामणि प्रस्खल-
 द्वाप्पश्रेणि विलोलवेणि दयितं कण्ठस्थले बिभ्रति ॥ २३ ॥
 क्षोणीकाम निजामशाह भवतः प्रौढैः प्रतापानलै-
 र्द्रागेव द्रवरूपतामुपगते चामीकराणां चये ।
 अश्यद्वासवधामधोरणि मुहुर्मज्जद्ग्रामणि
 त्रस्यत्कामिनि निष्पतद्वनितलं मेरोः समुन्मीलति ॥ २४ ॥
 त्वत्प्रतापानलज्वालादग्धं दुग्धोदधिं पुनः ।
 नास्वादयति विस्वादमगस्त्यो विस्तृताञ्जलिः ॥ २५ ॥
 (एते भानुकरस्य)

कूर्मः पादोऽत्र यष्टिर्भुजगपतिरसौ भाजनं भूतधात्री
 तैलापूराः समुद्राः कनकगिरिरयं वृत्तवर्तिप्ररोहः ।
 ज्योतिश्चण्डांशुरोचिर्गगनमलिनिमा कज्जलं दह्यमानाः
 शत्रुश्रेणीपतङ्गा ज्वलति रघुपते त्वत्प्रतापप्रदीपः ॥ २६ ॥
 (महानाटकात्)

अथ कीर्तिप्रतापौ—

क्षितिप किमपि चित्रं जागरूकेऽपि युष्म-
द्यशसि शशिकदम्बे त्वत्प्रतापेऽर्कबिम्बे ।

नयनकुवलयानि त्वद्विषत्कामिनीना-
मपि च वदनपद्मान्याशु यत्संकुचन्ति ॥ २७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

त्वत्प्रतापार्कबिम्बेनासद्येन विकचीकृता ।

कीर्तिस्ते भाति विगतालिव्रजाङ्गेव पद्मिनी ॥ २८ ॥

(भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

कीर्त्यास्य चन्द्रकरकोमलयातिशुभ्रं

शोणं नवार्ककिरणप्रतिमप्रतापैः ।

श्यामद्युति द्विषदकीर्तिमसीभिरित्थं

चित्रं तदाम्बरमराजत दिग्वधूनाम् ॥ २९ ॥

(अम्बष्ठस्य)

अथ दानम्—

देव क्षोणितलाधिपे त्वयि महादानप्रधाने विधौ

चेतः कुर्वति पातयत्यपि दृशं स्वर्णादिके वस्तुनि ।

विप्राणामतिघोरधारकठिनद्योतत्कुठारोद्यता-

घातप्रस्फुटिताङ्गसंधिचकितो मेरुः परं दूयते ॥ ३० ॥

अन्यार्थमङ्गीकृतवारिपाणौ विशङ्कमानस्तव दानवारि ।

परस्परं दीनमुखा न के वा देवाः सुमेरुं शुशुबुः स्वभूमिम् ॥ ३१ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

दाने द्राघीयसि कपटतः स्वस्तटिन्याः कठिन्या-

.....तव कृतवता.....गारभित्तौ ।

नापि प्रापि कचिदपि.....श्रीनिजामद्वितीय-

स्तेनाकारि स्थगितमनसा वेधसा बिन्दुरिन्दुः ॥ ३२ ॥

अथ कीर्तिप्रतापौ—

क्षितिप किमपि चित्रं जागरूकेऽपि युष्म-
द्यशसि शशिकदम्बे त्वत्प्रतापेऽर्कबिम्बे ।

नयनकुवलयानि त्वद्विषत्कामिनीना-
मपि च वदनपद्मान्याशु यत्संकुचन्ति ॥ २७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

त्वत्प्रतापार्कबिम्बेनासद्येन विकचीकृता ।

कीर्तिस्ते भाति विगतालिव्रजाङ्गेव पद्मिनी ॥ २८ ॥

(भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

कीर्त्यास्य चन्द्रकरकोमलयातिशुभ्रं

शोणं नवार्ककिरणप्रतिमप्रतापैः ।

श्यामद्युति द्विषदकीर्तिमसीभिरित्थं

चित्रं तदाम्बरमराजत दिग्वधूनाम् ॥ २९ ॥

(अम्बष्ठस्य)

अथ दानम्—

देव क्षोणितलाधिपे त्वयि महादानप्रधाने विधौ

चेतः कुर्वति पातयत्यपि दृशं स्वर्णादिके वस्तुनि ।

विप्राणामतिघोरधारकठिनद्योतत्कुठारोद्यता-

घातप्रस्फुटिताङ्गसंधिचकितो मेरुः परं दूयते ॥ ३० ॥

अन्यार्थमङ्गीकृतवारिपाणौ विशङ्कमानस्तव दानवारि ।

परस्परं दीनमुखा न के वा देवाः सुमेरुं शुशुबुः स्वभूमिम् ॥ ३१ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

दाने द्राघीयसि कपटतः स्वस्तटिन्याः कठिन्या-

.....तव कृतवता.....गारभित्तौ ।

नापि प्रापि कचिदपि.....श्रीनिजामद्वितीय-

स्तेनाकारि स्थगितमनसा वेधसा बिन्दुरिन्दुः ॥ ३२ ॥

पद्यरचना ।

यशःकिरणधोरणीतुलितरोहिणीवल्लभ
त्वया क्षणमुदीक्ष्यते जगति यो दरिद्रो जनः ।
पयोधरमहीधरे नटति तस्य वामभ्रुवां
रणत्कनककिङ्किणीकलरवेण देवस्मरः ॥ ३३ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

म्लायद्वक्त्ररुचः कदन्नकणिकाकुक्षिभरा भिक्षवो
ये केचित्क्षितिकामरामनृपतेः पु.....दृशो गोचराः ।
तत्तत्कान्तकुटुम्बिनीश्रुतिनटत्ताटङ्करत्नाङ्कुर-
ज्योत्स्नाभिर्जटिलीभवन्ति भुवने का वा न दिग्भित्तयः ॥ ३४ ॥

(रामचन्द्रस्य)

अनेन सर्वार्थिकृतार्थता कृता हृतार्थितौ कामगवीसुरदुमौ ।
पयःसेचनपल्लवाशने प्रदाय दानव्यसनं समामृतः ॥ ३५ ॥
(श्रीहर्षस्य)

देव त्वत्करनीरदे दिशि दिवि प्रारब्धपुण्योन्नतौ
चञ्चत्कङ्कणरत्नराजि तडिति स्वर्णामृतं वर्षति ।
स्फीता कीर्तितरङ्गिणी समभवत्तृप्ता गुणग्रामभूः
पूर्णं चार्थिसरः शशाम विदुषां दारिद्र्यदावानलः ॥ ३६ ॥
(महानाटकात्)

त्वया वीरगुणाकृष्टा ऋजुदृष्ट्या विलोकिताः ।
लक्ष्यं लब्ध्वैव गच्छन्ति मार्गणा इव मार्गणैः ॥ ३७ ॥
(कस्यापि)

अथ विदायः—

लक्ष्मीविभ्रमकुञ्जकल्पविटपिन्विद्वत्कृपावारिधे
दृष्टिं स्नेहनिधे निधेहि महतीं दीने दयाद्रौ पुनः ।

पद्यरचना ।

यशःकिरणधोरणीतुलितरोहिणीवल्लभ
त्वया क्षणमुदीक्ष्यते जगति यो दरिद्रो जनः ।
पयोधरमहीधरे नटति तस्य वामभ्रुवां
रणत्कनककिङ्किणीकलरवेण देवस्मरः ॥ ३३ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

म्लायद्वक्त्ररुचः कदन्नकणिकाकुक्षिभरा भिक्षवो
ये केचित्क्षितिकामरामनृपतेः पु.....दृशो गोचराः ।
तत्तत्कान्तकुटुम्बिनीश्रुतिनटत्ताटङ्करत्नाङ्कुर-
ज्योत्स्नाभिर्जटिलीभवन्ति भुवने का वा न दिग्भित्तयः ॥ ३४ ॥
(रामचन्द्रस्य)

अनेन सर्वार्थिकृतार्थता कृता हृतार्थितौ कामगवीसुरदुमौ ।
मित्रः पयःसेचनपल्लवाशने प्रदाय दानव्यसनं समामृतः ॥ ३५ ॥
(श्रीहर्षस्य)

देव त्वत्करनीरदे दिशि दिवि प्रारब्धपुण्योन्नतौ
चञ्चत्कङ्कणरत्नराजि तडिति स्वर्णामृतं वर्षति ।
स्फीता कीर्तितरङ्गिणी समभवत्तृप्ता गुणग्रामभूः
पूर्णं चार्थिसरः शशाम विदुषां दारिद्र्यदावानलः ॥ ३६ ॥
(महानाटकात्)

त्वया वीरगुणाकृष्टा ऋजुदृष्ट्या विलोकिताः ।
लक्ष्यं लब्ध्वैव गच्छन्ति मार्गणा इव मार्गणैः ॥ ३७ ॥
(कस्यापि)

अथ विदायः—

लक्ष्मीविभ्रमकुञ्जकल्पविटपिन्विद्वत्कृपावारिधे
दृष्टिं स्नेहनिधे निधेहि महतीं दीने दयाद्रौ पुनः ।

अस्मद्वारिनिबद्धसिन्धुरघटाव्यालोलकर्णानिलैः

पीयन्तामरविन्दसुन्दरदृशां स्वेदाम्भसां बिन्दवः ॥ ३८ ॥

क्रीडामूलं दुकूलं दलितरिपुमहीपालवृन्दं गजेन्द्रं

दत्त्वा तुङ्गं तुरङ्गं विरचय वसुधानाथ तावद्विदायम् ।

युष्मत्सत्कारभाजं दिशि दिशि चकितैः प्रेक्ष्य मामक्षिपातै-

र्वक्षोजाभोगभूमौ विलुठतु पुलकश्रेणिरेणेक्षणानाम् ॥ ३९ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां द्वितीयो व्यापारः ॥

तृतीयो व्यापारः ।

अथ राजवर्णनम्—

राजानः शशिभास्करान्वयभुवः के के न संजज्ञिरे

भर्तारं पुनरेकमेव हि भुवस्त्वां वीर मन्यामहे ।

येनाङ्गं परिमृद्य कुन्तलमथाकृष्य व्युदस्यायतं

चोलं प्राप्य च मध्यदेशमसकृत्काङ्क्षयां करः प्रापितः ॥ १ ॥

(कस्यापि ।)

शत्रुनीरजदृशोऽनुघस्रमाख्यापदेन हरिसिंह नाम ते ।

मोहिता हरिहरीति चक्षते रूपशौर्यबलसंहितैर्गुणैः ॥ २ ॥

(भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

कृष्णं समरसतृष्णं दृष्टवतो विष्टरश्रवसः ।

राजन्यजन्ममूले भुजमूले पुलकमुकुलानि ॥ ३ ॥

क्षोणीकाम निजामशाह विलसत्सिन्दूरकुन्दस्रजि

स्रष्टा त्वच्चरणं विधाय निदधे वैरिश्रियो मूर्धनि ।

सीमन्तस्य चकास्ति कापि सरणिस्तस्योर्ध्वरेखादयः

सिन्दूरस्य कणा जयन्ति किरणाः कुन्दानि मन्ये नखाः ॥ ४ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

अस्मद्वारिनिबद्धसिन्धुरघटाव्यालोलकर्णानिलैः

पीयन्तामरविन्दसुन्दरदृशां स्वेदाम्भसां बिन्दवः ॥ ३८ ॥

क्रीडामूलं दुकूलं दलितरिपुमहीपालवृन्दं गजेन्द्रं

दत्त्वा तुङ्गं तुरङ्गं विरचय वसुधानाथ तावद्विदायम् ।

युष्मत्सत्कारभाजं दिशि दिशि चकितैः प्रेक्ष्य मामक्षिपातै-

र्वक्षोजाभोगभूमौ विलुठतु पुलकश्रेणिरेणेक्षणानाम् ॥ ३९ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां द्वितीयो व्यापारः ॥

तृतीयो व्यापारः ।

अथ राजवर्णनम्—

राजानः शशिभास्करान्वयभुवः के के न संजज्ञिरे

भर्तारं पुनरेकमेव हि भुवस्त्वां वीर मन्यामहे ।

येनाङ्गं परिमृद्य कुन्तलमथाकृष्य व्युदस्यायतं

चोलं प्राप्य च मध्यदेशमसकृत्काङ्क्षायां करः प्रापितः ॥ १ ॥

(कस्यापि ।)

शत्रुनीरजदृशोऽनुघस्रमाख्यापदेन हरिसिंह नाम ते ।

मोहिता हरिहरीति चक्षते रूपशौर्यबलसंहितैर्गुणैः ॥ २ ॥

(भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

कृष्णं समरसतृष्णं दृष्टवतो विष्टरश्रवसः ।

राजन्यजन्ममूले भुजमूले पुलकमुकुलानि ॥ ३ ॥

क्षोणीकाम निजामशाह विलसत्सिन्दूरकुन्दसज्जि

स्रष्टा त्वच्चरणं विधाय निदधे वैरिश्रियो मूर्धनि ।

सीमन्तस्य चकास्ति कापि सरणिस्तस्योर्ध्वरेखादयः

सिन्दूरस्य कणा जयन्ति किरणाः कुन्दानि मन्ये नखाः ॥ ४ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

अथ सौन्दर्यप्रधाना नृपस्तुतिः—

गेहे गेहे सुभगसुदृशो रामभद्र क्षितीश

त्वामालिख्य स्वमपि सविधे सस्पृहं भावयन्त्यः ।

तस्मिन्नाकस्मिकमुपनते वल्लभे भीतिभाजः

पौष्पं चापं तव करतले वेपमाना लिखन्ति ॥ ५ ॥

(कस्यापि)

अयं कामो निजामो वा त्वया किमवधारितम् ।

इति दृष्टिरिव प्रष्टुं श्रुतिं श्रयति सुभ्रुवाम् ॥ ६ ॥

सर्वं लुण्ठितमुद्भटैस्तव भटैस्तेन द्विषत्सुभ्रुव-

स्त्राणाय त्वयि योजिताञ्जलिपुटं काकूक्तिमातन्वते ।

त्राणं दूरत एव तिष्ठतु मनस्तासां त्वया लुण्ठितं

तद्गम्भीरं वदामि कुप्यसि न चेत्साधोरयं कः क्रमः ॥ ७ ॥

अलसं वपुषि श्लथं दुकूले चपलं चेतसि धूसरं कपोले ।

चकितं नयने स्तने विलोलं तव नामश्रवणं तनूदरीणाम् ॥ ८ ॥

(एते भानुकरस्य)

अथ धरित्रीपतियात्रा—

चोली चोलीं न तु कलयते गुर्जरी जर्जराङ्गी

भूर्जाक्रान्ता विशति विपिनं मालवी सालवीथीम् ।

नो संगीतं रचयति मनागङ्ग वङ्गी कृशाङ्गी

नाङ्गी रागं रहसि तनुते भूपते त्वत्प्रयाणे ॥ ९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

जाने युष्मत्प्रयाणे क्षितितिलक रजोयोगदोषादशेषा

द्विग्योषाः स्नान्ति सद्यस्त्वदरिन्पवधूनेत्रनीरापगासु ।

संगम्य त्वत्प्रतापैस्तदनु किमुदधौ दोहदं देव तासां

प्राची प्रातः प्रसूते यदियमुरुमहोऽखण्डमार्तण्डबिम्बम् ॥ १० ॥

(रामचन्द्रस्य)

अथ सौन्दर्यप्रधाना नृपस्तुतिः—

गेहे गेहे सुभगसुदृशो रामभद्र क्षितीश

त्वामालिख्य स्वमपि सविधे सस्पृहं भावयन्त्यः ।

तस्मिन्नाकस्मिकमुपनते वल्लभे भीतिभाजः

पौष्पं चापं तव करतले वेपमाना लिखन्ति ॥ ५ ॥

(कस्यापि)

अयं कामो निजामो वा त्वया किमवधारितम् ।

इति दृष्टिरिव प्रष्टुं श्रुतिं श्रयति सुभ्रुवाम् ॥ ६ ॥

सर्वं लुण्ठितमुद्गतैस्तव भटैस्तेन द्विषत्सुभ्रुव-

स्त्राणाय त्वयि योजिताञ्जलिपुटं काकूक्तिमातन्वते ।

त्राणं दूरत एव तिष्ठतु मनस्तासां त्वया लुण्ठितं

तद्गम्भीर वदामि कुप्यसि न चेत्साधोरयं कः क्रमः ॥ ७ ॥

अलसं वपुषि श्लथं दुकूले चपलं चेतसि धूसरं कपोले ।

चकितं नयने स्तने विलोलं तव नामश्रवणं तनूदरीणाम् ॥ ८ ॥

(एते भानुकरस्य)

अथ धरित्रीपतियात्रा—

चोली चोलीं न तु कलयते गुर्जरी जर्जराङ्गी

भूर्जीक्रान्ता विशति विपिनं मालवी सालवीथीम् ।

नो संगीतं रचयति मनागङ्गा वङ्गी कृशाङ्गी

नाङ्गी रागं रहसि तनुते भूपते त्वत्प्रयाणे ॥ ९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

जाने युष्मत्प्रयाणे क्षितितिलक रजोयोगदोषादशेषा

दिग्योषाः स्नान्ति सद्यस्त्वदरिणृपवधूनेत्रनीरापगासु ।

संगम्य त्वत्प्रतापैस्तदनु किमुदधौ दोहदं देव तासां

प्राची प्रातः प्रसूते यदियमुरुमहोऽखण्डमार्तण्डबिम्बम् ॥ १० ॥

(रामचन्द्रस्य)

देव त्वद्विजये तुरङ्गमुखुरवातक्षतक्षमातला-

त्रोड्डीने रजसः परागपटले दिक्चक्रमाक्रामति ।

अक्षणां पङ्क्तिशतानि निन्दति निजं हस्तद्वयं निन्दति

स्वां निन्दत्यनिमेषतां परिपतद्वाष्पाम्बुधारो हरिः ॥ ११ ॥

(महानाटकात्)

त्वद्याने वाजिराजिप्रखरखरपुटोद्भूतधूलीतमिसे

लुण्टाकेभ्यो भियेव स्फुटमुपनयते गोसहस्रं विवस्वान् ।

गोपायन्ति द्रुतं खं वलयमपि दिशो न क्षमापि क्षमाभू-

त्स्थातुं वा गन्तुमुर्वीतिलक वसुमती केवलं कम्पते स्म ॥ १२ ॥

(महाकाव्ये)

काञ्चीं काञ्ची न धत्ते कलयति न दृशा केरली केलितल्पं

सिन्दूरं दूर एव क्षिपति करतलन्यस्तमान्ध्री पुरन्ध्री ।

सौराष्ट्री माष्टि भूयः सपदि नयनयो रक्तयो रक्तिमानं

कार्णाटी कर्णिकायां मलिनयति मनो मानसिंहप्रयाणे ॥ १३ ॥

(कस्यापि)

वाहव्यूहखुरक्षतां वसुमतीं संवीक्ष्य मूर्छावतीं

भेरी भाङ्गुतिचञ्चलेन पयसा वारांनिधिः सिञ्चति ।

दिग्बाला तनुते निजामनृपतेर्वातं पताकांशुकै-

र्धूलीधोरणिरश्विनीसुतमिव प्रष्टुं दिवं धावति ॥ १४ ॥

वेलत्पक्षतिराजहंसयुवतित्रुश्र्यन्मृणालावलि-

आम्यत्षट्पदभूरिभाङ्गुति पतच्चक्रीकृतक्रेङ्कति ।

पर्यस्यन्नवपद्मसंहतिपृथग्दिग्भर्तिवेगस्थिति-

प्रस्थानध्वजवातलोलमजनि स्वर्गापगायाः पयः ॥ १५ ॥

भेरीभाङ्गुतिभिस्तुरङ्गनिनदैः कुम्भीन्द्रकोलाहलैः

प्रस्थाने तव वीरभानं दलितं ब्रह्माण्डभाण्डोदरी ।

देव त्वद्विजये तुरङ्गमुखुरव्रातक्षतक्षमातला-

त्रोड्डीने रजसः परागपटले दिक्चक्रमाक्रामति ।

अक्षणां पङ्क्तिशतानि निन्दति निजं हस्तद्वयं निन्दति

स्वां निन्दत्यनिमेषतां परिपतद्वाष्पाम्बुधारो हरिः ॥ ११ ॥

(महानाटकात्)

त्वद्याने वाजिराजिप्रखरखरपुटोद्धूतधूलीतमिक्षे

लुण्टाकेभ्यो भियेव स्फुटमुपनयते गोसहस्रं विवस्वान् ।

गोपायन्ति द्रुतं खं वलयमपि दिशो न क्षमापि क्षमाभू-

त्स्थातुं वा गन्तुमुर्वीतिलक वसुमती केवलं कम्पते स्म ॥ १२ ॥

(महाकाव्ये)

काञ्चीं काञ्ची न धत्ते कलयति न दृशा केरली केलितल्पं

सिन्दूरं दूर एव क्षिपति करतलन्यस्तमान्ध्री पुरन्ध्री ।

सौराष्ट्री माष्टि भूयः सपदि नयनयो रक्तयो रक्तिमानं

कार्णाटी कर्णिकायां मलिनयति मनो मानसिंहप्रयाणे ॥ १३ ॥

(कस्यापि)

वाहव्यूहखुरक्षतां वसुमतीं संवीक्ष्य मूर्छावतीं

भेरी भाङ्गुतिचञ्चलेन पयसा वारांनिधिः सिञ्चति ।

दिग्बाला तनुते निजामनृपतेर्वातं पताकांशुकै-

धूलीधोरणिरश्विनीसुतमिव प्रष्टुं दिवं धावति ॥ १४ ॥

वेल्लत्पक्षतिराजहंसयुवतित्रुश्र्यन्मृणालावलि-

आम्यत्पदपदभूरिभाङ्गुति पतच्चक्रीकृतक्रेङ्गुति ।

पर्यस्यन्नवपद्मसंहतिपृथग्दिग्वर्तिवेगस्थिति-

प्रस्थानध्वजवातलोलमजनि स्वर्गापगायाः पयः ॥ १५ ॥

भेरीभाङ्गुतिभिस्तुरङ्गनिनदैः कुम्भीन्द्रकोलाहलैः

प्रस्थाने तव वीरभान दलितं ब्रह्माण्डभाण्डोदरी ।

आधाय ज्वलति प्रतापदहने रङ्गैः पुनर्वेधसा
तारानायकतारकासुरसरिद्धाजादिवायोजितम् ॥ १६ ॥
(भानुकरस्यैते)

अथ पताका—

नृपतिनिजामचमूचरचरणार्पणबहलपीडाभिः ।
रचयति बहिरिव रसनामरुणध्वजकैतवादवनिः ॥ १७ ॥
निजामवसुधाधिपे क्षिपति शोणकोणे दृशौ
रणाङ्गणसमुद्भटैः प्रतिभटैर्विभिन्नीकृतम् ।
वपुर्विपुलवेपथु व्यथितमब्जिनीप्रेयसो
व्रणज्वरविशङ्कया किमु पताकया स्पृश्यते ॥ १८ ॥
(एतौ भानुकरस्य)

अथ तुरङ्गः—

वातं स्थावरयन्त्रभः पुटकयन्स्रोतस्विनीं सूत्रयन्
सिन्धुं पल्वलयन्वनं विटपयन्भूमण्डलं लोष्टयन् ।
शैलं सर्षपयन्दिशं द्यणुकयँल्लोकत्रयं क्रोडयन्
हेलारब्धरयो हयस्तव कथंकारं गिरां गोचरः ॥ १९ ॥
मेखलीयति मेदिन्याः ककुभः कङ्कणीयति ।
मण्डलीस्तुरगः कुर्वजगतः कुण्डलीयति ॥ २० ॥
(भानुकरस्यैतौ)

धूलीभिर्दिवमन्धयन्बधिरयन्नाशाः खुराणां रवै-
र्वातं संयति खञ्जयञ्जवजयैः स्तोतृन्गुणैर्मूकयन् ।
धर्मारोधनसंनियुक्तजगता राज्ञामुनाधिष्ठितः
सान्द्रोत्फालमिषाद्विगायति पदा स्पृष्टुं तुरङ्गोऽपि गाम् ॥ २१ ॥
(श्रीहर्षस्य)

अलक्षितगतागतैः कुलवधूकटाक्षैरिव
क्षणानुनयशीतलैः प्रणयकेलिकौपैरिव ।

आधाय ज्वलति प्रतापदहने रङ्गैः पुनर्वेधसा
तारानायकतारकासुरसरिद्धाजादिवायोजितम् ॥ १६ ॥
(भानुकरस्यैतौ)

अथ पताका—

नृपतिनिजामचमूचरचरणार्पणबहलपीडाभिः ।
रचयति बहिरिव रसनामरुणध्वजकैतवादवनिः ॥ १७ ॥
निजामवसुधाधिपे क्षिपति शोणकोणे दृशौ
रणाङ्गणसमुद्भटैः प्रतिभटैर्विभिन्नीकृतम् ।
वपुर्विपुलवेपथु व्यथितमब्जिनीप्रेयसो
व्रणज्वरविशङ्कया किमु पताकया स्पृश्यते ॥ १८ ॥
(एतौ भानुकरस्य)

अथ तुरङ्गः—

वातं स्थावरयन्त्रभः पुटकयन्स्रोतस्विनीं सूत्रयन्
सिन्धुं पल्वलयन्वनं विटपयन्भूमण्डलं लोष्टयन् ।
शैलं सर्षपयन्दिशं द्यणुकयँल्लोकत्रयं क्रोडयन्
हेलारब्धरयो हयस्तव कथंकारं गिरां गोचरः ॥ १९ ॥
मेखलीयति मेदिन्याः ककुभः कङ्कणीयति ।
मण्डलीस्तुरगः कुर्वजगतः कुण्डलीयति ॥ २० ॥
(भानुकरस्यैतौ)

धूलीभिर्दिवमन्धयन्बधिरयन्नाशाः खुराणां रवै-
र्वातं संयति खञ्जयञ्जवजयैः स्तोतृन्गुणैर्मूकयन् ।
धर्मारोधनसंनियुक्तजगता राज्ञामुनाधिष्ठितः
सान्द्रोत्फालमिषाद्विगायति पदा स्पष्टं तुरङ्गोऽपि गाम् ॥ २१ ॥
(श्रीहर्षस्य)

अलक्षितगतागतैः कुलवधूकटाक्षैरिव
क्षणानुनयशीतलैः प्रणयकेलिकौपैरिव ।

सुवृत्तमसृणोन्नतैर्मृगदृशामुरोजैरिव
त्वदीयतुरगैरिदं धरणिचक्रमाक्रम्यते ॥ २२ ॥

(कस्यापि)

निर्मासं मुखमण्डले परिमितं मध्ये लघुं कर्णयोः
स्कन्धे बन्धुरमप्रमाणमुरसि स्निग्धं च रोमोद्गमे ।
पीनं पश्चिमपार्श्वयोः पृथुतरं पृष्ठे प्रधानं जवे
राजा वाजिनमारुरोह सकलैर्युक्तं प्रशस्तैर्गुणैः ॥ २३ ॥

(त्रिविक्रमस्य)

अथ कृपाणः—

भूभृन्मौलितटीषु दर्शितसमारम्भोऽयमम्भोधर-
स्त्वत्खङ्गः प्रतिपक्षपङ्कपटलं प्रक्षालयन्धारया ।
व्युद्धकुद्धविरुद्धसिन्धुरदलद्रण्डस्थलप्रस्खल-
न्मुक्ताभिः करकाभिराशु समरक्षोणीतले वर्षति ॥ २४ ॥

(गणपतेः)

वीर त्वत्खङ्गधारानिहतरिपुगणास्तं हिमांशुं विभिद्य
स्वर्गे यान्ति स्म नूनं विगलितकलुषाः साधुवत्पुण्यलभ्ये ।
यस्मिन्संलक्ष्यते वै विकटमलपदे नावभेदोऽधुनापि
मध्याभ्यालक्ष्यदेवसृतिततविषयो देव भूविम्बमानो ॥ २५ ॥
(भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

क्षोणीकाम निजाम तावकभुजं लब्ध्वा भुजङ्गेश्वरं
जानीमः करवालकालभुजगी किं नाम गर्भिण्यभूत् ।
यद्विन्नेभकपोललोलविगलन्मुक्ताकलापच्छला-
दच्छामण्डपरम्परामधिरणं सूते स्फुरन्ती मुहुः ॥ २६ ॥
(भानुकरस्य)

हस्ताम्भोजालिमाला नखशशिरुचिरश्यामलच्छायवीची
तेजोमेधूमधारा वितरणकरिणो गण्डदानप्रणाली ।

सुवृत्तमसृणोन्नतैर्मृगदृशामुरोजैरिव
त्वदीयतुरगैरिदं धरणिचक्रमाक्रम्यते ॥ २२ ॥

(कस्यापि)

निर्मासं मुखमण्डले परिमितं मध्ये लघुं कर्णयोः
स्कन्धे बन्धुरमप्रमाणमुरसि स्निग्धं च रोमोद्गमे ।
पीनं पश्चिमपार्श्वयोः पृथुतरं पृष्ठे प्रधानं जवे
राजा वाजिनमारुरोह सकलैर्युक्तं प्रशस्तैर्गुणैः ॥ २३ ॥

(त्रिविक्रमस्य)

अथ कृपाणः—

भूभृन्मौलितटीषु दर्शितसमारम्भोऽयमम्भोधर-
स्त्वत्खड्गः प्रतिपक्षपङ्कपटलं प्रक्षालयन्धारया ।
व्युद्धकुद्धविरुद्धसिन्धुरदलद्रण्डस्थलप्रस्खल-
न्मुक्ताभिः करकाभिराशु समरक्षोणीतले वर्षति ॥ २४ ॥

(गणपतेः)

वीर त्वत्खड्गधारानिहतरिपुगणास्तं हिमांशुं विभिद्य
स्वर्गे यान्ति स्म नूनं विगलितकलुषाः साधुवत्पुण्यलभ्ये ।
यस्मिन्संलक्ष्यते वै विकटमलपदे नावभेदोऽधुनापि
मध्याभ्यालक्ष्यदेवसृतिततविषयो देव भूविम्बमानो ॥ २५ ॥

(भोगिसूनोर्वेणीदत्तस्य)

क्षोणीकाम निजाम तावकभुजं लब्ध्वा भुजङ्गेश्वरं
जानीमः करवालकालभुजगी किं नाम गर्भिण्यभूत् ।
यद्विन्नेभकपोललोलविगलन्मुक्ताकलापच्छला-
दच्छामण्डपरम्परामधिरणं सूते स्फुरन्ती मुहुः ॥ २६ ॥

(भानुकरस्य)

हस्ताम्भोजालिमाला नखशशिरुचिरश्यामलच्छायवीची
तेजोमेधूमधारा वितरणकरिणो गण्डदानप्रणाली ।

वीरश्रीवेणिदण्डो लवणिमसरसीबालशैवालवल्ली
 वेल्लत्यम्भोधरश्रीरकवर धरणीपालपाणौ कृपाणः ॥ २७ ॥
 (अकवरीयकालिदासस्य)

अथ वीरवाक्यम्—

अद्यारभ्य कठोरकार्मुकलताविन्यस्तहस्ताम्बुज-
 स्तावन्न प्रकटीकरोमि नयने शोणे निमेषोदयान् ।
 यावत्सायककोटिपाटितरिपुक्षमापालमौलिस्खल-
 न्मल्लीमाल्यपतत्परागपटलैरामोदिनी मेदिनी ॥ २८ ॥
 नो तावत्कलयामि केलिकृपणे वामभ्रुवो लोचने
 तावन्न प्रणयावलीढमनसः पश्यामि मातुर्मुखम् ।
 यावत्तारकुठारपातनिपतल्यर्थिपृथ्वीपति-
 भ्राम्यत्स्वर्णकिरीटबद्धशिरसो भ्राम्यन्ति नो फेरवः ॥ २९ ॥
 राकातारापतिरुचिचमत्कारवाचालकीर्ति-
 र्वेल्लहेलापरिणतगजस्पर्धिदोर्वल्लिवीर्यः ।
 एकच्छत्रं भुवनवलयं मेदिनीमेकवीरां
 युद्धारम्भे स्मितपरिचितः कौतुकादद्य कुर्याम् ॥ ३० ॥
 समरविहरदस्मद्भल्लनिष्पातभिन्न-
 प्रतिनरपतिभिन्नाद्भास्वतो बिम्बमध्यात् ।
 वयमहह धरायां पातयामः पताका-
 वसनपवनलोलं वारि दिव्यापगायाः ॥ ३१ ॥
 निष्पीते कलशोद्धवेन जलधौ गौरीपतेर्गङ्गाया
 होतुं हन्त ललाटदावदहने यावत्कृतः प्रक्रमः ।
 तावत्तत्र मया विपक्षनगरीनारीद्वगम्भोरुह-
 द्वन्द्वप्रस्खलदस्रवारिपटलैः सृष्टाः पयोराशयः ॥ ३२ ॥
 (भानुकरस्य)

वीरश्रीवेणिदण्डो लवणिमसरसीबालशैवालवल्ली
 वेल्लत्यम्भोधरश्रीरकवर धरणीपालपाणौ कृपाणः ॥ २७ ॥
 (अकवरीयकालिदासस्य)

अथ वीरवाक्यम्—

अद्यारभ्य कठोरकार्मुकलताविन्यस्तहस्ताम्बुज-
 स्तावन्न प्रकटीकरोमि नयने शोणे निमेषोदयान् ।
 यावत्सायककोटिपाटितरिपुक्ष्मापालमौलिस्खल-
 न्मल्लीमाल्यपतत्परागपटलैरामोदिनी मेदिनी ॥ २८ ॥
 नो तावत्कलयामि केलिकृपणे वामभ्रुवो लोचने
 तावन्न प्रणयावलीढमनसः पश्यामि मातुर्मुखम् ।
 यावत्तारकुठारपातनिपतत्प्रत्यर्थिपृथ्वीपति-
 भ्राम्यत्स्वर्णकिरीटबद्धशिरसो भ्राम्यन्ति नो फेरवः ॥ २९ ॥
 राकातारापतिरुचिचमत्कारवाचालकीर्ति-
 र्वेल्लोहेलापरिणतगजस्पर्धिदोर्वल्लिवीर्यः ।
 एकच्छत्रं भुवनवलयं मेदिनीमेकवीरां
 युद्धारम्भे स्मितपरिचितः कौतुकादद्य कुर्याम् ॥ ३० ॥
 समरविहरदस्मद्भल्लनिष्पातभिन्न-
 प्रतिनरपतिभिन्नाद्भास्वतो बिम्बमध्यात् ।
 वयमहह धरायां पातयामः पताका-
 वसनपवनलोलं वारि दिव्यापगायाः ॥ ३१ ॥
 निष्पीते कलशोद्धवेन जलधौ गौरीपतेर्गङ्गया
 होतुं हन्त ललाटदावदहने यावत्कृतः प्रक्रमः ।
 तावत्तत्र मया विपक्षनगरीनारीदृग्भोरुह-
 द्बन्धप्रस्खलदसवारिपटलैः सृष्टाः पयोराशयः ॥ ३२ ॥
 (भानुकरस्य)

अथ रणः—

कृपाणकिरणानलं रुधिरनीरपूरच्छटा-

जटालतलसंकुलं भटतिमिङ्गिलैराकुलम् ।

प्रमथ्य समरणं चरमकर्षिं लक्ष्मीस्त्वया

विधारमदमन्थरं मथनमन्दरं सिन्धुरम् ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

भलैर्भिन्नाः प्रतिनृपतयः शङ्खनादानुदारा-

ञ्श्रुत्वा राजन्पुनरपि भुजादण्डकण्डूतिभाजः ।

आलिङ्गन्त्यास्त्रिदशसुदृशो ब्रूलतां वीक्ष्य भुमां

चापभ्रान्त्या चपलमनसो हस्तमावर्तयन्ति ॥ ३४ ॥

मिलितमिहिरभासं मौलिमेतस्य दृष्ट्वा

परवरतनुपादालक्तकं तर्कयन्त्या ।

त्वदरिधरणिजानिर्भानुबिम्बेन गच्छ-

न्सुरनगरमृगाक्ष्या वीक्ष्यते साभ्यसूयम् ॥ ३५ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

कोदण्डस्तव हस्तगो हृदि वलत्यर्तिस्तु विद्वेषिणां

त्वं दाता रभसेन मार्गणगणस्तानेव संसेवते ।

वीरत्वं तु जयस्य मित्रमनिशं ते यान्ति वैकुण्ठतां

संग्रामे तव भूपते महदिदं चित्रं समालक्ष्यते ॥ ३६ ॥

(धरणीधरस्य)

को दण्डं न ददाति देव भवते कोदण्डमातन्वते

को नारातिमुपैति पारमुदधेः कोणारुणे लोचने ।

का कुञ्जान्तरमेत्य वैरितरुणीं काकुं न वा भाषते

राजन्गर्जति वारणे तव पुनः को वा रणे वर्तते ॥ ३७ ॥

(कस्यापि)

अथ रणः—

कृपाणकिरणानलं रुधिरनीरपूरच्छटा-

जटालतलसंकुलं भटतिमिङ्गिलैराकुलम् ।

प्रमथ्य समरणं चरमकर्षिं लक्ष्मीस्त्वया

विधारमदमन्थरं मथनमन्दरं सिन्धुरम् ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

भलैर्भिन्नाः प्रतिनृपतयः शङ्खनादानुदारा-

ञ्श्रुत्वा राजन्पुनरपि भुजादण्डकण्डूतिभाजः ।

आलिङ्गन्त्यास्त्रिदशसुदृशो ब्रूलतां वीक्ष्य भुमां

चापभ्रान्त्या चपलमनसो हस्तमावर्तयन्ति ॥ ३४ ॥

मिलितमिहिरभासं मौलिमेतस्य दृष्ट्वा

परवरतनुपादालक्तकं तर्कयन्त्या ।

त्वदरिधरणिजानिर्भानुबिम्बेन गच्छ-

न्सुरनगरमृगाक्ष्या वीक्ष्यते साभ्यसूयम् ॥ ३५ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

कोदण्डस्तव हस्तगो हृदि वलत्यर्तिस्तु विद्वेषिणां

त्वं दाता रभसेन मार्गणगणस्तानेव संसेवते ।

वीरत्वं तु जयस्य मित्रमनिशं ते यान्ति वैकुण्ठतां

संग्रामे तव भूपते महदिदं चित्रं समालक्ष्यते ॥ ३६ ॥

(धरणीधरस्य)

को दण्डं न ददाति देव भवते कोदण्डमातन्वते

को नारातिमुपैति पारमुदधेः कोणारुणे लोचने ।

का कुञ्जान्तरमेत्य वैरितरुणीं काकुं न वा भाषते

राजन्गर्जति वारणे तव पुनः को वा रणे वर्तते ॥ ३७ ॥

(कस्यापि)

संमूर्छितं संयुगसंप्रहारैः पश्यन्ति सुप्तप्रतिबुद्धकल्कम् ।
आत्मानमङ्केषु सुराङ्गनानां मन्दाकिनीमारुतवीजिताङ्गम् ॥ ३८ ॥

(वराहमिहिरस्य ?)

करवारिरुहेण संधुनाने तरवारिं नृपतौ मुकुन्ददेवे ।
रचयन्त्यमरावतीतरुण्यः प्रथमं काञ्चनपारिजातमालाः ॥ ३९ ॥
(गौडस्य)

परस्परेण क्षतयोः प्रहर्त्रोरुत्क्रान्तवायवोः समकालमेव ।
अमर्त्यभावेऽपि कयोश्चिदासीदेकाप्सरःप्रार्थितयोर्विवादः ॥ ४० ॥
(कालिदासस्य)

ते क्षत्रियाः कुण्डलिनो युवानः परस्परं सायकविक्षताङ्गाः ।
कुम्भेषु लम्भाः सुषुपुर्गजानां कुचेषु लम्भा इव कामिनीनाम् ॥ ४१ ॥
(व्यासस्य)

अथ रणभग्नेऽपदशा—

क्षत्रियस्योरसि क्षत्रं पृष्ठे ब्रह्म व्यवस्थितम् ।
तेन पृष्ठे न दातव्यं पृष्ठदो ब्रह्महा भवेत् ॥ ४२ ॥
(श्रीव्यासस्य)

यदि समरमपास्य नास्ति मृत्यो-
र्भयमिति युक्तमितोऽन्यतः प्रयातुम् ।
अथ मरणमवश्यमेव जन्तोः
किमिति मुधा मलिनं यशः क्रियेत ॥ ४३ ॥
(वेणीसंहारे)

अथ रणक्षितिः—

भवत्तुरगनिष्ठुरक्षुरदृढव्रणैराचिता
क्षणात्समरविच्युतप्रतिनृपालवेलाञ्छिता ।
इयं रणधरा भवद्विरददानधाराजलैः
किमु व्रणतलेऽर्पितं वसनपट्टमासिञ्चति ॥ ४४ ॥

संमूर्छितं संयुगसंप्रहारैः पश्यन्ति सुप्तप्रतिबुद्धकल्कम् ।
आत्मानमङ्गेषु सुराङ्गनानां मन्दाकिनीमारुतवीजिताङ्गम् ॥ ३८ ॥

(वराहमिहिरस्य ?)

करवारिरुहेण संधुनाने तरवारिं नृपतौ मुकुन्ददेवे ।
रचयन्त्यमरावतीतरुण्यः प्रथमं काञ्चनपारिजातमालाः ॥ ३९ ॥
(गौडस्य)

परस्परेण क्षतयोः प्रहर्त्रोरुत्क्रान्तवायवोः समकालमेव ।
अमर्त्यभावेऽपि कयोश्चिदासीदेकाप्सरःप्रार्थितयोर्विवादः ॥ ४० ॥
(कालिदासस्य)

ते क्षत्रियाः कुण्डलिनो युवानः परस्परं सायकविक्षताङ्गाः ।
कुम्भेषु लम्बाः सुषुपुर्गजानां कुचेषु लम्बा इव कामिनीनाम् ॥ ४१ ॥
(व्यासस्य)

अथ रणभग्नेऽपदशा—

क्षत्रियस्योरसि क्षत्रं पृष्ठे ब्रह्म व्यवस्थितम् ।
तेन पृष्ठे न दातव्यं पृष्ठदो ब्रह्महा भवेत् ॥ ४२ ॥
(श्रीव्यासस्य)

यदि समरमपास्य नास्ति मृत्यो-
र्भयमिति युक्तमितोऽन्यतः प्रयातुम् ।
अथ मरणमवश्यमेव जन्तोः
किमिति मुधा मलिनं यशः क्रियेत ॥ ४३ ॥
(वेणीसंहारे)

अथ रणक्षितिः—

भवत्तुरगनिष्ठुरक्षुरदृढव्रणैराचिता
क्षणात्समरविच्युतप्रतिनृपालवेलाञ्चिता ।
इयं रणधरा भवद्विरददानधाराजलैः
किमु व्रणतलेऽर्पितं वसनपट्टमासिञ्चति ॥ ४४ ॥

युष्मद्दोर्दण्डमण्डल्यवनमितरणच्चण्डकोदण्डदण्डो-

न्मुक्तेषु चिच्छन्नमूर्च्छत्यतिनृपतिभुजाखण्डमुण्डावकीर्णा ।

गायत्रृत्यत्प्रवेलेद्रजनिचरवधूदत्ततालैः करालै-

र्वेतालैरट्टहासप्रकटितदशनैर्युद्धभूर्भाति भीमा ॥ ४५ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

रक्तं नक्तंचरौघः पिवति वमति च ग्रस्तकुन्तः शकुन्तः

क्रव्यं नव्यं गृहीत्वा प्रणदति मुदितो मत्तवेतालबालः ।

क्रीडत्यव्रीडमस्मिन् रुधिरमधुवशात्पूतनानूतनाङ्गी

योगिन्यो मांसमेदः प्रमुदितमनसः शूरशक्तिं स्तुवन्ति ॥ ४६ ॥

(कस्यापि)

अन्योन्यास्फालभिन्नद्विपरुधिरवसामांसमस्तिष्कपङ्के

मग्नानां स्यन्दनानामुपरि कृतपदन्यासविक्रान्तपत्तौ ।

स्फीतासृक्पानगोष्ठीरसदशिवशिवातूर्यनृत्यत्कवन्धे

सङ्ग्रामैर्कार्णवान्तःपयसि विचरितुं पण्डिताः पाण्डुपुत्राः ॥ ४७ ॥

(वेणीसंहारे)

सृष्टाकृष्टासिपिष्टोत्कटकरटिघटाकुम्भकूटावदान्त-

निष्ठचूतासृक्तटिन्यास्तटनिकटरणत्कौणपाट्टाट्टहासाः ।

श्रीभोज त्वद्रणक्षमाक्षतभटविकटोरःस्थलत्रोटकुप्य-

द्वध्रौघत्रोटिकोटिप्रकटचटचटाशब्दरौद्रोऽभवद्वाक् ॥ ४८ ॥

(देवेश्वरस्य)

अथारिपलायनम्—

तादृग्दण्डविवर्तेनर्तितमहीचक्रादपाक्रामिताः

क्वापि क्वापि च कण्टकैरुपगता रेखोपरेखाक्रमम् ।

यस्य प्रौढतरप्रतापदहनज्वालाभिरन्ते दिशा-

मापाके निपतन्ति पार्थिवभटाः शीर्यन्ति जीर्यन्ति च ॥ ४९ ॥

त्वदरिणृपतिमाशावाससंधूलिधारा-

धवलमहद् भिक्षुं वीक्ष्य भर्गभ्रमेण ।

युष्मद्दोर्दण्डमण्डल्यवनमितरणच्चण्डकोदण्डदण्डो-

न्मुक्तेषु चिच्छन्नमूर्च्छत्यतिनृपतिभुजाखण्डमुण्डावकीर्णा ।

गायन्त्यत्प्रवेष्टद्रजनिचरवधूदत्ततालैः करालै-

र्वैतालैरदृहासप्रकटितदशनैर्युद्धभूर्भाति भीमा ॥ ४५ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

रक्तं नक्तंचरौघः पिबति वमति च अस्तकुन्तः शकुन्तः

क्रव्यं नव्यं गृहीत्वा प्रणदति मुदितो मत्तवेतालबालः ।

क्रीडत्यव्रीडमस्मिन् रुधिरमधुवशात्पूतनानूतनाङ्गी

योगिन्यो मांसमेदःप्रमुदितमनसः शूरशक्तिं स्तुवन्ति ॥ ४६ ॥

(कस्यापि)

अन्योन्यास्फालभिन्नद्विपरुधिरवसामांसमस्तिष्कपक्के

मग्नानां स्यन्दनानामुपरि कृतपदन्यासविक्रान्तपत्तौ ।

स्फीतासृक्पानगोष्ठीरसदशिवशिवातूर्यनृत्यत्कवन्धे

सङ्ग्रामैकार्णवान्तःपयसि विचरितुं पण्डिताः पाण्डुपुत्राः ॥ ४७ ॥

(वेणीसंहारे)

सृष्टाकृष्टासिपिष्टोत्कटकरटिघटाकुम्भकूटावटान्त-

र्निष्ठचूतासृक्कटिन्यास्तटनिकटरणकौणपाट्टादृहासाः ।

श्रीभोज त्वद्रणक्षमाक्षतभटविकटोरःस्थलत्रोटकुप्य-

द्रुध्रौघत्रोटिकोटिप्रकटचटचटाशब्दरौद्रोऽभवद्वाक् ॥ ४८ ॥

(देवेश्वरस्य)

अथारिपलायनम्—

तादृग्दण्डविवर्तनर्तितमहीचक्रादपाक्रामिताः

क्वापि क्वापि च कण्टकैरुपगता रेखोपरेखाक्रमम् ।

यस्य प्रौढतरप्रतापदहनज्वालाभिरन्ते दिशा-

मापाके निपतन्ति पार्थिवभटाः शीर्यन्ति जीर्यन्ति च ॥ ४९ ॥

त्वदरिन्पतिमाशावाससंधूलिधारा-

धवलमहह भिक्षुं वीक्ष्य भर्गभ्रमेण ।

सुरभिरुदधिवेलाकाननं गाहमानो
दिशति कुसुमबाणं दूरतो निर्गमाय ॥ ५० ॥
(भानुकरस्यैतौ)

नालिङ्गन्ति पयोधरौ भवदिभप्रोतुङ्गकुम्भस्थल-
भ्रान्त्या वेणिलतासु नैव दधति प्रीतिं तवासिभ्रमात् ।
भ्रूभङ्गान्भवदीयदुर्धरधनुर्भ्रान्त्या भजन्ते न ते
वैरिक्षोणिभुजो निजाम्बुजदृशां भूमण्डलाखण्डल ॥ ५१ ॥
(कस्यापि)

क्षणं कान्तारागप्रसरविलसन्मानसरुचिः
क्षणं शैलोत्सङ्गे द्विजकुलरवाकृष्टहृदयः ।
क्षणं पत्रध्वानश्रुतिपुलकितो यद्वयभरा-
द्धसन्प्राप्तोऽरण्ये रिपुरवनिपालस्थितिमिव ॥ ५२ ॥
(वैद्यमानोः)

राजन् द्विषस्ते भयविद्रुतस्य भालस्थलं कण्टकिनो वनान्ताः ।
अद्यापि किं वानुभवप्यतीति व्यपाटयन्द्रष्टुमिवाक्षराणि ॥ ५३ ॥
(कस्यापि)

द्वारं खड्गभिरावृतं बहिरपि प्रक्लिन्नगण्डैर्गजै-
रन्तः कञ्चुकिभिः स्फुरन्मणिशिखैरध्यासिता भूमयः ।
आक्रान्तं महिषीभिरेव शयनं त्वद्विद्विषां मन्दिरे
राजन् कर्ण चिरंतनप्रणयिनी शून्येऽपि सैव स्थितिः ॥ ५४ ॥
(कस्यापि)

अथारिनारी—

समस्तावनीनाथमौले भवत्तः परास्तद्विषः पद्मविस्तारिनेत्रा ।
नितान्तं विहस्ता स्वहस्तारविन्दैर्विधत्ते पुरस्तादुरस्ताडनानि ॥ ५५ ॥
स्फुटतरमटवीनां प्रान्तरे पर्यटन्ती
हरिहतगजकुम्भोन्मुक्तमुक्ताफलानि ॥

सुरभिरुदधिवेलाकाननं गाहमानो
दिशति कुसुमबाणं दूरतो निर्गमाय ॥ ५० ॥
(भानुकरस्यैतौ)

नालिङ्गन्ति पयोधरौ भवदिभप्रोतुङ्गकुम्भस्थल-
भ्रान्त्या वेणिलतासु नैव दधति प्रीतिं तवासिभ्रमात् ।
भ्रूभङ्गान्भवदीयदुर्धरधनुर्भ्रान्त्या भजन्ते न ते
वैरिक्षोणिभुजो निजाम्बुजदृशां भूमण्डलाखण्डल ॥ ५१ ॥
(कस्यापि)

क्षणं कान्तारागप्रसरविलसन्मानसरुचिः
क्षणं शैलोत्सङ्गे द्विजकुलरवाकृष्टहृदयः ।
क्षणं पत्रध्वानश्रुतिपुलकितो यद्वयभरा-
द्धसन्प्राप्तोऽरण्ये रिपुरवनिपालस्थितिमिव ॥ ५२ ॥
(वैद्यमानोः)

राजन् द्विषस्ते भयविद्रुतस्य भालस्थलं कण्टकिनो वनान्ताः ।
अद्यापि किं वानुभविष्यतीति व्यपाटयन्द्रष्टुमिवाक्षराणि ॥ ५३ ॥
(कस्यापि)

द्वारं खड्गभिरावृतं बहिरपि प्रक्लिन्नगण्डैर्गजै-
रन्तः कञ्चुकिभिः स्फुरन्मणिशिखैरध्यासिता भूमयः ।
आक्रान्तं महिषीभिरेव शयनं त्वद्विद्विषां मन्दिरे
राजन् कर्ण चिरंतनप्रणयिनी शून्येऽपि सैव स्थितिः ॥ ५४ ॥
(कस्यापि)

अथारिनारी—

समस्तावनीनाथमौले भवत्तः परास्तद्विषः पद्मविस्तारिनेत्रा ।
नितान्तं विहस्ता स्वहस्तारविन्दैर्विधत्ते पुरस्तादुरस्ताडनानि ॥ ५५ ॥
स्फुटतरमटवीनां प्रान्तरे पर्यटन्ती
हरिहतगजकुम्भोन्मुक्तमुक्ताफलानि ॥

परिकल(र)यति हस्ताम्भोजशोणप्रभाभिः

परिहरति च दूरान्मञ्जुगुञ्जाभ्रमेण ॥ ५६ ॥

क्षोणीपाल त्वदरिहरिणीलोचना शोचमाना

गुञ्जाहारं कुचकलशयोर्निःश्वसन्ती करोति ।

क्षुब्धक्षीराम्बुधिलहरिसंशोभिर्भुज्युष्मद्यशोभि-

गौरं मुक्ताफलमयमिवाविन्दते नन्दते च ॥ ५७ ॥

(लक्ष्मणस्यैते)

धीरसिंहारिनारीणामञ्जनाक्ताश्रुबिन्दवः ।

उरोजे पतिता रेजुः सरोजे मधुपा इव ॥ ५८ ॥

(कस्यापि)

मुखे हारावाप्तिर्नयनयुगले कङ्कणभरो

नितम्बे पत्राली सतिलकमभूत्पाणियुगलम् ।

अरण्ये श्रीकर्ण त्वदरियुवतीनां विधिवशा-

दपूर्वोऽयं भूषाविधिरहह जातः किमधुना ॥ ५९ ॥

(कस्यापि)

कुरुवक कुचाघातक्रीडासुखेन वियुज्यसे

बकुलविटपिन् सर्तव्यं ते मुखासवसेचनम् ।

चरणघटनाबन्धो यास्यस्यशोक सशोकता-

मिति निजपुरत्यागे यस्य द्विषां जगदुःस्त्रियः ॥ ६० ॥

(रत्नाकरस्य)

घ्रातं तालफलाशया स्तनतटं बिम्बभ्रमेणाधरो

दष्टः पाकविदीर्णदाडिमधियालीढाः स्फुरन्तो रदाः ।

आम्यन्ती भ्रमनिस्पृहानुविपिनं त्वद्वैरिसीमन्तिनी

निद्राणा मुहुराहता मुहुरपि क्षिप्ता च शाखामृगैः ॥ ६१ ॥

(कस्यापि)

परिकल(र)यति हस्ताम्भोजशोणप्रभाभिः

परिहरति च दूरान्मञ्जुगुञ्जाभ्रमेण ॥ ५६ ॥

क्षोणीपाल त्वदरिहरिणीलोचना शोचमाना

गुञ्जाहारं कुचकलशयोर्निःश्वसन्ती करोति ।

क्षुब्धक्षीराम्बुधिलहरिसंशोभिर्युष्मद्यशोभि-

गौरं मुक्ताफलमयमिवाविन्दते नन्दते च ॥ ५७ ॥

(लक्ष्मणस्यैते)

धीरसिंहारिनारीणामञ्जनाक्ताश्रुबिन्दवः ।

उरोजे पतिता रेजुः सरोजे मधुपा इव ॥ ५८ ॥

(कस्यापि)

मुखे हारावाप्तिर्नयनयुगले कङ्कणभरो

नितम्बे पत्राली सतिलकमभूत्पाणियुगलम् ।

अरण्ये श्रीकर्ण त्वदरियुवतीनां विधिवशा-

दपूर्वोऽयं भूषाविधिरहह जातः किमधुना ॥ ५९ ॥

(कस्यापि)

कुरुवंक कुचाघातक्रीडासुखेन वियुज्यसे

बकुलविटपिन् स्मर्तव्यं ते मुखासवसेचनम् ।

चरणघटनाबन्धो यास्यस्यशोक सशोकता-

मिति निजपुरत्यागे यस्य द्विषां जगदुः स्त्रियः ॥ ६० ॥

(रत्नाकरस्य)

घातं तालफलाशया स्तनतटं बिम्बभ्रमेणाधरो

दष्टः पाकविदीर्णदाडिमधियालीढाः स्फुरन्तो रदाः ।

भ्राम्यन्ती भ्रमनिस्पृहानुविपिनं त्वद्वैरिसीमन्तिनी

निद्राणा मुहुराहता मुहुरपि क्षिप्ता च शाखामृगैः ॥ ६१ ॥

(कस्यापि)

इतस्त्रसद्विद्रुतभूभृदुज्जिता प्रियाथ दृष्टा वनमानवीजनैः ।

शशंस पृष्टाद्भुतमात्मदेशजं शैशित्विषः शीतलशीलतां किल ॥ ६२ ॥

(श्रीहर्षस्य)

प्रस्थानं रतिमन्दिरात्कमलिनीबन्धोरपि प्रेक्षणं

काकुः केलिविधिं विनापि चरणन्यासः पृथिव्यामपि ।

किं च क्लान्तमतालवृन्तपवनः प्रत्यङ्गमालिङ्गति

द्रष्टव्यं किमतोऽपि कृष्णनृपतेः प्रत्यर्थिवामभ्रुवाम् ॥ ६३ ॥

स्वप्नेन क्षितिपावतंस भवतो भीत्या व्रजन्ती वनं

निर्ममा प्रतिपक्षराजरमणी कलोलिनीपाथसि ।

उत्क्षिप्ताननमुन्नतभ्रु चरणव्यासक्तमुक्तालतं

भूयः स्फारितबाहुवलि शयनादुद्भ्रान्तमुत्तिष्ठति ॥ ६४ ॥

मौलिं मानविधिं विना नमयितुं हारं स्वयं गुम्फितुं

निर्यातुं दयितस्य पाणिकमलच्छायां विना वर्त्मनि ।

निद्रातुं च विनाङ्कपालिशयनं द्रष्टुं च शून्या दिशः

सख्या त्वत्प्रतिवीरनीरजमुखी साकूतमध्याप्यते ॥ ६५ ॥

अये मातस्तातः क्व गत इति यद्वैरिशिशुना

दरीगेहे लीना निभृतमिह पृष्टा स्वजननी ।

करेणास्यं तस्य द्रुतमथ निरुद्धचाश्रुभृतया

विनिःश्वस्य स्फारं शिव शिव दृशैवोत्तरयति ॥ ६६ ॥

(भानुकरस्यैते)

अथारिदम्पती—

अपर्णेयं भूभृद्वनमटति वल्काम्बरधरा

जटालो दिग्वासाः शिखरिणि शिवोऽयं निवसति ।

इति आन्त्यान्योन्यं क्षणमिलितयोः क्षोणितिलक

द्विषद्दम्पत्योस्ते शिव शिव भवन्ति प्रणतयः ॥ ६७ ॥

(कस्यापि)

इतस्त्रसद्विद्रुतभूभृदुज्झिता प्रियाथ दृष्टा वनमानवीजनैः ।

शशंस पृष्टाद्भुतमात्मदेशजं शैशित्विषः शीतलशीलतां किल ॥ ६२ ॥

(श्रीहर्षस्य)

प्रस्थानं रतिमन्दिरात्कमलिनीबन्धोरपि प्रेक्षणं

काकुः केलिविधिं विनापि चरणन्यासः पृथिव्यामपि ।

किं च क्लान्तमतालवृन्तपवनः प्रत्यङ्गमालिङ्गति

द्रष्टव्यं किमतोऽपि कृष्णनृपतेः प्रत्यर्थिवामभुवाम् ॥ ६३ ॥

खमेन क्षितिपावतंस भवतो भीत्या व्रजन्ती वनं

निर्मन्ना प्रतिपक्षराजरमणी कलोलिनीपाथसि ।

उत्क्षिप्ताननमुवतभु चरणव्यासक्तमुक्तालतं

भूयः स्फारितबाहुवलि शयनादुद्भ्रान्तमुत्तिष्ठति ॥ ६४ ॥

मौलिं मानविधिं विना नमयितुं हारं स्वयं गुम्फितुं

निर्यातुं दयितस्य पाणिकमलच्छायां विना वर्त्मनि ।

निद्रातुं च विनाङ्कपालिशयनं द्रष्टुं च शून्या दिशः

सरल्या त्वत्प्रतिवीरनीरजमुखी साकूतमध्याप्यते ॥ ६५ ॥

अये मातस्तातः क्व गत इति यद्वैरिशिशुना

दरीगेहे लीना निभृतमिह पृष्टा स्वजननी ।

करेणास्थं तस्य द्रुतमथ निरुद्धचाश्रुभृतया

विनिःश्वस्य स्फारं शिव शिव दृशैवोत्तरयति ॥ ६६ ॥

(भानुकरस्यैते)

अथारिदम्पती—

अपर्णेयं भूभृद्वनमटति वल्काम्बरधरा

जटालो दिग्वासाः शिखरिणि शिवोऽयं निवसति ।

इति आन्त्यान्योन्यं क्षणमिलितयोः क्षोणितिलक

द्विषद्दम्पत्योस्ते शिव शिव भवन्ति प्रणतयः ॥ ६७ ॥

(कस्यापि)

अथारिनगरम्—

अलसभुजलताभिर्नादतो नागरीभि-
र्भवनदमनकानां नातिथिर्वा बभूव ।

त्वदरिनगरमध्ये संचरंश्चैत्रजन्मा

जरदजरपीतः क्षीयते गन्धवाहः ॥ ६८ ॥

त्वदरिनृपतिकेलीसौधसंरूढदूर्वा-

ङ्कुरकवलनलोलं वीक्ष्य रङ्गं सुधांशोः ।

उपवनहरिणीनामुन्नतभूलतानां

प्रसरति रतिजानिग्लानिजन्मा विवर्तः ॥ ६९ ॥

त्वद्वैरिभवनलिखितां सीतामार्तमुद्धृत्य ।

कौणपकपिमण्डलयोः शिव शिव भूयो भवन्ति संरम्भाः ७०

(भानुकरस्यैते)

अधाक्षीन्नो लङ्कामयमयमुदन्वन्तमतर-

द्विशल्यं सौमित्रेरयमुपनिनायौषधिवनम् ।

इति स्मारं स्मारं त्वदरिनगरीभित्तिलिखितं

हनूमन्तं दन्तैर्दशति कुपितो राक्षसगणः ॥ ७१ ॥

(कस्यापि)

त्वद्वैरिणो दूरपलायितस्य प्रकाशयन्नक्तमरण्यमार्गम् ।

कृशानुरासीदभिनन्दनीयस्तुङ्गेषु लम्बो निजमन्दिरेषु ॥ ७२ ॥

(कस्यापि)

स्नाताः प्रावृषि वारिवाहसलिलैः संरूढदूर्वाङ्कुर-

व्याजेनात्तकुशाः प्रणालसलिलैर्दत्त्वा निवापाञ्जलीन् ।

प्रासादास्तव विद्विषां परिपतत्कुड्यस्थिपिण्डच्छला-

त्कुर्वन्ति प्रतिवासरं निजपतिप्रेतेषु पिण्डक्रियाम् ॥ ७३ ॥

(हनूमतः)

हस्ती वन्यः स्फटिकघटिते भित्तिभागे स्वविम्बं

दृष्ट्वा दृष्ट्वा प्रतिगज इव त्वद्विषां मन्दिरेषु ।

अथारिनगरम्—

अलसमुज्जलताभिर्नादतो नागरीभि-
 र्भवनदमनकानां नातिथिर्वा बभूव ।
 त्वदरिनगरमध्ये संचरंश्चैत्रजन्मा
 जरदजगरपीतः क्षीयते गन्धवाहः ॥ ६८ ॥
 त्वदरिन्पतिकेलीसौधसंरूढदूर्वा-
 ङ्कुरकवलनलोलं वीक्ष्य रङ्गं सुधांशोः ।
 उपवनहरिणीनामुन्नतभ्रूलतानां
 प्रसरति रतिजानिग्लानिजन्मा विवर्तः ॥ ६९ ॥
 त्वद्वैरिभवनलिखितां सीतामाहर्तुमुद्धृत्य ।
 कौणपकपिमण्डलयोः शिव शिव भूयो भवन्ति संरम्भाः ७०
 (भानुकरस्यैते)
 अधाक्षीन्नो लङ्कामयमयमुदन्वन्तमतर-
 द्विशल्यं सौमित्रेरयमुपनिनायौषधिवनम् ।
 इति स्मारं स्मारं त्वदरिनगरीभित्तिलिखितं
 हनूमन्तं दन्तैर्दशति कुपितो राक्षसगणः ॥ ७१ ॥
 (कस्यापि)
 त्वद्वैरिणो दूरपलायितस्य प्रकाशयन्नक्तमरण्यमार्गम् ।
 कृशानुरासीदभिनन्दनीयस्तुङ्गेषु लम्बो निजमन्दिरेषु ॥ ७२ ॥
 (कस्यापि)
 स्नाताः प्रावृषि वारिवाहसलिलैः संरूढदूर्वाङ्कुर-
 व्याजेनात्तकुशाः प्रणालसलिलैर्दत्त्वा निवापाञ्जलीन् ।
 प्रासादास्तव विद्विषां परिपतत्कुड्यस्थिपिण्डच्छला-
 त्कुर्वन्ति प्रतिवासरं निजपतिप्रेतेषु पिण्डक्रियाम् ॥ ७३ ॥
 (हनूमतः)
 हस्ती वन्यः स्फटिकघटिते भित्तिभागे स्वविम्बं
 दृष्ट्वा दृष्ट्वा प्रतिगज इव त्वद्विषां मन्दिरेषु ।

दन्ताघातादलितदशनस्तं पुनर्वीक्ष्य सद्यो
मन्दं मन्दं स्पृशति करिणीशङ्कया विक्रमार्क ॥ ७४ ॥
(कस्यापि)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां तृतीयो व्यापारः ॥

चतुर्थो व्यापारः ।

अथ शृङ्गारः—

अथ शृङ्गारभृङ्गारसंभृताः पद्यरूपिणीः ।
व्यक्तीकुर्वे सुधाः सर्वे बुधाः संशीलयन्तु ताः ॥ १ ॥

अथ कामप्रभावः—

प्रतसायःपिण्डाविव किमपि संताप्य विशिखै-
र्यथा कल्पान्तेऽपि प्रविघटत एतौ नहि पुनः ।
तथा तौ देहौ यः सपदि शिवयोः संघटितवा-
नमुष्मै कामाय प्रतिनमत वामाय विबुधाः ॥ २ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ बालावर्णनम्—

किं कौमुदीः शशिकलाः सकला विचूर्ण्य
संयोज्य चामृतरसेन पुनः प्रयत्नात् ।
कामस्य घोरहरहुङ्कृतिदग्धमूर्तेः
संजीवनौषधिरियं विहिता विधात्रो ॥ ३ ॥
एकान्तसुन्दरविधानजडः क्व धाता
सर्वाङ्गकान्तिमधुरं क्वच रूपमस्याः ।
मन्ये महेश्वरभयान्मकरध्वजेन
प्राणार्थिना युवतिरूपमिदं गृहीतम् ॥ ४ ॥

(कस्याप्येतौ)

अदम्भा हि रम्भा विलक्षा च लक्ष्मीर्घृताची हिया चीरसंछादितास्या ।
अहो जायते मन्दवर्णाप्यपर्णा समाकर्ण्य तस्या गुणस्यैकदेशम् ॥ ५ ॥
(गदाधरस्य)

दन्ताघातादलितदशनस्तं पुनर्वीक्ष्य सद्यो
मन्दं मन्दं स्पृशति करिणीशङ्कया विक्रमार्क ॥ ७४ ॥
(कस्यापि)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां तृतीयो व्यापारः ॥

चतुर्थो व्यापारः ।

अथ शृङ्गारः—

अथ शृङ्गारभृङ्गारसंभृताः पद्यरूपिणीः ।
व्यक्तीकुर्वे सुधाः सर्वे बुधाः संशीलयन्तु ताः ॥ १ ॥

अथ कामप्रभावः—

प्रतप्तायःपिण्डाविव किमपि संताप्य विशिखै-
र्यथा कल्पान्तेऽपि प्रविघटत एतौ नहि पुनः ।
तथा तौ देहौ यः सपदि शिवयोः संघटितवा-
नमुष्मै कामाय प्रतिनमत वामाय विबुधाः ॥ २ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ बालावर्णनम्—

किं कौमुदीः शशिकलाः सकला विचूर्ण्य
संयोज्य चामृतरसेन पुनः प्रयत्नात् ।
कामस्य घोरहरहुङ्कृतिदग्धमूर्तेः
संजीवनौषधिरियं विहिता विधात्रां ॥ ३ ॥
एकान्तसुन्दरविधानजडः क्व धाता
सर्वाङ्गकान्तिमधुरं क्वच रूपमस्याः ।
मन्ये महेश्वरभयान्मकरध्वजेन
प्राणार्थिना युवतिरूपमिदं गृहीतम् ॥ ४ ॥

(कस्याप्येतौ)

अदम्भा हि रम्भा विलक्षा च लक्ष्मीर्घृताची ह्रिया चीरसंछादितास्या ।
अहो जायते मन्दवर्णाप्यपर्णा समाकर्ण्य तस्या गुणस्यैकदेशम् ॥ ५ ॥
(गदाधरस्य)

अथ वयःसन्धिः—

(सदृश्य)मानवदनस्मितलेशमीष-

न्मन्दायमानगतिरीतिपदारविन्दम् ।

अभ्यस्यमाननवविभ्रमशोभमेत-

दाहूयमानयुवमानससङ्गमस्याः ॥ ६ ॥

समुन्नमदुरःस्थलप्रसरमीषदालक्षित-

क्षणक्षणविलक्षणप्रचलदीक्षणावेक्षणम् ।

समुलसितविभ्रमादरदरभ्रमद्भूलतं

किमाचरितुमीहते वरतनोर्न जाने वयः ॥ ७ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

तव कुवल्याक्षि वक्षसि कुण्डलिता कापि काञ्चनी कान्तिः ।

कुसुमेषोर्विजिगीषोर्भवति भुजे भूयसी कण्डूः ॥ ८ ॥

रेखा काचन कज्जलस्य नयनाम्भोजे मिथः कौशला-

दालीभिः सरलीकृतापि कुटिलीभावं समालम्बते ।

लक्ष्या वक्षसि पाणिपद्मविषमस्पर्शोदयादुन्नति-

जानीमो वयमेणशावनयने बाल्यं न पाल्यं तव ॥ ९ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

न शीलं दृग्भङ्गी कलयति कुरङ्गीनयनयौः

कुचश्रीः कर्कन्धूफलमपि न बन्धूकृतवती ।

सुधायाः सध्रीची न च वचनवीची परिचिता

तथापि श्रीरस्या युवजननमस्या विजयते ॥ १० ॥

न दन्तुरसुरःस्थलं वचसि नाश्रिता चालुरी

विकारि न विलोकितं भ्रुवि न वक्रिमोपक्रमः ।

तथापि हरिणीदृशो वपुषि कापि कान्तिच्छटा

पटावृतमहामणिद्युतिरिवात्र संलक्ष्यते ॥ ११ ॥

(जयदेवस्य)

अथ वयःसन्धिः—

(सदृश्य)मानवदनस्मितलेशमीष-

न्मन्दायमानगतिरीतिपदारविन्दम् ।

अभ्यस्यमाननवविभ्रमशोभमेत-

दाह्यमानयुवमानससङ्गमस्याः ॥ ६ ॥

समुन्नमदुरःस्थलप्रसरमीषदालक्षित-

क्षणक्षणविलक्षणप्रचलदीक्षणावेक्षणम् ।

समुल्लसितविभ्रमादरदरभ्रमद्भूलतं

किमाचरितुमीहते वरतनोर्न जाने वयः ॥ ७ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

तव कुवल्याक्षि वक्षसि कुण्डलिता कापि काञ्चनी कान्तिः ।

कुसुमेषोर्विजिगीषोर्भवति भुजे भूयसी कण्डूः ॥ ८ ॥

रेखा काचन कज्जलस्य नयनाम्भोजे मिथः कौशला-

दालीभिः सरलीकृतापि कुटिलीभावं समालम्बते ।

लक्ष्या वक्षसि पाणिपद्मविषमस्पर्शोदयादुन्नति-

र्जनीमो वयमेणशावनयने बाल्यं न पाल्यं तव ॥ ९ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

न शीलं दृग्भङ्गी कलयति कुरङ्गीनयनयोः

कुचश्रीः कर्कन्धूफलमपि न बन्धूकृतवती ।

सुधायाः सध्रीची न च वचनवीची परिचिता

तथापि श्रीरस्या युवजननमस्या विजयते ॥ १० ॥

न दन्तुरसुरःस्थलं वचसि नाश्रिता चालुरी

विकारि न विलोकितं भ्रुवि न वक्रिमोपक्रमः ।

तथापि हरिणीदृशो वपुषि कापि कान्तिच्छटा

पटावृतमहामणिद्युतिरिवात्र संलक्ष्यते ॥ ११ ॥

(जयदेवस्य)

अचलं चलदिव चक्षुः प्रकृतमपीदं समुद्यदिव वक्षः ।
अतदिव तदपि शरीरं संप्रति वामश्रुवो जयति ॥ १२ ॥
(कस्यापि)

अथ तारुण्यम् ।

उदयति तरुणिमतरणौ शैशवशशिनि प्रशान्तिमायाते ।
कुचचक्रवाकयुगलं तरुणितटिन्यां मिथो मिलति ॥ १३ ॥
(कस्यचित्)

परिहरति वयो यथा यथास्याः स्फुरदुरुकन्दुकशालि बालभावम् ।
द्रढयति धनुषस्तथा तथा ज्यां स्पृशति शरानपि सज्जयन्मनोभूः ॥ १४ ॥
(त्रिविक्रमस्य)

प्रातःस्मेरसरोरुहामयमुपाध्यायो दृशोर्विभ्रमः

पाणिः कोकिलवाणि पल्लवसहाध्यायी समुन्मीलति ।

सन्दर्भो वचसां पचेलिमसुधासिद्धान्तवैतण्डिको

जानीमः कुसुमायुधस्य भगवान् भाग्यालये भार्गवः ॥ १५ ॥

वाणी कार्तिकरोहिणीपतिवलत्पीपूषकलोलिनी

धत्ते दृष्टिरकालकुन्दकलिकालावण्यलीलायितम् ।

नो जाने गमयिष्यतस्तव चिरादङ्गे दिनं केलिभिः

कस्य श्रीफलपीवरस्तनि भवेदेकादशस्थो गुरुः ॥ १६ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

उदञ्चद्रक्षोजद्वयतटभरक्षोभितकटि-

स्फुरद्दृग्म्यां मन्दीकृतविलसदिन्दीवरयुगम् ।

समुद्यद्भूभङ्गप्रविहितधनुर्भङ्गमनिशं

वयस्तत्पद्माक्ष्याः कथमिव मनो न व्यथयतु ॥ १७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ बालावयववर्णनम्—

तत्र केशपाशः—

आभाति शोभातिशयप्रपञ्चादेणीदृशोऽस्या रमणीयशोभा ।

अचलं चलदिव चक्षुः प्रकृतमपीदं समुद्यदिव वक्षः ।
अतदिव तदपि शरीरं संप्रति वामश्रुवो जयति ॥ १२ ॥
(कस्यापि)

अथ तारुण्यम् ।

उदयति तरुणिमतरणौ शैशवशशिनि प्रशान्तिमायाते ।
कुचचक्रवाकयुगलं तरुणितटिन्यां मिथो मिलति ॥ १३ ॥
(कस्यचित्)

परिहरति वयो यथा यथास्याः स्फुरदुरुकन्दुकशालि बालभावम् ।
द्रढयति धनुषस्तथा तथा ज्यां स्पृशति शरानपि सज्जयन्मनोभूः ॥ १४ ॥
(त्रिविक्रमस्य)

प्रातःस्मेरसरोरुहामयमुपाध्यायो दृशोर्विभ्रमः

पाणिः कोकिलवाणि पल्लवसहाध्यायी समुन्मीलति ।

सन्दर्भो वचसां पचेलिमसुधासिद्धान्तवैतण्डिको

जानीमः कुसुमायुधस्य भगवान् भाग्यालये भार्गवः ॥ १५ ॥

वाणी कार्तिकरोहिणीपतिवलत्पीपूषकलोलिनी

धत्ते दृष्टिरकालकुन्दकलिकालावण्यलीलायितम् ।

नो जाने गमयिष्यतस्तव चिरादङ्गे दिनं केलिभिः

कस्य श्रीफलपीवरस्तनि भवेदेकादशस्थो गुरुः ॥ १६ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

उदञ्चद्रक्षोजद्वयतटभरक्षोभितकटि-

स्फुरद्दृग्म्यां मन्दीकृतविलसदिन्दीवरयुगम् ।

समुद्यद्भूभङ्गप्रविहितधनुर्भङ्गमनिशं

वयस्तत्पद्माक्ष्याः कथमिव मनो न व्यथयतु ॥ १७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ बालावयववर्णनम्—

तत्र केशपाशः—

आभाति शोभातिशयप्रपञ्चादेणीदृशोऽस्या रमणीयशोभा ।

वेणी लसत्कुन्तलधोरणीनां श्रेणीव किं चारुहरिन्मणीनाम् ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

आभुग्नाङ्गुलिपलवौ कचभरे व्यापारयन्ती करौ
बन्धोत्कर्षनिबद्धमानसतया शून्यां दधाना दृशम् ।
बाहूत्क्षेपसमुन्नते कुचतटे पर्यस्तचोलांशुका
ह्रीसंकोचितबाहुमूलसुभगं बध्नाति जूटीं बधूः ॥ १९ ॥
(कस्यापि)

अथ सीमन्तसिन्दूरम्—

अये मातर्दृष्ट्वा मुखममृतभानुभ्रमवशा-
त्कचच्छद्मा राहुर्वसति किमु तृष्णातरलितः ।
किमेवं कन्दर्पान्तकतरुणि सिन्दूरसरणि-
च्छलाद्भोक्तुं भूयो बहिरिव रसज्ञां रचयति ॥ २० ॥
(भानुकरस्य)

अथ भालसिन्दूरम्—

यस्याः संयमवान्कचो मधुकरैरभ्यर्थ्यमानो मुहु-
र्भृङ्गीगोपनजाभिशापमचिरादुन्मार्ष्टुकामो निजम् ।
सीमन्तेन करेण कोमलरुचा सिन्दूरबिन्दुच्छला-
दातसायसपिण्डमण्डलमसावादातुमाकाङ्क्षति ॥ २१ ॥
(गणपतेः)

अथालकः—

भालस्थली चन्द्रकलाकलङ्कलेखासु संतक्ष्य ततो विमुक्ता ।
सैव क्रमात्कुण्डलिता कपाले यत्रालकानां श्रियमातनोति ॥ २२ ॥
(गणपतेः)

अथाननम्—

अस्यैव रम्भोरु तवाननस्य दृशैव संजीवितमन्मथस्य ।
वनं विधाता ननु नीरजानां नीराजनार्थं किमु निर्मिमीते ॥ २३ ॥

वेणी लसत्कुन्तलधोरणीनां श्रेणीव किं चारुहरिन्मणीनाम् ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

आभुग्नाङ्गुलिपलवौ कचभरे व्यापारयन्ती करौ
बन्धोत्कर्षनिबद्धमानसतया शून्यां दधाना दशम् ।
बाहूत्क्षेपसमुन्नते कुचतटे पर्यस्तचोलांशुका
ह्रीसंकोचितबाहुमूलसुभगं बध्नाति जूटीं बधूः ॥ १९ ॥
(कस्यापि)

अथ सीमन्तसिन्दूरम्—

अये मातर्दृष्ट्वा मुखममृतभानुभ्रमवशा-
त्कचच्छद्मा राहुर्वसति किमु तृष्णातरलितः ।
किमेवं कन्दर्पान्तकतरुणि सिन्दूरसरणि-
च्छलाद्भोक्तुं भूयो बहिरिव रसज्ञां रचयति ॥ २० ॥
(भानुकरस्य)

अथ भालसिन्दूरम्—

यस्याः संयमवान्कचो मधुकरैरभ्यर्थ्यमानो मुहु-
र्भृङ्गीगोपनजाभिशापमचिरादुन्मार्ष्टुकामो निजम् ।
सीमन्तेन करेण कोमलरुचा सिन्दूरबिन्दुच्छला-
दातसायसपिण्डमण्डलमसावादातुमाकाङ्क्षति ॥ २१ ॥
(गणपतेः)

अथालकः—

भालस्थली चन्द्रकलाकलङ्कलेखासु संतक्ष्य ततो विमुक्ता ।
सैव क्रमात्कुण्डलिता कपाले यत्रालकानां श्रियमातनोति ॥ २२ ॥
(गणपतेः)

अथाननम्—

अस्यैव रम्भोरु तवाननस्य दृशैव संजीवितमन्मथस्य ।
वनं विधाता ननु नीरजानां नीराजनार्थं किमु निर्मिमीते ॥ २३ ॥

पद्यरचना ।

अस्यामपूर्व इव कोऽपि कलङ्करिक्त-
श्चन्द्रोऽपरः किमुत तन्मकरध्वजेन ।

रोमावलीगुणमिलत्कुचमन्दरेण

निर्मथ्य नाभिजलधिं ध्रुवमुद्धृतः स्यात् ॥ २४ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

विना सायं कोऽयं समुदयति सौरभ्यसुभगः

किरङ्ग्योत्साधारामधिधरणि तारापरिवृढः ।

धनुर्धत्ते स्मारं तिरयति विहारं न तमसां

निरातङ्कः पङ्केरुहयुगलमङ्के नटयति ॥ २५ ॥

अथ भ्रुवौ—

स्मरकल्पद्रुमो बाले तव भाले द्विपत्रितः ।

पत्रयोरनयोश्छाया भ्रुवोर्व्याजादुदञ्चति ॥ २६ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

भ्रूरेखायुगलं भाति तस्याश्चपलचक्षुषः ।

पत्रद्वयीव हरिता नासावंशविनिर्गता ॥ २७ ॥

(बिह्मणस्य)

कर्णौ तावत्कुवलयदृशां लोचनाम्भोरुहाभ्या-

मभ्याक्रान्तौ कनकरुचिरो भालदेशोऽपि नेयः ।

इत्याशङ्काकुलितमनसा वेधसा कज्जलौघैः

सीमारेखा व्यरचि निबिडभ्रूलताकैतवेन ॥ २८ ॥

(गणपतेः)

अथ नयनम्[ने]—

नयनस्य तुलां चक्रे नलिनेन नतभ्रुवः ।

ऊने च नलिने भृङ्गमाषमे(व)[ष]विधिर्दधौ ॥ २९ ॥

(भानुकरस्य)

पद्यरचना ।

अस्यामपूर्व हव कोऽपि कलङ्करिक्त-
श्चन्द्रोऽपरः किमुत तन्मकरध्वजेन ।

रोमावलीगुणमिलत्कुचमन्दरेण

निर्मथ्य नाभिजलधिं ध्रुवमुद्धतः स्यात् ॥ २४ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

विना सायं कोऽयं समुदयति सौरभ्यसुभगः

किरञ्ज्योत्स्नाधारामधिधरणि तारापरिवृढः ।

धनुर्धत्ते स्मारं तिरयति विहारं न तमसां

निरातङ्कः पङ्केरुहयुगलमङ्के नटयति ॥ २५ ॥

अथ भ्रुवौ—

स्मरकल्पद्रुमो बाले तव भाले द्विपत्रितः ।

पत्रयोरनयोश्छाया भ्रुवोर्व्याजादुदञ्चति ॥ २६ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

भ्रूरेखायुगलं भाति तस्याश्चपलचक्षुषः ।

पत्रद्वयीव हरिता नासावंशविनिर्गता ॥ २७ ॥

(बिह्मणस्य)

कर्णौ तावत्कुवलयदृशां लोचनाम्भोरुहाभ्या-

मभ्याक्रान्तौ कनकरुचिरो भालदेशोऽपि नेयः ।

इत्याशङ्काकुलितमनसा वेधसा कज्जलौघैः

सीमारेखा व्यरचि निबिडभ्रूलताकैतवेन ॥ २८ ॥

(गणपतेः)

अथ नयनम्[ने]—

नयनस्य तुलां चक्रे नलिनेन नतभ्रुवः ।

ऊने च नलिने भृङ्गमाषमे(व)[ष]विधिर्दधौ ॥ २९ ॥

(भानुकरस्य)

नतभ्रुवो लोचनखञ्जरीटौ विहारमानङ्गमिहारभेते ।

कथं न सानन्दहृदो युवानस्तारुण्यमन्तर्निधिसुन्नयन्तु ॥ ३० ॥
(गणपतेः)

दृशौ किमस्याश्रुपलस्वभावे न दूरमाक्रम्य मिथो मिलेताम् ।

न चेत्कृतः स्यादनयोः प्रयाणे विघ्नं श्रवःकूपनिपातभीत्या ॥ ३१ ॥
(श्रीहर्षस्य)

अथापाङ्गः—

पिपासुरिव संचलन्निकटकर्णकूपीव....

ततः प्रतिवलन्पुनः श्रवणपाशभीतोऽभितः ।

तनोति तरलाकृतिस्तरलोचने संततं

गतागतकुतूहलं मुहुरपाङ्गरङ्कुस्तव ॥ ३२ ॥

क्वचित्कृष्णार्जुनगुणा क्वचित्कर्णान्तगामिनी ।

अपाङ्गश्रीस्तवाभाति सुभ्रु भारतगीरिव ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

यासां कटाक्षविशिखैः स्मरचौरेण ताडिताः ।

हृतचैतन्यसर्वस्वा मुह्यन्ते मुग्धकामुकाः ॥ ३४ ॥

(शार्ङ्गधरस्य)

वतंसनीलोत्पलषट्पदानां गीतामृतं श्रोतुमिवोत्तरङ्गौ ।

नतभ्रुवो लोचनकृष्णसारौ कर्णान्तिकं संततमाश्रयेते ॥ ३५ ॥

(गणपतेः)

अथ नासामौक्तिकम्—

तारापतेर्बिम्बमिव त्वदास्यं संभाव्य भूमीतलशालिनं किम् ।

नासाग्रमुक्ताफलकैतवेन तारापि काचिद्विहितावतारा ॥ ३६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

सुधामयोऽपि क्षयरोगशान्त्यै नासाग्रमुक्ताफलकच्छलेन ।

अनङ्गसंजीवनदृष्टशक्तिर्मुखाभृतं ते पिबतीव चन्द्रः ॥ ३७ ॥

(वैद्यनाथस्य)

नतभ्रुवो लोचनखञ्जरीटौ विहारमानङ्गमिहारभेते ।

कथं न सानन्दहृदो युवानस्तारुण्यमन्तर्निधिसुन्नयन्तु ॥ ३० ॥

(गणपतेः)

दृशौ किमस्याश्रुपलस्वभावे न दूरमाक्रम्य मिथो मिलेताम् ।

न चेत्कृतः स्यादनयोः प्रयाणे विघ्नं श्रवःकूपनिपातभीत्या ॥ ३१ ॥

(श्रीहर्षस्य)

अथापाङ्गः—

पिपासुरिव संचलन्निकटकणकूपीव....

ततः प्रतिवलन्पुनः श्रवणपाशभीतोऽभितः ।

तनोति तरलाकृतिस्तरललोचने संततं

गतागतकुतूहलं मुहुरपाङ्गरङ्कुस्तव ॥ ३२ ॥

क्वचित्कृष्णार्जुनगुणा क्वचित्कर्णान्तगामिनी ।

अपाङ्गश्रीस्तवाभाति सुभ्रु भारतगीरिव ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

यासां कटाक्षविशिखैः स्मरचौरेण ताडिताः ।

हृतचैतन्यसर्वस्वा मुह्यन्ते मुग्धकामुकाः ॥ ३४ ॥

(शार्ङ्गधरस्य)

वतंसनीलोत्पलषट्पदानां गीतामृतं श्रोतुमिवोत्तरङ्गौ ।

नतभ्रुवो लोचनकृष्णसारौ कर्णान्तिकं संततमाश्रयेते ॥ ३५ ॥

(गणपतेः)

अथ नासामौक्तिकम्—

तारापतेर्बिम्बमिव त्वदास्यं संभाव्य भूमीतलशालिनं किम् ।

नासाग्रमुक्ताफलकैतवेन तारापि काचिद्विहितावतारा ॥ ३६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

सुधामयोऽपि क्षयरोगशान्त्यै नासाग्रमुक्ताफलकच्छलेन ।

अनङ्गसंजीवनदृष्टशक्तिर्मुखाभृतं ते पिबतीव चन्द्रः ॥ ३७ ॥

(वैद्यनाथस्य)

अथ कर्णताटङ्कम्—

शशी हर्तुं लोभान्मुखकमलशोभां श्रुतितलं

सिधेवे सातङ्कस्तव तरुणि ताटङ्ककपटात् ।

तदन्तःपीयूषं निखिलमथ निक्षेपुमधरे

मनोजन्मा मुष्णन्मुहुरहह तुच्छं तमकरोत् ॥ ३८ ॥

(रामचन्द्रस्य)

ताटङ्कमस्यास्तरलेक्षणाया मुक्ताफलैश्चारुरुचं विधत्ते ।

मुखश्रिया चन्द्रमिवाभिभूय बन्दीकृतं तारकचक्रवालम् ॥ ३९ ॥

(बिह्णस्य)

अथाधरः—

तवैष विद्रुमच्छायो मरुमार्गं इवाधरः ।

करोति कस्य नो मुग्धे पिपासाकुलितं मनः ॥ ४० ॥

(कस्यापि)

अथ कण्ठः—

कण्ठस्य विदधे कान्तिं मुक्ताभरणता यथा ।

नास्य स्वभावरम्यस्य मुक्ताभरणता तथा ॥ ४१ ॥

(शकवृद्धेः)

मातङ्गकुम्भसंसर्गजातपातकशङ्कया ।

स्नातीव मुक्ताहारोऽस्याः स्फुरत्कान्तिजले गले ॥ ४२ ॥

(वैद्यमानोः)

अथ बाहू—

शब्दवद्विरलंकारैरुपेतमतिकोमलम् ।

सुवृत्तं काव्यवद्रेजे तद्बाहुलतिकाद्वयम् ॥ ४३ ॥

(शकवृद्धेः)

दयिताबाहुपाशस्य कुतोऽयमपरो विधिः ।

जीवयत्यर्पितः कण्ठे मारयत्यपवर्जितः ॥ ४४ ॥

(भासस्य)

अथ कर्णताटङ्कम्—

शशी हर्तुं लोभान्मुखकमलशोभां श्रुतितलं
सिषेवे सातङ्कस्तव तरुणि ताटङ्ककपटात् ।
तदन्तःपीयूषं निखिलमथ निक्षेप्तुमधरे
मनोजन्मा मुष्णन्मुहुरहह तुच्छं तमकरोत् ॥ ३८ ॥
(रामचन्द्रस्य)

ताटङ्कमस्यास्तरलेक्षणाया मुक्ताफलैश्चारुरुचं विधत्ते ।
मुखश्रिया चन्द्रमिवाभिभूय बन्दीकृतं तारकचक्रवालम् ॥ ३९ ॥
(बिह्णस्य)

अथाधरः—

तवैष विद्रुमच्छायो मरुमार्ग इवाधरः ।
करोति कस्य नो मुग्धे पिपासाकुलितं मनः ॥ ४० ॥
(कस्यापि)

अथ कण्ठः—

कण्ठस्य विदधे कान्ति मुक्ताभरणता यथा ।
नास्य स्वभावरम्यस्य मुक्ताभरणता तथा ॥ ४१ ॥
(शकवृद्धेः)

मातङ्गकुम्भसंसर्गजातपातकशङ्कया ।
स्नातीव मुक्ताहारोऽस्याः स्फुरत्कान्तिजले गले ॥ ४२ ॥
(वैद्यमानोः)

अथ बाहू—

शब्दवद्विरलंकारैरुपेतमतिकोमलम् ।
सुवृत्तं काव्यवद्रेजे तद्बाहुलतिकाद्वयम् ॥ ४३ ॥
(शकवृद्धेः)

दयिताबाहुपाशस्य कुतोऽयमपरो विधिः ।
जीवयत्यर्पितः कण्ठे मारयत्यपवर्जितः ॥ ४४ ॥
(भासस्य)

अथाङ्गुल्यः—

सुदीर्घरेखाशालिन्यो बहुपर्वमनोहराः ।

तस्या विरेजुरङ्गुल्यः कामिनां संकथा इव ॥ ४५ ॥

(शकवृद्धेः)

अथ स्तनौ—

तवोपकण्ठस्थिततारहारस्फुरत्प्रभाशैवलिनीजलेषु ।

लीनो मनोजद्विप एव तस्य व्यक्तौ तु गण्डौ किमुरोजपिण्डौ ॥ ४६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

सतां समालोकयतां विवेकान्हवींषि हुत्वा स्मरबाणवह्नौ ।

धत्ते स्तनश्यामशिरोभिषेण तनूदरी त्र्यायुषभस्मबिन्दुम् ॥ ४७ ॥

(भानुकरस्य)

मध्योऽयं बलिसन्न दृष्टिरधिकं पृथ्वी सुपर्वालयो

बाहुस्तत्कमलेक्षणा त्रिजगतीमेकैव संरक्षति ।

इत्येवं स्तनयोर्मिषेण कनकक्षोणीभृता संभृतौ

यस्यामात्मकिशोरकौ पविभयव्यग्रेण(जृ)[ज]म्भद्विषः ॥ ४८ ॥

(गणपतेः)

अथ हारः—

सारङ्गाक्ष्या कुचकलशयोरन्तराकाशदेशः

प्रासच्छेदः कचिदपि चलन्प्रस्खलन्निष्पपात ।

नाभीकूपः समजनि ततस्तस्य देहच्युतासौ

नक्षत्राणां ततिरिव समालम्बते हारशोभाम् ॥ ४९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ मध्यः—

नूनं कलत्रात्किमुपद्रुतोऽयं दीनः कचिल्लीन इवास्त मध्यः ।

तत्राप्सरःसंनिभया च नाभ्या दूनस्ततोऽन्तर्हित एव सद्यः ॥ ५० ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथाङ्गुल्यः—

सुदीर्घरेखाशालिन्यो बहुपर्वमनोहराः ।

तस्या विरेजुरङ्गुल्यः कामिनां संकथा इव ॥ ४५ ॥

(शकवृद्धेः)

अथ स्तनौ—

तवोपकण्ठस्थिततारहारस्फुरत्प्रभाशैवलिनीजलेषु ।

लीनो मनोजद्विप एव तस्य व्यक्तौ तु गण्डौ किमुरोजपिण्डौ ॥ ४६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

सतां समालोकयतां विवेकान्हवींषि हुत्वा स्मरबाणवह्नौ ।

धत्ते स्तनश्यामशिरोमिषेण तनूदरी त्र्यायुषभस्मबिन्दुम् ॥ ४७ ॥

(भानुकरस्य)

मध्योऽयं बलिसन्न दृष्टिरधिकं पृथ्वी सुपर्वालयो

बाहुस्तत्कमलेक्षणा त्रिजगतीमेकैव संरक्षति ।

इत्येवं स्तनयोर्मिषेण कनकक्षोणीभृता संभृतौ

यस्यामात्मकिशोरकौ पविभयव्यग्रेण(जृ)[ज]म्भद्विषः ॥ ४८ ॥

(गणपतेः)

अथ हारः—

सारङ्गाक्ष्या कुचकलशयोरन्तराकाशदेशः

प्राप्तच्छेदः कचिदपि चलन्प्रस्वलन्निष्पपात ।

नाभीकूपः समजनि ततस्तस्य देहच्युतासौ

नक्षत्राणां ततिरिव समालम्बते हारशोभाम् ॥ ४९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ मध्यः—

नूनं कलत्रात्किमुपद्रुतोऽयं दीनः कचिलीन इवास्त मध्यः ।

तत्रापसरःसंनिभया च नाभ्या दूनस्ततोऽन्तर्हित एव सद्यः ॥ ५० ॥

(लक्ष्मणस्य)

देहं हेमद्युति परिहृताम्भोजवृष्टिं च दृष्टिं
 राशीभूतभ्रमरपटलीचारुवेशं च केशम् ।
 दृष्ट्वा सद्यो विपुलहृदयानन्दमूढेन धात्रा
 सारङ्गाक्ष्याः किमु रचयितुं विस्मृतो मध्यदेशः ॥ ५१ ॥
 तुङ्गाभोगे स्तनगिरियुगे प्रौढबिम्बे नितम्बे
 सीमादेशं हरति नृपतौ यौवने नृम्भमाणे ।
 मध्यो भीरुः कचिदपि ययौ पद्मपत्रेक्षणायाः
 शून्यं मध्यस्थलमिति ततः सर्वतः किंवदन्ती ॥ ५२ ॥
 (भानुकरस्यैतौ)

बध्वा वयो मां त्रिवलीगुणेन गृह्णाति रोमावलिचेत्रवल्लीम् ।
 इतीव चिन्ताभरभङ्गुरोऽयं मध्यो मृगाक्ष्याः कृशतामुपैति ॥ ५३ ॥
 तस्या मुखेन्दोरवलोकनेन कराम्बुजं कुम्भलितं विधातुः ।
 मध्यस्तदन्तर्गमनादिवासौ कृशाङ्गयष्टेः कशिमानमाप ॥ ५४ ॥
 (द्वौ गणपतेः)

अथ रोमावली—

बाले तवोरोजसुवेलशैलं गन्तानुवेलं किमु कामरामः ।
 लावण्यपूरे तव सिन्धुनीरे रोमालिरस्यैव किमालि बन्धः ॥ ५५ ॥
 संलक्ष्यते संप्रति पक्ष्मलाक्षि क्षामा तवेयं नवरोमराजिः ।
 किं बालभावश्रिय एव नूनं निराकृताया इव बाष्पराजिः ॥ ५६ ॥
 (लक्ष्मणस्यैतौ)

गम्भीरनाभीहृदसंनिधाने रराज तन्वी नवरोमराजिः ।
 मुखेन्दुभीतस्तनचक्रवाकचञ्चुच्युता शैवलमञ्जरीव ॥ ५७ ॥
 (लक्ष्मीधरस्य)

हरक्रोधज्वालावलिभिरवलीढेन वपुषा
 गभीरे ते नाभीसरसि कृतझम्पो मनसिजः ।

देहं हेमद्युति परिहृताम्भोजवृष्टिं च दृष्टिं
 राशीभूतभ्रमरपटलीचारुवेशं च केशम् ।
 दृष्ट्वा सद्यो विपुलहृदयानन्दमूढेन धात्रा
 सारङ्गाक्ष्याः किमु रचयितुं विस्मृतो मध्यदेशः ॥ ५१ ॥
 तुङ्गाभोगे स्तनगिरियुगे प्रौढबिम्बे नितम्बे
 सीमादेशं हरति नृपतौ यौवने जृम्भमाणे ।
 मध्यो भीरुः क्वचिदपि ययौ पद्मपत्रेक्षणायाः
 शून्यं मध्यस्थलमिति ततः सर्वतः किंवदन्ती ॥ ५२ ॥
 (भानुकरस्यैतौ)

बध्वा वयो मां त्रिवलीगुणेन गृह्णाति रोमावलिचेत्रवल्लीम् ।
 इतीव चिन्ताभरभङ्गुरोऽयं मध्यो मृगाक्ष्याः कृशतामुपैति ॥ ५३ ॥
 तस्या मुखेन्दोरवलोकनेन कराम्बुजं कुम्भलितं विधातुः ।
 मध्यस्तदन्तर्गमनादिवासौ कृशाङ्गयष्टेः कशिमानमाप ॥ ५४ ॥
 (द्वौ गणपतेः)

अथ रोमावली—

बाले तवोरोजसुवेलशैलं गन्तानुवेलं किमु कामरामः ।
 लावण्यपूरे तव सिन्धुनीरे रोमालिरस्यैव किमालि बन्धः ॥ ५५ ॥
 संलक्ष्यते संप्रति पक्षमलाक्षि क्षामा तवेयं नवरोमराजिः ।
 किं बालभावश्रिय एव नूनं निराकृताया इव बाष्पराजिः ॥ ५६ ॥
 (लक्ष्मणस्यैतौ)

गम्भीरनाभीहृदसंनिधाने रराज तन्वी नवरोमराजिः ।
 मुखेन्दुभीतस्तनचक्रवाकचञ्चुच्युता शैवलमञ्जरीव ॥ ५७ ॥
 (लक्ष्मीधरस्य)

हरक्रोधज्वालावलिभिरवलीढेन वपुषा
 गम्भीरे ते नाभीसरसि कृतझम्पो मनसिजः ।

समुत्तस्थौ तस्मादचलतनये धूमलतिका

जनस्तां जानीते तव जननि रोमावलिरिति ॥ ५८ ॥

(शंकराचार्यस्य)

यूनां धैर्यतृणाङ्कुरं कवलयन्त्रीडाम्बुपूरं पिबन्

शृङ्गारो हरिणस्तव स्तनगिरेः सीमानमारोहति ।

नाभेः काचन तस्य निःसृतवती कस्तूरिकामालिका

रोमश्रेणिमहोत्सवं वितनुते कल्याणि जानीमहे ॥ ५९ ॥

निर्णेतव्यो मनसिजकलामन्त्रसिद्धान्तसारो

जेतव्या च त्रिदशसुदृशमङ्गलावण्यलक्ष्मीः ।

रोमश्रेणीलिखनसुभगं पत्रमादर्शयन्ती

पत्रालम्बं जगति कुरुते सुभ्रुवो यौवनश्रीः ॥ ६० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

पयोधरस्तावदयं समुन्नतो रसस्य वृष्टिः सविधे भविष्यति ।

अतः समुद्रच्छति नाभिरन्ध्रतो विसारि रोमालिपिपीलिकावलिः ॥ ६१ ॥

(गणपतेः)

अथ जघनम्—

तस्याः पद्मपलाशाक्ष्यास्तन्व्यास्तज्जघनं घनम् ।

दृष्टं सखीभिर्योभिस्ताः पुंभावं मनसा ययुः ॥ ६२ ॥

(वाल्मीकेः)

अथोरुः[रू]—

नूनमूरुद्वयं तस्या रम्भा चपलचक्षुषः ।

सूते यत्कीर्तिकर्पूरपूरं मदनभूपतेः ॥ ६३ ॥

(भानुकरस्य)

अथ पादौ—

अमूल्यस्य मम स्वर्णतुलाकोटिद्वयं कियत् ।

इति कोपादिवाताम्रं पादयुग्मं मृगीदृशः ॥ ६४ ॥

(विहङ्गस्य)

समुत्तस्थौ तस्मादचलतनये धूमलतिका

जनस्तां जानीते तव जननि रोमावलिरिति ॥ ५८ ॥

(शंकराचार्यस्य)

यूनां धैर्यतृणाङ्कुरं कवलयन्त्रीडाम्बुपूरं पिबन्

शृङ्गारो हरिणस्तव स्तनगिरेः सीमानमारोहति ।

नाभेः काचन तस्य निःसृतवती कस्तूरिकामालिका

रोमश्रेणिमहोत्सवं वितनुते कल्याणि जानीमहे ॥ ५९ ॥

निर्णेतव्यो मनसिजकलामन्त्रसिद्धान्तसारो

जेतव्या च त्रिदशसुदृशामङ्गलावण्यलक्ष्मीः ।

रोमश्रेणीलिखनसुभगं पत्रमादर्शयन्ती

पत्रालम्बं जगति कुरुते सुभ्रुवो यौवनश्रीः ॥ ६० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

पयोधरस्तावदयं समुन्नतो रसस्य वृष्टिः सविधे भविष्यति ।

अतः समुद्रच्छति नाभिरन्ध्रतो विसारि रोमालिपिपीलिकावलिः ॥ ६१ ॥

(गणपतेः)

अथ जघनम्—

तस्याः पद्मपलाशाक्ष्यास्तन्व्यास्तज्जघनं घनम् ।

दृष्टं सखीभिर्योभिस्ताः पुंभावं मनसा ययुः ॥ ६२ ॥

(वाल्मीकेः)

अथोरुः[रू]—

नूनमूरुद्वयं तस्या रम्भा चपलचक्षुषः ।

सूते यत्कीर्तिकर्पूरपूरं मदनभूपतेः ॥ ६३ ॥

(भानुकरस्य)

अथ पादौ—

अमूल्यस्य मम स्वर्णतुलाकोटिद्वयं कियत् ।

इति कोपादिवाताम्रं पादयुग्मं मृगीदृशः ॥ ६४ ॥

(विह्वलस्य)

अथेतस्ततो वर्णनम्—

जानीमो वयमासनस्य कमले तस्या मुखेन्दोस्त्विषा
 संकोचं समुपागते स भगवान्दुःस्थः सरोजासनः ।
 मुग्धं भ्रूलतिकायुगं विहितवान्वक्रे दृशौ सृष्टवान्
 मध्यं विस्मृतवान्कचं च कुटिलं बामभ्रुवः क्लृप्तवान् ॥ ६५ ॥
 जानीमो वदनं सरोरुहदृशो निर्माय पश्यन्मुहु-
 र्हृण्यत्कामकठोरपावकशिखासंतापितः पद्मभूः ।
 रम्भामूरुतटीं स्तनं रसघटीं पीयूषवीचीं वचो
 बाहू बालविसं करं किसलयं नाभीं सरो निर्ममे ॥ ६६ ॥
 व्याकोशकोकनदशोककरः करोऽयं
 खेलच्चकोरमदचोरमिदं च चक्षुः ।
 उन्निद्रविद्रुमरहस्यहरोऽधरोऽयं
 तत्स्यादरण्यमपि वश्यमवश्यमस्याः ॥ ६७ ॥

(भानुकरस्यैते)

इति श्रीआङ्कोतकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां

चतुर्थो व्यापारः ।

पञ्चमो व्यापारः ।

अथ विरहिणीवर्णनम्—

लसन्मल्लीमाल्यं मदनशरशल्यं हि मनुते
 सुपूरं कर्पूरं विमलमपि दूरं विकिरति ।
 परं तारं हारं पुनरुरसि भारं कलयति
 यदि प्राणान्बाला कलयति च हालाहलमिव ॥ १ ॥
 इयं धत्ते धीरे मलयजसमीरे न च मुदं
 न पद्मानां वृन्दे ललितमकरन्देऽपि रमते ।
 न वा सा सानन्दा भवति नवकुन्दावलिकुले
 तदेतस्या बाधाहरमपि समाधानमिह किम् ॥ २ ॥

अथेतस्ततो वर्णनम्—

जानीमो वयमासनस्य कमले तस्या मुखेन्दोस्त्विषा
 संकोचं समुपागते स भगवान्दुःस्थः सरोजासनः ।
 मुग्धं भ्रूलतिकायुगं विहितवान्वक्रे दृशौ सृष्टवान्
 मध्यं विस्मृतवान्कचं च कुटिलं वामभ्रुवः क्लृप्तवान् ॥ ६५ ॥
 जानीमो वदनं सरोरुहदृशो निर्माय पश्यन्मुहु-
 र्हृष्यत्कामकठोरपावकशिखासंतापितः पद्मभूः ।
 रम्भामूरुतटीं स्तनं रसघटीं पीयूषवीचीं वचो
 बाहू बालविसं करं किसलयं नाभीं सरो निर्ममे ॥ ६६ ॥
 व्याकोशकोकनदशोककरः करोऽयं
 खेलच्चकोरमदचोरमिदं च चक्षुः ।
 उन्निर्द्रविद्रुमरहस्यहरोऽधरोऽयं
 तत्स्यादरण्यमपि वश्यमवश्यमस्याः ॥ ६७ ॥
 (भानुकरस्यैते)

इति श्रीआङ्कोतकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां
 चतुर्थो व्यापारः ।

पञ्चमो व्यापारः ।

अथ विरहिणीवर्णनम्—

लसन्मल्लीमाल्यं मदनशरशल्यं हि मनुते
 सुपूरं कर्पूरं विमलमपि दूरं विकिरति ।
 परं तारं हारं पुनरुरसि भारं कलयति
 यदि प्राणान्बाला कलयति च हालाहलमिव ॥ १ ॥
 इयं धत्ते धीरे मलयजसमीरे न च मुदं
 न पद्मानां वृन्दे ललितमकरन्देऽपि रमते ।
 न वा सा सानन्दा भवति नवकुन्दावलिकुले
 तदेतस्या बाधाहरमपि समाधानमिह किम् ॥ २ ॥

स्थगयति नयनास्रं छद्मना धूमधूम्नं
 प्रथयति च नितान्तं काश्यमङ्गप्रकृत्या ।
 अहह विरहबाधां छादयत्यम्बुजाक्षी
 तदपि वदति साक्षी पाण्डुरो गण्डदेशः ॥ ३ ॥
 (लक्ष्मणस्यैते)

धनोऽयं चेदञ्चेदुपरि विकिरंश्चन्दनरसा-
 नुदारा नैहारी सरिदुरसि हारीभवति वा ।
 समन्तान्मार्णाली चिरमुपवनाली मिलति वा
 तदप्यस्यास्तापो हरिविरहजः किं विरमति ॥ ४ ॥
 चुलुकयसि चन्द्रदीधितिमविरलमश्रासि नूनमङ्गारान् ।
 अधिकतरमुष्णमनयोः किमिह चकोरावधारयसि ॥ ५ ॥
 (रामचन्द्रस्यैतौ)

उद्धूयेत तनूलतेति बिसिनीपत्रेण नो वीज्यते
 स्फोटः स्यादिति नाङ्गकं मलयजक्षोदाम्भसा सिच्यते ।
 स्यादस्यातिभरात्पराभव इति त्रासान्नवा पल्लवा-
 रोपो वक्षसि तत्कथं वरतनोर्बाधा समाधीयते[ताम्] ॥ ६ ॥
 (जयदेवस्य)

चित्राय त्वयि चिन्तिते स्मृतिभुवा सज्जीकृतं स्वं धनु-
 र्वर्तिं धर्तुमुपागतेऽङ्गुलियुगे बाणा गुणे योजिताः ।
 आरब्धे तव चित्रकर्मणि पुनस्तद्वाणभिन्ना सती
 भित्तिं द्रागवलम्ब्य सिंहलपते सा तत्र चित्रायते ॥ ७ ॥
 (कस्यापि)

परिम्लानं पीनस्तनजघनसंगादुभयत-
 स्तनोर्मध्यस्यान्तः परिमिलनमप्राप्य हरितम् ।
 इदं व्यस्तन्यस्तं श्लथभुजलताक्षेपवलनैः
 कृशाङ्गचाः संतापं वदति बिसिनीपत्रशयनम् ॥ ८ ॥
 (कालिदासस्य)

स्थगयति नयनास्रं छन्नना धूमधूमं
 प्रथयति च नितान्तं काश्यमङ्गप्रकृत्या ।
 अहह विरहबाधां छादयत्यम्बुजाक्षी
 तदपि वदति साक्षी पाण्डुरो गण्डदेशः ॥ ३ ॥

(लक्ष्मणस्यैते)

घनोऽयं चेदञ्चेदुपरि विकिरंश्चन्दनरसा-
 नुदारा नैहारी सरिदुरसि हारीभवति वा ।
 समन्तान्मार्णाली चिरमुपवनाली मिलति वा
 तदप्यस्यास्तापो हरिविरहजः किं विरमति ॥ ४ ॥
 चुलुकयसि चन्द्रदीधितिमविरलमश्रासि नूनमङ्गारान् ।
 अधिकतरमुष्णमनयोः किमिह चकोरावधारयसि ॥ ५ ॥

(रामचन्द्रस्यैतौ)

उद्भूयेत तनूलतेति बिसिनीपत्रेण नो वीज्यते
 स्फोटः स्यादिति नाङ्गकं मलयजक्षोदाम्भसा सिच्यते ।
 स्यादस्यातिभरात्पराभव इति त्रासान्नवा पल्लवा-
 रोपो वक्षसि तत्कथं वरतनोर्बाधा समाधीयते[ताम्] ॥ ६ ॥
 (जयदेवस्य)

चित्राय त्वयि चिन्तिते स्मृतिभुवा सज्जीकृतं स्वं धनु-
 र्वर्ति धर्तुमुपागतेऽङ्गुलियुगे बाणा गुणे योजिताः ।
 आरब्धे तव चित्रकर्मणि पुनस्तद्बाणभिन्ना सती
 भित्तिं द्रागवलम्ब्य सिंहलपते सा तत्र चित्रायते ॥ ७ ॥
 (कस्यापि)

परिम्लानं पीनस्तनजघनसंगादुभयत-
 स्तनोर्मध्यस्यान्तः परिमिलनमप्राप्य हरितम् ।
 इदं व्यस्तन्यस्तं श्लथभुजलताक्षेपवलनैः
 कृशाङ्ग्याः संतापं वदति बिसिनीपत्रशयनम् ॥ ८ ॥
 (कालिदासस्य)

व्यजनं व्यजनं जलं जलं घनसारो घनसार इत्यभूत् ।

अवरोधपुरेषु सुभ्रुवां कुररीणामिव कातरो ध्वनिः ॥ ९ ॥

(कस्यापि)

हन्तालि संतापनिवृत्तयेऽस्याः किं तालवृन्तं तरलीकरोषि ।

संताप एषोऽन्तरदाहहेतुर्नतभ्रुवो न व्यजनापनोद्यः ॥ १० ॥

(वाहिनीपतेः)

लतामूले लीनो हरिणपरिहीनो हिमकरः

स्खलन्मुक्ताकारा गलति जलधारा कुवल्यात् ।

धुनीते बन्धूकं तिलकुसुमजन्मापि पवनो

गृहद्वारे पुण्यं परिणमति कस्यापि कृतिनः ॥ ११ ॥

अधिदेहलि हन्त हेमवल्ली शरदिन्दुः सरसीरुहे शयानः ।

अधिलज्जनचञ्चु मौलिकाली फलितं कस्य सुजन्मनस्तपोभिः ॥ १२ ॥

(एतौ षाण्मासिकस्य)

धाटीश्चेतोभवनरपतौ कुर्वति क्रूरचापे

काञ्ची जाता कलकलवती कुन्तलो निष्पपात ।

अङ्गे तापज्वरपरिभवः प्रादुरासीदसीमो

लेभे कम्पावलिभिरतुलं चापलं चोलदेशः ॥ १३ ॥

शङ्के पङ्केरुहदलदृशो वीक्ष्य वेणीं विलम्भां

.....प्राप्त्यै शिव शिव घनं बन्धनं केशपाशः ।

वाग्वैदग्ध्यं वपुरुपचयं लास्यमास्येन्दुबिम्बं

चेतो धैर्यं नयनयुगलं चातुरीमुत्ससर्ज(?) ॥ १४ ॥

नयनोत्पलजलधारां दृष्ट्वा वारांनिधिभ्रान्त्या ।

वडवानल इव भगवान्भ्रमति तनौ कृशतनोस्तापः ॥ १५ ॥

लीनानसून्सरोरुहदृष्टेरन्वेष्टुमेष विषमेषु ।

अमति द्रागवपुरन्तः संतापं दीपमादाय ॥ १६ ॥

व्यजनं व्यजनं जलं जलं घनसारो घनसार इत्यभूत् ।
अवरोधपुरेषु सुभ्रुवां कुररीणामिव कातरो ध्वनिः ॥ ९ ॥

(कस्यापि)

हन्तालि संतापनिवृत्तयेऽस्याः किं तालवृन्तं तरलीकरोषि ।
संताप एषोऽन्तरदाहहेतुर्नतभ्रुवो न व्यजनापनोद्यः ॥ १० ॥
(वाहिनीपतेः)

लतामूले लीनो हरिणपरिहीनो हिमकरः
स्खलन्मुक्ताकारा गलति जलधारा कुवल्यात् ।
धुनीते बन्धूकं तिलकुसुमजन्मापि पवनो
गृहद्वारे पुण्यं परिणमति कस्यापि कृतिनः ॥ ११ ॥

अधिदेहलि हन्त हेमवल्ली शरदिन्दुः सरसीरुहे शयानः ।
अधिरञ्जनचञ्चु मौलिकाली फलितं कस्य सुजन्मनस्तपोभिः ॥ १२ ॥
(एतौ षाण्मासिकस्य)

धाटीश्चेतोभवनरपतौ कुर्वति कूरचापे
काञ्ची जाता कलकलवती कुन्तलो निष्पपात ।
अङ्गे तापज्वरपरिभवः प्रादुरासीदसीमो
लेभे कम्पावलिभिरतुलं चापलं चोलदेशः ॥ १३ ॥

शङ्के पङ्केरुहदलदृशो वीक्ष्य वेणीं विलम्बां
.....प्राप्त्यै शिव शिव घनं बन्धनं केशपाशः ।
वाग्वैदग्ध्यं वपुरुपचयं लास्यमास्येन्दुबिम्बं
चेतो धैर्यं नयनयुगलं चातुरीमुत्ससर्ज(?) ॥ १४ ॥

नयनोत्पलजलधारां दृष्ट्वा वारांनिधिभ्रान्त्या ।
वडवानल इव भगवान्भ्रमति तनौ कृशतनोस्तापः ॥ १५ ॥
लीनानसून्सरोरुहदृष्टेरन्वेष्टुमेष विषमेषुः ।
भ्रमति द्राग्वपुरन्तः संतापं दीपमादाय ॥ १६ ॥

चूडारत्नमपांनिधिर्यदि भवेच्चेत्कुण्डलं गण्डकी
 कावेरी यदि कङ्कणं यदि पुनर्त्रैवेयकं गौतमी ।
 मुक्तासृक् सुरनिम्नगा यदि यदि स्यान्मेखला नर्मदा
 कौशेयं यदि कौशिकी कृशतनोस्तापस्तदापैति वा ॥ १७ ॥
 जीवेन तुलितं प्रेम सखि मूढेन वेधसा ।
 लघुर्जीवो ययौ कण्ठं गुरु प्रेम हृदि स्थितम् ॥ १८ ॥
 (षडेते भानुकरस्य)

तस्यास्तनौ विरहताण्डवरङ्गभूमौ
 स्वेदोदबिन्दुकुसुमाञ्जलिमाविकीर्य ।

नान्दीं पपाठ पृथुवेपथुवेपमान-

काञ्चीलताकलरवैः स्मरसूत्रधारः ॥ १९ ॥

श्रीखण्डद्रवदीर्घिकापरिवृतप्रान्तासु निःशेषतः

प्रालेयाचलकन्दरासु विहितक्रीडासु मन्दानिलैः ।

माधीभिः क्षणदाभिरेव जनितं गण्डोपधानीभव-

चन्द्रं तल्पमपाकरिष्यति न वा संतापमेणीदृशः ॥ २० ॥

मदकलकृतान्तकासरखुरपुटनिर्धूतधूलिसंकाशम् ।

केतकरजो निवार्य सखि यदि कार्यं मम प्राणैः ॥ २१ ॥

जानीमस्तव गौरि चेतसि चिरं शंभुः समुज्जृम्भते

तापो नेत्रतनूनपादिव तनौ तीव्रः समुन्मीलति ।

अक्षणोरश्रुमिषेण गच्छति बहिर्गङ्गातरङ्गावलिः

पाण्डिन्नः कपटेन चन्द्रकलिकाकान्तिः समुन्मीलति ॥ २२ ॥

प्रियसखि न तथा पटीरपङ्क्तौ न च नलिनीदलमारुतोऽपि शीतः ।

शमयति मम देहदाहमेतं सपदि कथापि यथा नरेन्द्रसूनोः ॥ २३ ॥

(षडैते गणपतेः)

अथ स्मरोपालम्भः—

हृदयमाश्रयसे यदि मामकं ज्वलयसि त्वमनङ्ग तदेव किम् ।

स्वयमपि क्षणदग्धनिजेन्धनः क भवितासि हताश हुताशवत् ॥ २४ ॥

(श्रीहर्षस्य)

चूडारत्नमपांनिधिर्यदि भवेच्चेत्कुण्डलं गण्डकी
 कावेरी यदि कङ्कणं यदि पुनर्त्रैवेयकं गौतमी ।
 मुक्तासृक् सुरनिम्नगा यदि यदि स्यान्मेखला नर्मदा
 कौशेयं यदि कौशिकी कृशतनोस्तापस्तदापैति वा ॥ १७ ॥
 जीवेन तुलितं प्रेम सखि मूढेन वेधसा ।
 लघुर्जीवो ययौ कण्ठं गुरु प्रेम हृदि स्थितम् ॥ १८ ॥
 (षडेते भानुकरस्य)

तस्यास्तनौ विरहताण्डवरङ्गभूमौ
 स्वेदोदबिन्दुकुसुमाञ्जलिमाविकीर्य ।
 नान्दीं पपाठ पृथुवेपथुवेपमान-
 काञ्चीलताकलरवैः स्मरसूत्रधारः ॥ १९ ॥

श्रीखण्डद्रवदीर्घिकापरिवृतप्रान्तासु निःशेषतः
 प्रालेयाचलकन्दरासु विहितक्रीडासु मन्दानिलैः ।
 माघीभिः क्षणदाभिरेव जनितं गण्डोपधानीभव-
 चन्द्रं तल्पमपाकरिष्यति न वा संतापमेणीदृशः ॥ २० ॥

मदकलकृतान्तकासरखुरपुटनिर्धूतधूलिसंकाशम् ।
 केतकरजो निवार्य सखि यदि कार्यं मम प्राणैः ॥ २१ ॥
 जानीमस्तव गौरि चेतसि चिरं शंभुः समुज्जृम्भते
 तापो नेत्रतनूनपादिव तनौ तीव्रः समुन्मीलति ।

अक्षणोरश्रुमिषेण गच्छति बहिर्गङ्गातरङ्गावलिः
 पाण्डिन्नः कपटेन चन्द्रकलिकाकान्तिः समुन्मीलति ॥ २२ ॥

प्रियसखि न तथा पटीरपङ्क्तौ न च नलिनीदलमारुतोऽपि शीतः ।
 शमयति मम देहदाहमेतं सपदि कथापि यथा नरेन्द्रसूनोः ॥ २३ ॥
 (षड्वैते गणपतेः)

अथ स्मरोपालम्भः—

हृदयमाश्रयसे यदि मामकं ज्वलयसि त्वमनङ्ग तदेव किम् ।
 स्वयमपि क्षणदग्धनिजेन्धनः क भवितासि हताश हुताशवत् ॥ २४ ॥
 (श्रीहर्षस्य)

शिव शिव सहसैव पुष्पधन्वा प्रलयनटेन किमित्यकारि भस्म ।

अमयति जगदेष यत्पिशाचः स च मणिमन्त्रमहौषधैर्न साध्यः ॥ २५ ॥

(वाणीविलासस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां

पञ्चमो व्यापारः ।

षष्ठो व्यापारः ।

अथ नायकविप्रलम्भः—

हारो नारोपितः कण्ठे स्पर्शसंरोधभीरुणः ।

इदानीमन्तरे जाताः सरित्सागरपर्वताः ॥ १ ॥

(वाल्मीकेः)

दिव्यचक्षुरहं जातः सरागेणापि चक्षुषा ।

इहस्थो येन पश्यामि देशान्तरगतां प्रियाम् ॥ २ ॥

(कस्यापि)

किमकारि मन्दमतिना रतिपतिना नीतितन्त्रनिपुणेन ।

स्यूतासि हरिणनयने हन्त हृदि स्नेहतन्तुना न तनौ ॥ ३ ॥

(रामचन्द्रस्य)

समुत्कीर्णे तन्व्या निशितनयनान्तेन मृदिते

स्तनद्वन्द्वस्पन्दैः स्मितलवसुधाभिः प्लुतिमति ।

मदन्तःकेदारे मदनकृषिकारेण जनिता

चिरादाशावल्ली किमिति न फलं हन्त लभते ॥ ४ ॥

(मैथिलस्य)

श्रीखण्डानिल निर्वृतो भव सखे सिद्धानुभावो भवान्

आतः कोकिल साधितं निजहितं मूकत्वमालम्ब्यताम् ।

शीतांशो विहितं यशो बहुतरं तत्तात विश्रम्यता-

मस्मत्प्राणबहिःप्रयाणपटहो दध्वान धन्योऽम्बुदः ॥ ५ ॥

(कस्यापि)

शिव शिव सहसैव पुष्पधन्वा प्रलयनटेन किमित्यकारि भस्म ।

अमयति जगदेष यत्पिशाचः स च मणिमन्त्रमहौषधैर्न साध्यः ॥ २५ ॥

(वाणीविलासस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां

पञ्चमो व्यापारः ।

षष्ठो व्यापारः ।

अथ नायकविप्रलम्भः—

हारो नारोपितः कण्ठे स्पर्शसंरोधभीरुणा ।

इदानीमन्तरे जाताः सरित्सागरपर्वताः ॥ १ ॥

(वाल्मीकेः)

दिव्यचक्षुरहं जातः सरागेणापि चक्षुषा ।

इहस्थो येन पश्यामि देशान्तरगतां प्रियाम् ॥ २ ॥

(कस्यापि)

किमकारि मन्दमतिना रतिपतिना नीतितन्त्रनिपुणेन ।

स्यूतासि हरिणनयने हन्त हृदि स्नेहतन्तुना न तनौ ॥ ३ ॥

(रामचन्द्रस्य)

समुत्कीर्णे तन्व्या निशितनयनान्तेन मृदिते

स्तनद्वन्द्वस्पन्दैः स्मितलवसुधाभिः प्लुतिमति ।

मदन्तःकेदारे मदनकृषिकारेण जनिता

चिरादाशावल्ली किमिति न फलं हन्त लभते ॥ ४ ॥

(मैथिलस्य)

श्रीखण्डानिल निर्वृतो भव सखे सिद्धानुभावो भवान्

भ्रातः कोकिल साधितं निजहितं मूकत्वमालम्ब्यताम् ।

शीतांशो विहितं यशो बहुतरं तत्तात विश्रम्यता-

मस्मत्प्राणबहिःप्रयाणपटहो दध्वान धन्योऽम्बुदः ॥ ५ ॥

(कस्यापि)

रे सारङ्गा वनवसतयस्तत्त्वमाख्यात यूयं
 कुत्राधीतं त्रिभुवनमनोहारि चाञ्चल्यमक्षणेः ।
 आं जानीमो गमनसमये हन्त कान्तारसीम-
 न्येकाकिन्याः कुवलयदृशो लुण्ठिता यौवनश्रीः ॥ ६ ॥
 (उमापत्युपाध्यायस्य)

अत्रासितं शयितमत्र निपीतमत्र
 तोयं तया सह मया विधिवञ्चितेन ।
 इत्यादि हन्तं परिचिन्तयतो वनान्ते
 रामस्य लोचनपयोभिरभूत्पयोधिः ॥ ७ ॥

(कस्यापि)

खं यान्ति नो नीरधरा न यावच्छम्पा न झम्पाकुलिताश्च चेलुः ।
 रामस्य तावन्नयनाम्बुपूरैः पम्पा तु संपातिभिरापुपूरे ॥ ८ ॥
 वसन्तं किं हन्त तनोषि तापं माकन्द मन्दं क्षिप मा मरन्दम् ।
 अचण्डभानो जहि चण्डभावं रामस्य कोपी खलु कोऽपि कालः ॥ ९ ॥
 माकन्द क्षिप मा मरन्दनिकरं मूको भव त्वं शुक्र
 स्फारं कोकिल कोमलं कलरवं आतः क्षणं संहार ।
 सौगन्ध्यं वह गन्धवाहन मनावस्वैः क्षणं क्षम्यतां
 जानीध्वं रघुनायकस्य यदयं कालः करालो महान् ॥ १० ॥

(लक्ष्मणस्यैते)

त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलाया-
 मात्मानं ते चरणपतितं यावदिच्छामि कर्तुम् ।
 अस्मैस्तावन्मुहुरुपचितैर्दृष्टिरालुप्यते मे
 क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते संगमं नौ कृतान्तः ॥ ११ ॥
 तस्मिन्काले जलद यदि सा लब्धनिद्रासुखा स्या-
 तत्रासीनः स्तनितविमुखो याममात्रं सहस्र ।

रे सारङ्गा वनवसतयस्तत्त्वमाख्यात यूयं
कुत्राधीतं त्रिभुवनमनोहारि चाञ्चल्यमक्ष्णोः ।

आं जानीमो गमनसमये हन्त कान्तारसीम-

न्येकाकिन्याः कुवलयदृशो लुण्ठिता यौवनश्रीः ॥ ६ ॥

(उमापत्युपाध्यायस्य)

अत्रासितं शयितमत्र निपीतमत्र

तोयं तथा सह मया विधिवञ्चितेन ।

इत्यादि हन्तं परिचिन्तयतो वनान्ते

रामस्य लोचनपयोभिरभूत्पयोधिः ॥ ७ ॥

(कस्यापि)

खं यान्ति नो नीरधरा न यावच्छम्पा न झम्पाकुलिताश्च चेलुः ।

रामस्य तावन्नयनाम्बुपूरैः पम्पा तु संपातिभिरापुपूरे ॥ ८ ॥

वसन्त किं हन्त तनोषि तापं माकन्द मन्दं क्षिप मा मरन्दम् ।

अचण्डभानो जहि चण्डभावं रामस्य कोपी खलु कोऽपि कालः ॥ ९ ॥

माकन्द क्षिप मा मरन्दनिकरं मूको भव त्वं शुक्र

स्फारं कोकिल कोमलं कलरवं आतः क्षणं संहर ।

सौगन्ध्यं वह गन्धवाहन मनावस्वैः क्षणं क्षम्यतां

जानीध्वं रघुनायकस्य यदयं कालः करालो महान् ॥ १० ॥

(लक्ष्मणस्यैते)

त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलाया-

मात्मानं ते चरणपतितं यावदिच्छामि कर्तुम् ।

असौस्तावन्मुहुरुपचितैर्दृष्टिरालुप्यते मे

क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते संगमं नौ कृतान्तः ॥ ११ ॥

तस्मिन्काले जलद यदि सा लब्धनिद्रासुखा स्या-

त्तत्रासीनः स्तनितविमुखो याममात्रं सहस्र ।

माभूदस्याः प्रणयिनि मयि स्वप्नलब्धे कथंचि-

त्सद्यः कण्ठच्युतभुजलताग्रन्थि गाढोपगूढम् ॥ १२ ॥

(कालिदासस्यैतौ)

यत्त्वन्नेत्रसमानकान्ति सलिले मग्नं तदिन्दीवरं

मेघैरन्तरितः प्रिये तव मुखच्छायानुकारी शशी ।

येऽपि त्वद्गमनानुसारिगतयस्ते राजहंसा गता-

स्त्वत्सादृश्यविनोदमात्रमपि मे दैवेन न क्षम्यते ॥ १३ ॥

वनी मुनीनां तटिनी तरूणां दरी गिरीणां च गवेषितैव ।

अतः परं लक्ष्मण पक्ष्मलाक्षीं प्राणा बहिर्भूय गवेषयन्तु ॥ १४ ॥

(कस्याप्येतौ)

जाने कोपपराङ्मुखी प्रियतमा खमेऽद्य दृष्टा मया

मा मा संस्पृश पाणिनेति रुदती गन्तुं प्रवृत्ता ततः ।

नो यावत्परिरभ्य चाटुकंशतैराश्वासयामि प्रियां

आतस्तावदहं शठेन विधिना निद्रादरिद्रीकृतः ॥ १५ ॥

(निद्रादरिद्रस्य)

कुवलयनयनाकुंचान्तरेषु क्षणमपि येषु न शेरते युवानः ।

शिव शिव करुणापराङ्मुखोऽयं गणयति तान्यपि वासराणि वेधाः ॥ १६ ॥

पुनरपि मिलनं यदा कदाचिन्नियतमया कृपया भवेद्विधातुः ।

हरिरिव करवै हृदि प्रतिष्ठां हर इव किं तनवै तनोरभिन्नाम् ॥ १७ ॥

(कस्याप्येतौ)

अद्यापि तन्मनसि संपरिवर्तते मे

रात्रौ मयि क्षुत्तवति क्षितिपालपुत्र्या ।

जीवेति मङ्गलवचः परिहृत्य कोपा-

त्कर्णे कृतं कनकपत्रमनालपन्त्या ॥ १८ ॥

(विह्वलस्य)

माभूदस्याः प्रणयिनि मयि स्वप्नलब्धे कथंचि-

त्सद्यः कण्ठच्युतभुजलताग्रन्थि गाढोपगूढम् ॥ १२ ॥

(कालिदासस्यैतौ)

यत्त्वन्नेत्रसमानकान्ति सलिले मग्नं तदिन्दीवरं

मेघैरन्तरितः प्रिये तव मुखच्छायानुकारी शशी ।

येऽपि त्वद्गमनानुसारिगतयस्ते राजहंसा गता-

स्वत्सादृश्यविनोदमात्रमपि मे दैवेन न क्षम्यते ॥ १३ ॥

वनी मुनीनां तटिनी तरूणां दरी गिरीणां च गवेषितैव ।

अतः परं लक्ष्मण पक्ष्मलाक्षीं प्राणा बहिर्भूय गवेषयन्तु ॥ १४ ॥

(कस्याप्येतौ)

जाने कोपपराङ्मुखी प्रियतमा खमेऽद्य दृष्टा मया

मा मा संस्पृश पाणिनेति रुदती गन्तुं प्रवृत्ता ततः ।

नो यावत्परिरभ्य चाटुकशतैराश्वासयामि प्रियां

आतस्तावदहं शठेन विधिना निद्रादरिद्रीकृतः ॥ १५ ॥

(निद्रादरिद्रस्य)

कुवलयनयनाकुंचान्तरेषु क्षणमपि येषु न शेरते युवानः ।

शिव शिव करुणापराङ्मुखोऽयं गणयति तान्यपि वासराणि वेधाः ॥ १६ ॥

पुनरपि मिलनं यदा कदाचिल्लियतमया कृपया भवेद्विधातुः ।

हरिरिव करवै हृदि प्रतिष्ठां हर इव किं तनवै तनोरभिन्नाम् ॥ १७ ॥

(कस्याप्येतौ)

अद्यापि तन्मनसि संपरिवर्तते मे

रात्रौ मयि क्षुत्तवति क्षितिपालपुत्र्या ।

जीवेति मङ्गलवचः परिहृत्य कोपा-

त्कर्णे कृतं कनकपत्रमनालपन्त्या ॥ १८ ॥

(विह्वलस्य)

स्खलदंशुकमव्यवस्थितारं स्मितकान्ति स्तपिताधरप्रवालम् ।
असमाप्तनकारमाप्तशोभं हरिणाङ्गं हरिणीदृशः स्मरामः ॥ १९ ॥

कुन्दं दन्तैर्मधु निगदितैः षट्पदीं दृग्विलासै-

रेभिर्हासैरमृतलहरी कुन्तलैरम्बुवाहम् ।

इन्दोर्बिम्बं वदनशशिना पङ्कजं च स्तनाभ्यां

त्वं जित्वा मे वससि हृदये तेन ते मां द्विषन्ति ॥ २० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां

षष्ठो व्यापारः ।

सप्तमो व्यापारः ।

अथ संक्षेपतो वक्ष्ये मृगाक्षीणामवान्तरम् ।

भेदं बुधाः सुधाकल्पं तमाकल्पं भजन्त्वमी ॥ १ ॥

अथ कुलाङ्गना—

प्रेरयन्ति हृदयं न लोचनं नर्तयन्ति मदनं न दुर्यशः ।

वारयन्त्यविनयं न संभ्रमं स्नेहसारशरणं कुलस्त्रियः ॥ २ ॥

(गणपतेः)

पदन्यासो गेहाह्नहिरहिंफणारोपणसमो

वचो लोकालभ्यं कृपणधनतुल्यं मृगदृशः ।

निजावासादन्यद्भवनमपरद्वीपतुलितं

पुमानन्यः कान्ताद्विधुरिव चतुर्थसमुदितः ॥ ३ ॥

(लक्ष्मणठक्कुरस्य)

गतागतकुतूहलं नयनयोरपाङ्गावधि

स्मितं कुलनतभ्रुवामधर एव विश्राम्यति ।

वचः प्रियतमश्रुतेरतिथिरेव कोपक्रमः

कदाचिदपि चेत्तदा मनसि केवलं मज्जति ॥ ४ ॥

(भानुकरस्य)

स्खलदंशुकमव्यवस्थितारं स्मितकान्ति स्तपिताधरप्रवालम् ।
असमाप्तनकारमाप्तशोभं हरिणाङ्गं हरिणीदृशः स्मरामः ॥ १९ ॥

कुन्दं दन्तैर्मधु निगदितैः षट्पदीं दृग्विलासै-

रेभिर्हासैरमृतलहरी कुन्तलैरम्बुवाहम् ।

इन्दोर्बिम्बं वदनशशिना पङ्कजं च स्तनाभ्यां

त्वं जित्वा मे वससि हृदये तेन ते मां द्विषन्ति ॥ २० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां

षष्ठो व्यापारः ।

सप्तमो व्यापारः ।

अथ संक्षेपतो वक्ष्ये मृगाक्षीणामवान्तरम् ।

भेदं बुधाः सुधाकल्पं तमाकल्पं भजन्त्वमी ॥ १ ॥

अथ कुलाङ्गना—

प्रेरयन्ति हृदयं न लोचनं नर्तयन्ति मदनं न दुर्यशः ।

वारयन्त्यविनयं न संभ्रमं स्नेहसारशरणं कुलस्त्रियः ॥ २ ॥

(गणपतेः)

पदन्यासो गेहाद्बहिरहिंफणारोपणसमो

वचो लोकालभ्यं कृपणधनतुल्यं मृगदृशः ।

निजावासादन्यद्भवनमपरद्वीपतुलितं

पुमानन्यः कान्ताद्विधुरिव चतुर्थीसमुदितः ॥ ३ ॥

(लक्ष्मणठक्कुरस्य)

गतागतकुतूहलं नयनयोरपाङ्गावधि

स्मितं कुलनतभ्रुवामधर एव विश्राम्यति ।

वचः प्रियतमश्रुतेरतिथिरेव कोपक्रमः

कदाचिदपि चेत्तदा मनसि केवलं मज्जति ॥ ४ ॥

(भानुकरस्य)

लज्जावशान्नमितमन्थरदृष्टिपातं

यैश्चुम्बितं कुलवधूवदनारविन्दम् ।

तेषामनेकपुरुषव्रणिताधरेषु

तृप्तिः कथं भवति वेशवधूसुखेषु ॥ ५ ॥

(कस्यापि)

अथ कुलाङ्गनाकोपः—

तारुण्यं मुखमण्डले न च वचोवैदग्ध्यमन्यादृशं

न भ्रूमङ्गपरिग्रहो न च रहः प्रश्नेऽपि मौनस्थितिः ।

एवं संप्रति तर्क्यते तु सुदृशः कोपस्तु यद्वस्तुनि

स्वाधीने पुनरेव पङ्कजदृशो यत्र प्रभुत्वग्रहः ॥ ६ ॥

(गणपतेः)

मय्यायाते सपदि शयनादुत्थितं चारुवाक्यं

बध्वा पाणी बहु निगदितं क्षालितं पादपद्मम् ।

दत्त्वा वीटीं सविनयमथोद्वीजितं तालवृन्तै-

र्ब्रूते कोपं कुवलयदृशो भूयसी भक्तिरेव ॥ ७ ॥

अथ प्रोष्यत्पतिका—

नायं मुञ्चति सुभ्रुवामपि तनुत्यागे वियोगज्वर-

स्तेनाहं विहिताञ्जालिर्यदुपते पृच्छामि सत्यं वद ।

ताम्बूलं कुसुमं पटीरमुदकं यद्वन्धुभिर्दायते

स्यादत्रैव परत्र तत्किमु विषज्वालावलीदुःसहम् ॥ ८ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

प्रस्थानं बलयैः कृतं प्रियसखैरसैरजसं गतं

धृत्या न क्षणमासितं व्यवसितं चित्तेन गन्तुं पुरः ।

यातुं निश्चितचेतसि प्रियतमे सर्वे समं प्रस्थिता

गन्तव्ये सति जीवितं प्रियसुहृत्सार्थः किमुत्सृज्यते ॥ ९ ॥

यात्रामङ्गलसंविधानरचनाव्यग्रे सखीनां गणे

ब्राण्णाम्भःपिहितेक्षणे गुरुजने तद्वत्सुहृन्मण्डले ।

लज्जावशान्नमितमन्थरदृष्टिपातं

यैश्चुम्बितं कुलवधूवदनारविन्दम् ।

तेषामनेकपुरुषव्रणिताधरेषु

तृप्तिः कथं भवति वेशवधूसुखेषु ॥ ५ ॥

(कस्यापि)

अथ कुलाङ्गनाकोपः—

तारुण्यं मुखमण्डले न च वचोवैदग्ध्यमन्यादृशं

न भ्रूमङ्गपरिग्रहो न च रहः प्रश्नेऽपि मौनस्थितिः ।

एवं संप्रति तर्क्यते तु सुदृशः कोपस्तु यद्वस्तुनि

स्वाधीने पुनरेव पङ्कजदृशो यत्र प्रभुत्वग्रहः ॥ ६ ॥

(गणपतेः)

मय्यायाते सपदि शयनादुत्थितं चारुवाक्यं

बध्वा पाणी बहु निगदितं क्षालितं पादपद्मम् ।

दत्त्वा वीटीं सविनयमथोद्वीजितं तालवृन्तै-

र्ब्रूते कोपं कुवलयदृशो भूयसी भक्तिरेव ॥ ७ ॥

अथ प्रोष्यत्पतिका—

नायं मुञ्चति सुभ्रुवामपि तनुत्यागे वियोगज्वर-

स्तेनाहं विहिताञ्जालिर्यदुपते पृच्छामि सत्यं वद ।

ताम्बूलं कुसुमं पटीरमुदकं यद्वन्धुभिर्दायते

स्यादत्रैव परत्र तत्किमु विषज्वालावलीदुःसहम् ॥ ८ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

प्रस्थानं वलयैः कृतं प्रियसखैरसैरजसं गतं

धृत्या न क्षणमासितं व्यवसितं चित्तेन गन्तुं पुरः ।

यातुं निश्चितचेतसि प्रियतमे सर्वे समं प्रस्थिता

गन्तव्ये सति जीवितं प्रियमुहत्सार्थः किमुत्सृज्यते ॥ ९ ॥

यात्रामङ्गलसंविधानरचनाव्यग्रे सखीनां गणे

ब्राह्मणभःपिहितेक्षणे गुरुजने तद्वत्सुहृन्मण्डले ।

प्राणेशस्य मदीक्षणार्पितदृशः कृच्छ्रादतिक्रामतः

किं ब्रीडाहतया मया भुजलतापाशो न कण्ठेऽर्पितः ॥ १० ॥

(कस्याप्येतौ)

गच्छ गच्छसि चेत्कान्त पन्थानः सन्तु ते शिवाः ।

ममापि जन्म तत्रैव भूयाद्यत्र गतो भवान् ॥ ११ ॥

(दण्डिनः)

उद्यद्बर्हिषि दर्दुरारवपुषि प्रक्षीणपान्थायुषि

च्योतद्विपुषि चन्द्ररुष्पुषि सखे हंसद्विषि प्रावृषि ।

मा मा मुञ्च कुचाग्रसंततपतद्वाष्पाकुलं बालिकां

काले कालकरालनीलजलदव्याल्लसभास्वत्त्विषि ॥ १२ ॥

(बाणस्य)

अथ प्रोषितपतिका—

लिखति न गणयति रेखां निर्भरबाष्पाम्बुधौतगण्डतला ।

अवधिदिवसावसानं माभूदिति शङ्किता बाला ॥ १३ ॥

(मोरिकायाः)

समर्प्य हृदि दारुणां मदनवेदनां भूयसी-

मनेन वनवर्त्मना प्रचलितः स मे वल्लभः ।

न वामदिशि शब्दितं किमिति वा त्वया वायस

त्वया सदनसारिके किमिति वा कृतं न क्षुत्तम् ॥ १४ ॥

(भानुकरस्य)

अथोत्कण्ठिता—

द्वारि स्तम्भविलम्बा प्रियसखि दृष्टिं पथि क्षिपसि ।

प्रहिणोषि भाग्यभाजि प्रेयसि दूतीमिव अमरीम् ॥ १५ ॥

(भानुकरस्य)

अम्भोरुहाक्षि शम्भोश्चरणावाराधितौ केन ।

यस्मै विचलितवदना मदनाकृतं विभावयसि ॥ १६ ॥

(गणपतेः)

प्राणेशस्य मदीक्षणार्पितदृशः कृच्छ्रादतिक्रामतः

किं ब्रीडाहतया मया भुजलतापाशो न कण्ठेऽर्पितः ॥ १० ॥

(कस्याप्येतौ)

गच्छ गच्छसि चेत्कान्त पन्थानः सन्तु ते शिवाः ।

ममापि जन्म तत्रैव भूयाद्यत्र गतो भवान् ॥ ११ ॥

(दण्डिनः)

उद्यद्बर्हिषि दर्दुरारवपुषि प्रक्षीणपान्थायुषि

च्योतद्विप्रुषि चन्द्ररुष्मिषि सखे हंसद्विषि प्रावृषि ।

मा मा मुञ्च कुचाग्रसंततपतद्वाष्पाकुलां बालिकां

काले कालकरालनीलजलदव्याल्लसभास्वत्त्विषि ॥ १२ ॥

(बाणस्य)

अथ प्रोषितपतिका—

लिखति न गणयति रेखां निर्भरवाष्पाम्बुधौतगण्डतला ।

अवधिदिवसावसानं माभूदिति शङ्किता बाला ॥ १३ ॥

(मोरिकायाः)

समर्प्य हृदि दारुणां मदनवेदनां भूयसी-

मनेन वनवर्त्मना प्रचलितः स मे बल्लभः ।

न वामदिशि शब्दितं किमिति वा त्वया वायस

त्वया सदनसारिके किमिति वा कृतं न क्षुतम् ॥ १४ ॥

(भानुकरस्य)

अथोत्कण्ठिता—

द्वारि स्तम्भविलम्बा प्रियसखि दृष्टिं पथि क्षिपसि ।

प्रहिणोषि भाग्यभाजि प्रेयसि दूतीमिव भ्रमरीम् ॥ १५ ॥

(भानुकरस्य)

अम्भोरुहाक्षि शम्भोश्चरणावाराधितौ केन ।

यस्मै विचलितवदना मदनाकृतं विभावयसि ॥ १६ ॥

(गणपतेः)

अथाङ्गनावान्तरभेदाः । तत्र नवोढा—

काञ्चीदाम निवेशयन्वितनुते वासः श्लथं सुभुवो
हारं वक्षसि योजयन्करतलं धत्ते कुचाम्भोरुहे ।
जल्पंश्चाटुवचोऽधरं धयति यत्प्रेयान्कुतो विस्मयः
पांसुं चक्षुषि विक्षिपन् यदि धनं गृह्णासि(ति) पाटच्चरः ॥ १७ ॥
(भानुकरस्य)

बलान्नीता पार्श्वे मुखमभिमुखं नैव कुरुते
धुनाना मूर्धानं हरति बहुशश्चुम्बनविधिम् ।
हृदि न्यस्तं हस्तं क्षिपति गमनारोपितमना
नवोढा वोढारं रमयति च संतापयति च ॥ १८ ॥
(कस्यापि)

विरम नाथ विमुञ्च ममाञ्चलं शमय दीपमिमं समया सखी ।
इति नवोढवधूवचनैर्युवा मुदमगादधिकां सुरतादपि ॥ १९ ॥
(रुद्रस्य)

चुम्बनेषु परिवर्तिताधरं हस्तरोधि रसनाविघट्टने ।
विधितेच्छमपि तस्य सर्वतो मन्मथेन्धनमभूद्बधूरतम् ॥ २० ॥
(कालिदासस्य)

अथ विस्रब्धनवोढा—

दत्तं करं वक्षसि मीलिताक्षी श्लथेन दूरीकुरुते करेण ।
आचुम्बिता नेति मुहुर्विधत्ते मुखं पुनः संमुखमेव धत्ते ॥ २१ ॥
(गणपतिः)

दीपाङ्कुरः स्फुरति पश्यति केलिकीरो
जाले निवेशितमुखी च सखी चकास्ति ।
इत्थं विचिन्त्य वचसा न शशाक बाला
नाथं निषेद्धमनिषेद्धमपि त्रपाभिः ॥ २२ ॥
(भानुकरस्य)

अथाङ्गनावान्तरभेदाः । तत्र नवोढा—

काञ्चीदाम निवेशयन्वितनुते वासः श्लथं सुभ्रुवो
हारं वक्षसि योजयन्करतलं धत्ते कुचाम्भोरुहे ।
जल्पंश्चाटुवचोऽधरं धयति यत्प्रेयान्कुतो विस्मयः
पांसुं चक्षुषि विक्षिपन्यदि धनं गृह्णासि(ति) पाटच्चरः ॥ १७ ॥
(भानुकरस्य)

बलान्नीता पार्श्वे मुखमभिमुखं नैव कुरुते
धुनाना मूर्धानं हरति बहुशश्चुम्बनविधिम् ।
हृदि न्यस्तं हस्तं क्षिपति गमनारोपितमना
नवोढा वोढारं रमयति च संतापयति च ॥ १८ ॥
(कस्यापि)

विरम नाथ विमुञ्च ममाञ्चलं शमय दीपमिमं समया सखी ।
इति नवोढवधूवचनैर्युवा मुदमगादधिकां सुरतादपि ॥ १९ ॥
(रुद्रस्य)

चुम्बनेषु परिवर्तिताधरं हस्तरोधि रसनाविघट्टने ।
विघ्नितेच्छमपि तस्य सर्वतो मन्मथेन्धनमभूद्रधूरतम् ॥ २० ॥
(कालिदासस्य)

अथ विस्रब्धनवोढा—

दत्तं करं वक्षसि मीलिताक्षी श्लथेन दूरीकुरुते करेण ।
आचुम्बिता नेति मुहुर्विधत्ते मुखं पुनः संमुखमेव धत्ते ॥ २१ ॥
(गणपतिः)

दीपाङ्कुरः स्फुरति पश्यति केलिकीरो
जाले निवेशितमुखी च सखी चकास्ति ।
इत्थं विचिन्त्य वचसा न शशाक बाला
नाथं निषेद्धुमनिषेद्धुमपि त्रपाभिः ॥ २२ ॥
(भानुकरस्य)

अथ मुग्धा—

नीरात्तीरमुपागता श्रवणयोः सीम्नः(म्नि) स्फुरन्नेत्रयोः

श्रोत्रे लग्नमिदं किमुत्पलमिति ज्ञातुं करं न्यस्यति ।

शैवालाङ्कुरशङ्कया शशिमुखी रोमावलीं प्रोज्झति

श्रान्तास्मीति मुहुः सखीमविदितश्रोणीभरा पृच्छति ॥ २३ ॥

अथ मध्या—

स्वापे प्रियाननविलोकनहानिरेव

स्वापच्युतौ प्रियकरग्रहणप्रसङ्गः ।

इत्थं सरोरुहमुखी परिचिन्तयन्ती

निद्रां विधातुमविधातुमपि प्रपेदे ॥ २४ ॥

(भानुकरस्येतौ)

अथ प्रौढा—

मदानने चुम्बनचञ्चलस्य प्रियस्य संस्पृष्टकुचस्थलस्य ।

नीवीषु भावी करसंनिवेशस्तद्वामनी यामिनि भैव भूयाः ॥ २५ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथासती—

अयं रेवाकुञ्जः कुसुमशरसेवासमुचितः

समीरोऽयं वेलावनविदलदेलापरिमलः ।

इयं प्रावृट् धन्या नवजलदविन्यासचतुरा

स्मराधीनं चेतः सखि किमपि कर्तुं मृगयते ॥ २६ ॥

अथ विदग्धासती—

देहे दुर्ललितस्य देवरशिशोः स्फोटव्रणो दारुणो

मातस्तेन वनस्पतित्वचमुपाहर्तुं मया गम्यते ।

दृष्यन्तु श्वसितानि घर्मसलिलैः पत्राणि लुप्यन्तु वा

वक्षो वा विलिखन्तु हन्त नखैरैः कुद्धाः कपिश्रेणयः ॥ २७ ॥

(भानुकरस्येतौ)

अथ मुग्धा—

नीरात्तीरमुपागता श्रवणयोः सीम्नः(म्नि) स्फुरन्नेत्रयोः

श्रोत्रे लग्नमिदं किमुत्पलमिति ज्ञातुं करं न्यस्यति ।

शैवालाङ्कुरशङ्कया शशिमुखी रोमावलीं प्रोज्झति

श्रान्तास्मीति मुहुः सखीमविदितश्रोणीभरा पृच्छति ॥ २३ ॥

अथ मध्या—

स्वापे प्रियाननविलोकनहानिरेव

स्वापच्युतौ प्रियकरग्रहणप्रसङ्गः ।

इत्थं सरोरुहमुखी परिचिन्तयन्ती

निद्रां विधातुमविधातुमपि प्रपेदे ॥ २४ ॥

(भानुकरस्येतौ)

अथ प्रौढा—

मदानने चुम्बनचञ्चलस्य प्रियस्य संस्पृष्टकुचस्थलस्य ।

नीवीषु भावी करसंनिवेशस्तद्वामनी यामिनि भैव भूयाः ॥ २५ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथासती—

अयं रेवाकुञ्जः कुसुमशरसेवासमुचितः

समीरोऽयं वेलावनविदलदेलापरिमलः ।

इयं प्रावृट् धन्या नवजलदविन्यासचतुरा

स्मराधीनं चेतः सखि किमपि कर्तुं मृगयते ॥ २६ ॥

अथ विदग्धासती—

देहे दुर्ललितस्य देवरशिशोः स्फोटव्रणो दारुणो

मातस्तेन वनस्पतित्वचमुपाहर्तुं मया गम्यते ।

दृष्यन्तु श्वसितानि घर्मसलिलैः पत्राणि लुप्यन्तु वा

वक्षो वा विलिखन्तु हन्त नखैरैः क्रुद्धाः कपिश्रेणयः ॥ २७ ॥

(भानुकरस्येतौ)

प्रियो मयैवावचितैः प्रसूनैर्हृष्टो हरस्यातनुते सपर्याम् ।

अतो नतानेकलतावृतानि यास्यामि सायं विपिनानि सख्यः ॥२८॥

(कस्यापि)

अथ गुप्तासती—

श्रश्रूः क्रुध्यतु निर्दिशन्तु सुहृदो निन्दन्तु वा यातर-

स्तस्मिन्किंतु न मन्दिरे सखि पुनः स्वापो विधेयो मया ।

आखोराक्रमणाय कोणकुहरादुत्फालमातन्वती

मार्जारी नखरैः खरैः कृतवती कां कां न मे दुर्दशाम् ॥२९॥

अथ लक्षितासती—

कोकः स्तोकविमुक्तमौक्तिकभरो निःस्यन्दमिन्दीवरं

चापं चापलवर्जितं हिमकरकोडे तमः क्रीडति ।

वातः कातरयत्यपाकृतरसं बन्धूकमेतावती

वार्ता कापि कदापि पाणिपिहिता कस्यापि वा तिष्ठति ॥ ३० ॥

अथ वेश्या—

केशः कुन्दमिषादिवोपहसति द्रव्यैर्विहीनाञ्जना

न्यूनां ग्रन्थिघनं विलोकितुमिवोद्भीवः स्तनस्तिष्ठति ।

प्रेमच्छेदकृपाणवल्लिसुषमा रोमालिरालम्बते

यस्याः सा कथमस्तु चेतसि चमत्काराय वाराङ्गना ॥ ३१ ॥

अथ कुलटा—

एते वारिकणान्किरन्ति पुरुषान्वर्षन्ति नाम्भोधराः

शैलाः शाद्वलमुद्रमन्ति न वमन्त्येते पुनर्नायकान् ।

त्रैलोक्ये तरवः फलानि सुवते नैवारमन्ते जना-

न्धातः कातरमालपामि कुलटाहेतोस्त्वया किं कृतम् ॥ ३२ ॥

शिरसि शिरसिजं दृशोर्निमेषं विटपिनि पल्लवमालये तृणं वा ।

गणयितुमपि पारयन्ति केचित्प्रियसखि के कथयन्तु जारसंख्याम् ॥३३॥

दिवसे घटिकास्त्रिंशद्वटिकाः परं रजनौ ।

लक्षं नगरयुवानस्तात विधातः किमाचरितम् ॥ ३४ ॥

प्रियो मयैवावचितैः प्रसूनैर्हृष्टो हरस्यातनुते सपर्याम् ।

अतो नतानेकलतावृतानि यास्यामि सायं विपिनानि सख्यः ॥२८॥

(कस्यापि)

अथ गुप्तासती—

श्रश्रूः कुध्यतु निर्दिशन्तु सुहृदो निन्दन्तु वा यातर-

स्तस्मिन्किंतु न मन्दिरे सखि पुनः स्वापो विधेयो मया ।

आखोराक्रमणाय कोणकुहरादुत्फालमातन्वती

मार्जारी नखरैः खरैः कृतवती कां कां न मे दुर्दशाम् ॥२९॥

अथ लक्षितासती—

कोकः स्तोकविमुक्तमौक्तिकभरो निःस्यन्दमिन्दीवरं

चापं चापलवर्जितं हिमकरक्रोडे तमः क्रीडति ।

वातः कातरयत्यपाकृतसरं बन्धूकमेतावती

वार्ता कापि कदापि पाणिपिहिता कस्यापि वा तिष्ठति ॥ ३० ॥

अथ वेश्या—

केशः कुन्दमिषादिवोपहसति द्रव्यैर्विहीनाञ्जना

न्यूनां ग्रन्थिधनं विलोकितुमिवोद्गीवः स्तनस्तिष्ठति ।

प्रेमच्छेदकृपाणवल्लिसुषमा रोमालिरालम्बते

यस्याः सा कथमस्तु चेतसि चमत्काराय वाराङ्गना ॥ ३१ ॥

अथ कुलटा—

एते वारिकणान्किरन्ति पुरुषान्वर्षन्ति नाम्भोधराः

शैलाः शाद्वलमुद्वमन्ति न वमन्त्येते पुनर्नायकान् ।

त्रैलोक्ये तरवः फलानि सुवते नैवारमन्ते जना-

न्धातः कातरमालपामि कुलटाहेतोस्त्वया किं कृतम् ॥ ३२ ॥

शिरसि शिरसिजं दृशोर्निमेषं विटपिनि पल्लवमालये तृणं वा ।

गणयितुमपि पारयन्ति केचित्प्रियसखि के कथयन्तु जारसंख्याम् ॥३३॥

दिवसे घटिकास्त्रिंशद्विंशद्वटिकाः परं रजनौ ।

लक्षं नगरयुवानस्तात विधातः किमाचरितम् ॥ ३४ ॥

स्थानं नास्ति क्षणं नास्ति वक्तारमिति सुभ्रुवः ।

जहास हारकूटेन पयोधरमहीधरः ॥ ३५ ॥

(भानुकरस्यैते)

दुर्दिवसे घनतिमिरे दुःसंचारासु नगरवीथीषु ।

पत्युर्विदेशगमने परमसुखं जघनचपलायाः ॥ ३६ ॥

(जघनचपलायाः)

अथ कुलटोपदेशः—

वयं बाल्ये बालांस्तरुणिमनि यूनः परिणता-

वपीच्छामो वृद्धान्परिणयविधीनां स्थितिरिति ।

त्वयारब्धं जन्म क्षपयितुमनेनैकपतिना

न मे गोत्रे पुत्रि कचिदपि सतीलाञ्छनमभूत् ॥ ३७ ॥

(कस्यापि)

नारीणां खलु बन्धुरन्धतमसं पाथोधरः सोदरः

कुञ्जं नाभिगृहं निशा सहचरी सेव्यः स्मरः क्षमापतिः ।

इत्थं चारुचकोरचञ्चलदृशां यासां मतिर्जायते

तासामेव यशः सुधांशुधवलं तासां गृहे वृद्धयः ॥ ३८ ॥

चेत्पौरादपि शङ्कसे हिमरुचेरप्यर्चिषो लज्जसे

भोगीन्द्रादपि चेद्विभेषि तिमिरस्तोमादपि त्रस्यसि ॥

चेत्कुञ्जादपि दूयसे जलरधध्वानादपि क्षुभ्यसि

प्रायः पुत्रि हतास्मि हन्त भविता त्वत्तः कलङ्कः कुले ॥ ३९ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

सुखशय्या ताम्बूलं विश्रब्धाश्लेषचुम्बनादीनि ।

तुलयन्ति न लक्षांशं त्वारितक्षणचौर्यसुरतस्य ॥ ४० ॥

(कस्यापि)

एकानपाङ्गैरपरास्तरङ्गैर्भ्रुवोर्विलासैरितरं च हासैः ।

विमोहयत्यन्यमहो रहोभिः को वा कलां वेद कलावतीनाम् ॥ ४१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

इति श्रीभास्कोलकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां सप्तमो व्यापारः ।

स्थानं नास्ति क्षणं नास्ति वक्तारमिति सुभ्रुवः ।

जहास हारकूटेन पयोधरमहीधरः ॥ ३५ ॥

(भानुकरस्यैते)

दुर्दिवसे घनतिमिरे दुःसंचारासु नगरवीथीषु ।

पत्युर्विदेशगमने परमसुखं जघनचपलायाः ॥ ३६ ॥

(जघनचपलायाः)

अथ कुलटोपदेशः—

वयं बाल्ये बालांस्तरुणिमनि यूनः परिणता-

वपीच्छामो वृद्धान्परिणयविधीनां स्थितिरिति ।

त्वयारब्धं जन्म क्षपयितुमनेनैकपतिना

न मे गोत्रे पुत्रि कचिदपि सतीलाञ्छनमभूत् ॥ ३७ ॥

(कस्यापि)

नारीणां खलु बन्धुरन्धतमसं पाथोधरः सोदरः

कुञ्जं नाभिगृहं निशा सहचरी सेव्यः स्मरः क्षमापतिः ।

इत्थं चारुचकोरचञ्चलदृशां यासां मतिर्जायते

तासामेव यशः सुधांशुधवलं तासां गृहे वृद्धयः ॥ ३८ ॥

चेत्पौरादपि शङ्कसे हिमरुचेरप्यर्चिषो लज्जसे

भोगीन्द्रादपि चेद्विभेषि तिमिरस्तोमादपि त्रस्यसि ॥

चेत्कुञ्जादपि दूयसे जलरधध्वानादपि क्षुभ्यसि

प्रायः पुत्रि हतास्मि हन्त भविता त्वत्तः कलङ्कः कुले ॥ ३९ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

सुखशय्या ताम्बूलं विश्रब्धाश्लेषचुम्बनादीनि ।

तुलयन्ति न लक्षांशं त्वारितक्षणचौर्यसुरतस्य ॥ ४० ॥

(कस्यापि)

एकानपाङ्गैरपरास्तरङ्गैर्भ्रुवोर्विलासैरितरं च हासैः ।

विमोहयत्यन्यमहो रहोभिः को वा कलां वेद कलावतीनाम् ॥ ४१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

इति श्रीभास्कोलकरलक्ष्मणभट्टकृतायां पद्यरचनायां सप्तमो व्यापारः ।

अष्टमो व्यापारः ।

अथ सौन्दर्यगर्विता—

भामिन्यो विदधतु भागधेयभाजः केयूरं सजमवतंसमम्बुजातैः ।
धिग्दैवं मम तु विभूषणं विदूरे रोलम्बादधरनिवारणं पुमर्थः ॥ १ ॥
(कस्यापि)

अथ प्रेमगर्विता—

वपुषि तव तनोति रत्नभूषां
प्रभुरिति धन्यतमासि किं ब्रवीमि ।
सखि तनुनयनान्तरालभीरुः
कलयति मे न विभूषणानि कान्तः ॥ २ ॥

अथ खण्डिता—

वक्षोजखण्डितसुरो दयितस्य वीक्ष्य
दीर्घं न निःश्वसिति जल्पति नैव किञ्चित् ।
प्रातर्जलेन वदनं परिमार्जयन्ती
बाला विलोचनजलानि तिरोदधाति ॥ ३ ॥

अथ कलहान्तरिता—

चलं चेतः पुंसां सहजसरलाः पङ्कजदृशो
भवत्येव क्रोधः कचिदपि कदाचित्तरुणयोः ।
दहेदङ्गं भृङ्गी विधुरपि विदध्यात्परिभवं
स्मरो मां मञ्जीयादिति किमपि नाज्ञासिषमहम् ॥ ४ ॥

अकरोः किमु नेत्रशोणिमानं किमकार्षीः करपद्मतर्जनम् ।
कलहं किमघाः क्रुधा रसज्ञे हितमर्थं न विदन्ति दैवदृष्टाः ॥ ५ ॥
विरमति कथनं विना न खेदः सति कथने समुपैति कापि लज्जा ।
इति कलहमधोमुखी सखीभ्यो लपितुमनालपितु समाचकाङ्क्ष ॥ ६ ॥
(भानुकरस्यैते)

अष्टमो व्यापारः ।

अथ सौन्दर्यगर्विता—

भामिन्यो विदधतु भागधेयभाजः केयूरं सजमवतंसमम्बुजातैः ।
धिगदैवं मम तु विभूषणं विदूरे रोलम्बादधरनिवारणं पुमर्थः ॥ १ ॥
(कस्यापि)

अथ प्रेमगर्विता—

वपुषि तव तनोति रत्नभूषां
प्रभुरिति धन्यतमासि किं ब्रवीमि ।
सखि तनुनयनान्तरालभीरुः
कलयति मे न विभूषणानि कान्तः ॥ २ ॥

अथ खण्डिता—

वक्षोजखण्डितमुरो दयितस्य वीक्ष्य
दीर्घं न निःश्वसिति जल्पति नैव किञ्चित् ।
प्रातर्जलेन वदनं परिमार्जयन्ती
बाला विलोचनजलानि तिरोदधाति ॥ ३ ॥

अथ कलहान्तरिता—

चलं चेतः पुंसां सहजसरलाः पङ्कजदृशो
भवत्येव क्रोधः कचिदपि कदाचित्तरुणयोः ।
दहेदङ्गं भृङ्गी विधुरपि विदध्यात्परिभवं
स्मरो मां मञ्जीयादिति किमपि नाज्ञासिषमहम् ॥ ४ ॥

अकरोः किमु नेत्रशोणिमानं किमकार्षीः करपद्मार्जनम् ।
कलहं किमघाः क्रुधा रसज्ञे हितमर्थं न विदन्ति दैवदृष्टाः ॥ ५ ॥
विरमति कथनं विना न खेदः सति कथने समुपैति कापि लज्जा ।
इति कलहमधोमुखी सखीभ्यो लपितुमनालपितु समाचकाङ्क्ष ॥ ६ ॥

(भानुकरस्यैते)

अथ दूती—

माला बालाम्बुजदलमयी मौक्तिकी हारयष्टिः

काञ्ची किं च त्वयि यदुपते प्रस्थिते प्रस्थितैव ।

ब्रूमस्तस्याः किमिह धमनी वर्तते वा न वेति

ज्ञातुं बाहोरहह वलयं पाणिमूलं प्रयाति ॥ ७ ॥

(भानुकरस्य)

न नीतमुपनासिकं परिमलव्ययाशङ्कया

न हन्त विनिवेशितं विरहवद्विकुण्डे हृदि ।

दृशोर्बहिरिति श्रुतौ न निहितं प्रियप्रेषितं

करे कमलमर्पितं मृगदृशा दृशा पीयते ॥ ८ ॥

(अविलम्बस्य)

मुहुर्व्यजनवीजनैर्बहलचन्दनासेचनैः

सरोजदलवेष्टनैरपि न चेष्टते सुन्दरी ।

परंतु तव नामनि प्रियसखीभिरावेदिते

निवेदयति जीवितं श्रवणसीम्नि रोमोद्गमः ॥ ९ ॥

(बाबूमिश्रस्य)

अथ दूत्युपहासः—

किं त्वं निगूहसे दूति स्तनौ वक्रं च पाणिना ।

खण्डिता एव शोभन्ते शूराधरपयोधराः ॥ १० ॥

(कस्यापि)

निःशेषच्युतचन्दनं स्तनतटं निर्मृष्टरागोऽधरो

नेत्रे दूरमनञ्जने पुलकिता तन्वी तवेयं तनुः ।

मिथ्यावादिनि दूति बान्धवजनस्याज्ञातपीडागमे

वार्पी स्नातुमितो गतासि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम् ॥ ११ ॥

(अमरुकस्य)

त्वं दूति निरमाः कुञ्जं न तु पापीयसो गृहम् ।

किंशुक्राभरणं देहे दृश्यते कथमन्यथा ॥ १२ ॥

(भानुकरस्य)

(भानुकरस्य)

अथ दूती—

माला बालाम्बुजदलमयी मौक्तिकी हारयष्टिः

काञ्ची किं च त्वयि यदुपते प्रस्थिते प्रस्थितैव ।

ब्रूमस्तस्याः किमिह धमनी वर्तते वा न वेति

ज्ञातुं बाहोरहह वलयं पाणिमूलं प्रयाति ॥ ७ ॥

(भानुकरस्य)

न नीतमुपनासिकं परिमलव्ययाशङ्कया

न हन्त विनिवेशितं विरहवह्निकुण्डे हृदि ।

दृशोर्बहिरिति श्रुतौ न निहितं प्रियप्रेषितं

करे कमलमर्पितं मृगदृशा दृशा पीयते ॥ ८ ॥

(अविलम्बस्य)

सुहृर्व्यजनवीजनैर्बहलचन्दनासेचनैः

सरोजदलवेष्टनैरपि न चेष्टते सुन्दरी ।

परंतु तव नामनि प्रियसखीभिरावेदिते

निवेदयति जीवितं श्रवणसीम्नि रोमोद्गमः ॥ ९ ॥

(बाबूमिश्रस्य)

अथ दूत्युपहासः—

किं त्वं निगूहसे दूति स्तनौ वक्रं च पाणिना ।

खण्डिता एव शोभन्ते शूराधरपयोधराः ॥ १० ॥

(कस्यापि)

निःशेषच्युतचन्दनं स्तनतटं निर्धृष्टरागोऽधरो

नेत्रे दूरमनञ्जने पुलकिता तन्वी तवेयं तनुः ।

मिथ्यावादिनि दूति बान्धवजनस्याज्ञातपीडागमे

वार्षीं स्नातुमितो गतासि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम् ॥ ११ ॥

(अमरुकस्य)

त्वं दूति निरगाः कुञ्जं न तु पापीयसो गृहम् ।

किंशुक्राभरणं देहे दृश्यते कथमन्यथा ॥ १२ ॥

(विरहस्य)

(भानुकरस्य)

अथ मानिनीमानः—

कोपो यत्र भ्रुकुटिरचना विग्रहो यत्र मौनं
यत्रान्योन्यस्मितमनुनयो दृष्टिपातः प्रसादः ।
तस्य प्रेम्णस्तदिदमधुना वैशसं पश्य जातं
त्वं पादान्ते लुठसि न च मे मन्युमोक्षः खलायाः ॥ १३ ॥
(वामनस्य)

यदाभूदस्माकं प्रथममविभक्ता तनुरियं
ततो नु त्वं प्रेयानहमपि हताशा प्रियतमा ।
इदानीं नाथस्त्वं वयमपि कलत्रं किमपरं
मयासं प्राणानां कुलिशकठिनानां फलमिदम् ॥ १४ ॥
(अमरुकस्य)

अथ मानापनोदः—

त्रियामायामस्यां सुतनु यमुनायामिव तर-
तरङ्गप्रोदश्चद्विमलदलरक्तोत्पलमिव ।
इयं दृष्टिः शोणा मयि निहितकोणा विजयते
त्यज क्रोधं राधे मयि निरपराधे कुरु कृपाञ्च ॥ १५ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ परस्परप्रीतिप्रस्तापः ।

तत्रादौ नायिकायाः—

सहस्रनेत्रैः प्रियगात्रशोभां विभावनीयां तु निभालयन्त्याः ।
किं लोचनान्भोरुहयुग्मपत्रं विधाय धातः परिवर्जितास्मि ॥ १६ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ नायकस्य—

त्वदीयमुखपङ्कजं यदि विधोरलं वार्तया
तवाधरमुधा यदा भवति किं सुधा नो मुधा ।
त्वदङ्गपरिरम्भणं भण कृतं सुभागाह्वै-
स्त्वदीयदगनुग्रहस्तदपि धिग्भिगौन्दं पदम् ॥ १७ ॥

अथ मानिनीमानः—

कोपो यत्र भ्रुकुटिरचना विग्रहो यत्र मौनं
यत्रान्योन्यस्मितमनुनयो दृष्टिपातः प्रसादः ।
तस्य प्रेम्णस्तदिदमधुना वैशसं पश्य जातं
त्वं पादान्ते लुठसि न च मे मन्युमोक्षः खलायाः ॥ १३ ॥
(वामनस्य)

यदाभूदस्माकं प्रथममविभक्ता तनुरियं
ततो नु त्वं प्रेयानहमपि हताशा प्रियतमा ।
इदानीं नाथस्त्वं वयमपि कलत्रं किमपरं
मयाप्तं प्राणानां कुलिशकठिनानां फलमिदम् ॥ १४ ॥
(अमरुकस्य)

अथ मानापनोदः—

त्रियामायामस्यां सुतनु यमुनायामिव तर-
त्तरङ्गप्रोदञ्चद्विमलदलरक्तोत्पलमिव ।
इयं दृष्टिः शोणा मयि निहितकोणा विजयते
त्यज क्रोधं राधे मयि निरपराधे कुरु कृपाम् ॥ १५ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ परस्परप्रीतिप्रलापः ।

तत्रादौ नायिकायाः—

सहस्रनेत्रैः प्रियगात्रशोभां विभावनीयां तु निभालयन्त्याः ।
किं लोचनाम्भोरुहयुग्मपत्रं विधाय धातः परिवञ्चितास्मि ॥ १६ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ नायकस्य—

त्वदीयमुखपङ्कजं यदि विधोरलं वार्तया
तत्राधरसुधा यदा भवति किं सुधा नो मुधा ।
त्वदङ्गपरिरम्भणं भण कृतं सुधायाह्नै-
स्त्वदीयदगनुग्रहस्तदपि धिम्धिगैन्द्रं पदम् ॥ १७ ॥

दृश्यं चेन्मुखपङ्कजं तव यदि श्राव्यं तव व्याहृतं
 घ्रेयं चेन्मुखसौरभं तव यदि स्वाद्यं तवौष्ठाभृतम् ।
 स्पृश्यं चेत्कुचयोर्युगं तव परं ध्येयं सुरूपं तव
 त्वं सर्वेन्द्रियवागुरेव विषयः कस्येन्द्रियस्यासि न ॥ १८ ॥
 लक्ष्मणस्यैतौ ।

अथ रतप्रशंसा—

नरैर्विफलजन्मभिर्गिरिदरी न किं सेव्यते
 न चेच्छ्रवणगोचरीभवति जातुचिज्जन्मनि ।
 कपोतरवमाधुरीविरचनानुकारा दरी-
 रतासहकृशोदरीवचनरीतिकाकुध्वनिः ॥ १९ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ रतारम्भः—

हस्तस्वेदस्त्रपित इव यश्चन्दनक्षोदवृन्दै-
 रालिप्तोऽलंकृतपरिसरः फुल्लकह्लारहारैः ।
 आराधीत्थं तव नवकुरङ्गाक्षि वक्षोजशम्भुः
 साक्षात्कारं तदपि न दिशत्येष किं वा करोमि ॥ २० ॥
 कान्ते नितान्तं दयिताकुचान्तचोलाञ्चलं कर्षति हर्षमुग्धे ।
 बभार बाला नमितास्यहास्यलेशापदेशादपरं निचोलम् ॥ २१ ॥
 (लक्ष्मणस्यैतौ)
 उरोरुहाम्भोरुहदर्शनाय विमुञ्चतः कञ्चुकबन्धनानि ।
 आनन्दनीराकुललोचनस्य प्रियस्य जातो विफलः प्रयासः ॥ २२ ॥
 कान्ते कलितचोलान्ते दीपे वैरिणि दिप्यति ।
 आसीदसितपद्माक्ष्याः पक्षो नयनमुद्रणम् ॥ २३ ॥
 (भानुकरस्यैतौ)

दृशा सपदि मीलितं दशनरोचिषा निर्गतं
 करेण परिवैपितं वलयकैरथाक्रन्दितम् ।

दृश्यं चेन्मुखपङ्कजं तव यदि श्राव्यं तव व्याहृतं
 घ्रेयं चेन्मुखसौरभं तव यदि स्वाद्यं तवौष्ठामृतम् ।
 स्पृश्यं चेत्कुचयोर्युगं तव परं ध्येयं सुरूपं तव
 त्वं सर्वेन्द्रियवागुरेव विषयः कस्येन्द्रियस्यासि न ॥ १८ ॥
 लक्ष्मणस्यैतौ ।

अथ रतप्रशंसा—

नरैर्विफलजन्मभिर्गिरिदरी न किं सेव्यते
 न चेच्छ्रवणगोचरीभवति जातुचिज्जन्मनि ।
 कपोतरवमाधुरीविरचनानुकारा दरी-
 रतासहकृशोदरीवचनरीतिकाकुध्वनिः ॥ १९ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ रतारम्भः—

हस्तस्वेदस्रपित इव यश्चन्दनक्षोदवृन्दै-
 रालिप्तोऽलंकृतपरिसरः फुल्लकह्लारहारैः ।
 आराधीत्थं तव नवकुरङ्गाक्षि वक्षोजशम्भुः
 साक्षात्कारं तदपि न दिशत्येष किं वा करोमि ॥ २० ॥
 कान्ते नितान्तं दयिताकुचान्तचोलाञ्चलं कर्षति हर्षमुग्धे ।
 बभार बाला नमितास्यहास्यलेशापदेशादपरं निचोलम् ॥ २१ ॥
 (लक्ष्मणस्यैतौ)
 उरोरुहाम्भोरुहदर्शनाय विमुञ्चतः कञ्चुकबन्धनानि ।
 आनन्दनीराकुललोचनस्य प्रियस्य जातो विफलः प्रयासः ॥ २२ ॥
 कान्ते कलितचोलान्ते दीपे वैरिणि दिप्यति ।
 आसीदसितपद्माक्ष्याः पक्षो नयनमुद्रणम् ॥ २३ ॥
 (भानुकरस्यैतौ)

दृशा सपदि मीलितं दशनरोचिषा निर्गतं
 करेण परिवेपितं बलयकैरथाक्रन्दितम् ।

प्रियेण हरिणीदृशो दशनखण्ड्यमानेऽधरे

परव्यसनकातराः किमिव कुर्वतां साधवः ॥ २४ ॥

(कस्यापि)

अथ रतम्—

आकाशे नटनं सरोरुहयुगे मञ्जीरमञ्जुध्वनिः

शीतांशौ कलकूजितं किसलये पीयूषपानोत्सवः ।

स्वर्णक्षोणिधरे नखात्परिभवो ध्वान्ते कराकर्षणं

रम्भायां रसना रवस्तरुणयोः पुण्यानि मन्यामहे ॥ २५ ॥

हारलुप्यति कङ्कणं निपतति सङ्कोमुदी क्लिश्यति

ध्वान्तं धावति सीत्करोति रजनीजानिर्वली भज्यति (?) ।

काञ्ची क्षुभ्यति काञ्चनक्षितिधरे किं च क्षतं चञ्चति

प्रारम्भे मदनाहवस्य विजयी देवो मनोभूरभूत् ॥ २६ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

संन्यासमाय काञ्ची जहौ दुकूलं कलत्रमबलायाः ।

बिससर्ज रागमधरो मुक्तिमुरीचकिरे चिकुराः ॥ २७ ॥

(कस्यापि)

नैषा वेगं मृदुतरतनुस्तावकीनं विसोढुं

शक्ता नैनां चपल नितरां खेदयेन्दीवराक्षीम् ।

रत्यभ्यासं विदधत इति प्राणनाथस्य गत्वा

कर्णोपान्ते निभृतनिभृतं नूपुरं शंसतीव ॥ २८ ॥

(धूर्तस्य)

रतिरभसनितान्तश्रान्तकान्ताकुचान्त-

श्चलदमलकराग्रा नाभिदेशेष्वधो वा ।

स्मितमधुरमुखीनां हीणनेत्रोत्पलाना-

मधरमधु वधूनां भाग्यवन्तः पिबन्ति ॥ २९ ॥

(शार्ङ्गधरस्य)

प्रियेण हरिणीदृशो दशनखण्ड्यमानेऽधरे

परव्यसनकातराः किमिव कुर्वतां साधवः ॥ २४ ॥

(कस्यापि)

अथ रतम्—

आकाशे नटनं सरोरुहयुगे मञ्जीरमञ्जुध्वनिः

शीतांशौ कलकूजितं किसलये पीयूषपानोत्सवः ।

स्वर्णक्षोणिधरे नखात्परिभवो ध्वान्ते कराकर्षणं

रम्भायां रसना रवस्तरुणयोः पुण्यानि मन्यामहे ॥ २५ ॥

हारलुप्यति कङ्कणं निपतति सङ्कोमुदी क्लिश्यति

ध्वान्तं धावति सीत्करोति रजनीजानिर्वली भज्यति (?) ।

काञ्ची क्षुभ्यति काञ्चनक्षितिधरे किं च क्षतं चञ्चति

प्रारम्भे मदनाहवस्य विजयी देवो मनोभूरभूत् ॥ २६ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

संन्यासमाय काञ्ची जहौ दुकूलं कलत्रमबलायाः ।

बिससर्ज रागमधरो मुक्तिमुरीचकिरे चिकुराः ॥ २७ ॥

(कस्यापि)

नैषा वेगं मृदुतरतनुस्तावकीनं विसोढुं

शक्ता नैनां चपल नितरां खेदयेन्दीवराक्षीम् ।

रत्यभ्यासं विदधत इति प्राणनाथस्य गत्वा

कर्णोपान्ते निभृतनिभृतं नूपुरं शंसतीव ॥ २८ ॥

(धूर्तस्य)

रतिरभसनितान्तश्रान्तकान्ताकुचान्त-

श्चलदमलकराग्रा नाभिदेशेष्वधो वा ।

स्मितमधुरमुखीनां हीणनेत्रोत्पलाना-

मधरमधु वधूनां भाग्यवन्तः पिबन्ति ॥ २९ ॥

(शार्ङ्गधरस्य)

मज्जन्त्या रससिन्धौ किं किं न कृतं तथा सुदृशा ।

विधृताः प्रियस्य केशाः कपटे लभं भुजे वलितम् ॥ ३० ॥

(वाणीविलासस्य)

पत्युः प्रवृत्तस्य रतौ जिगीषावचो निशम्यापि न किञ्चिदूचे ।

कलावती किंतु विहस्य तस्य कपोलयोः खेदमपाचकार ॥ ३१ ॥

(रामचन्द्रस्य)

अथ विपरीतम्—

प्रशान्ते नूपुरारावे श्रूयते मेखलाध्वनिः ।

कान्ते बूनं रत्नश्रान्ते काशिनी पुरुषायते ॥ ३२ ॥

(कस्यापि)

विहायसि विहारिणी भवतु नाम सौदामनी

सुमेरुशिखरादधः पततु नाम मन्दाकिनी ।

इत्वं तु महद्भुतं यदयमेत्य भूमीतलं

नमनमृतवीभितिः कमलसारमाकर्षति ॥ ३३ ॥

(कस्यापि)

सधुपान्नसमुल्लसत्प्रवालं चलहेमाचलकान्तिभिर्जटालम् ।

विधुनिष्पतदन्धकारजालं शुभकालं न पुनर्विलोकयासः ॥ ३४ ॥

साक्षादभूत्स्वयंभूत्थ मुक्तास्तिभिरनिकरभराः ।

प्रणनाम शीतरोचिःस्तवपाठं मेखला विदधे ॥ ३५ ॥

(भासुकरस्यैतौ)

पुष्पत मेरोः सुरसिन्धुधारा ववर्ष तारागणमन्धकारः ।

बभूव भृङ्गावलिरप्यकम्पा शशाम शम्पालतिकाविलासः ॥ ३६ ॥

(कवीन्द्रस्य)

वलकुचं व्याकुलकेशपाशं त्रिधनुस्त्रिं स्वीकृतमन्दहासम् ।

पुण्यातिरेकात्पुरुषा लभन्ते पुंभावसम्भोरुहलोचनानाम् ॥ ३७ ॥

(कस्यापि)

मज्जन्या रससिन्धौ किं किं न कृतं तया सुदृशा ।

विधृताः प्रियस्य केशाः कण्ठे लभं भुजे वलितम् ॥ ३० ॥

(वाणीविलासस्य)

पत्युः प्रवृत्तस्य रतौ जिगीषावचो निशम्यापि न किञ्चिदूचे ।

कलावती किंतु विहस्य तस्य कपोलयोः खेदमपाचकार ॥ ३१ ॥

(रामचन्द्रस्य)

अथ विपरीतम्—

प्रशान्ते नूपुरारावे श्रूयते मेखलाध्वनिः ।

कान्ते ब्रूवं रत्नश्रान्ते काशिनी पुरुषायते ॥ ३२ ॥

(कस्यापि)

विहायसि विहारिणी भवतु नाम सौद्रामनी

सुमेरुशिखरादधः पततु नाम मन्दाकिनी ।

इत्वं तु महद्भुतं यदयमेत्य भूमीतलं

नमनसृतवीधितिः कमलसारमाकर्षति ॥ ३३ ॥

(कस्यापि)

सधुपान्नमुल्लसत्प्रवालं चलहेमाचलकान्तिभिर्जटालम् ।

विधुनिष्पतदन्धकारजालं शुभकालं न पुनर्विलोकयासः ॥ ३४ ॥

साक्षादभूत्स्वयंभूत्स्थ मुक्तास्तिभिरनिकरभराः ।

प्रणनाम शीतरोचिस्तवपादं मेखला विदधे ॥ ३५ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

पुष्पत मेरोः सुरसिन्धुधारा ववर्ष तारागणमन्धकारः ।

बभूव भृङ्गावलिरप्यकम्पा शशास शम्पालतिकाविलासः ॥ ३६ ॥

(कवीन्द्रस्य)

वलत्कुचं व्याकुलकेशपाशं स्त्रियन्मुखं स्त्रीकृतमन्वहासम् ।

पुण्यातिरेकात्पुरुषा लभन्ते पुंभावमम्भोरुहलोचनानाम् ॥ ३७ ॥

(कस्यापि)

पपात गङ्गा हरमौलिसङ्गादन्यं तमो जातमपेतबन्धम् ।
तडिलता चञ्चलतामहासीदस्पन्दमासीदरविन्दयुग्मम् ॥ ३८ ॥
(रामचन्द्रस्य)

अथ रतावसानम्—

मत्तेभकुम्भपरिणाहिनि कुङ्कुमाद्रौ
कान्तापयोधरयुगे रतिखेदखिन्नः ।
वक्षो निधाय भुजपञ्जरमध्यवर्ती
धन्यः क्षपां क्षपयति क्षणलब्धनिद्रः ॥ ३९ ॥
(भर्तृहरेः)

शान्ते मन्मथसंगरे रणभृतां सत्कारमातन्वती
वासोदाज्जघनस्य पीनकुचयोर्हारं श्रुतेः कुण्डलम् ।
मिथ्वीलस्य च वीटिकां सुनयना पञ्चां रणनूपुरौ
पृष्ठालम्बिनि केशपाशनिचये युक्तोऽभिवन्धकमः ॥ ४० ॥
(कस्यापि)

कामसंगरविधौ मृगीदृशः प्रौढपौरुषधरे पयोधरे ।
स्वेदराजिरुदियाय सर्वतः पुष्पवृष्टिरिव पुष्पधन्वनः ॥ ४१ ॥

अथ रताशंसनम्—

उक्तं यत्कृपणं वचो विरचितो भूयान्वसूनां व्ययः
सोढाः किं च वियोगवज्रततयो दूतीं मुहुः प्रेषिता ।
बद्धोऽयं प्रणयाञ्जलिर्विनिहिते बाष्पाम्बुधौते दृशी
निष्पीयाधरपल्लवं मृगदृशः सर्वं सखे विस्मृतम् ॥ ४२ ॥
(भानुकरस्यैतौ)

अथ रतनिद्रा—

मिश्रितोरु मिलिताधरं मिथः स्वप्नवीक्षितपरस्परक्रियम् ।
तौ ततोऽनु परिरम्भसंपुटे पीडनां विदधतौ निनिद्रतुः ॥ ४३ ॥
(श्रीहर्षस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मीणभट्टविरचितयां पद्यरचनायामष्टमो व्यापारः ॥

पपात गङ्गा हरमौलिसङ्गादन्धं तमो जातमपेतबन्धम् ।
तडिलता चञ्चलतामहासीदस्पन्दमासीदरविन्दयुग्मम् ॥ ३८ ॥
(रामचन्द्रस्य)

अथ रतावसानम्—

मत्तेभकुम्भपरिणाहिनि कुङ्कुमाद्रिं
कान्तापयोधरयुगे रतिखेदखिन्नः ।
वक्षो निधाय भुजपञ्जरमध्यवर्ती
धन्यः क्षपां क्षपयति क्षणलब्धनिद्रः ॥ ३९ ॥
(भर्तृहरेः)

शान्ते मन्मथसंगरे रणभृतां सत्कारमातन्वती
वासोदाज्जघनस्य पीनकुचयोर्हारं श्रुतेः कुण्डलम् ।
बिम्बोष्ठस्य च वीटिकां सुनयना पद्भ्यां रणनूपुरौ
पृष्ठालम्बिनि केशपाशनिचये युक्तोऽभिवन्धकमः ॥ ४० ॥
(कस्यापि)

कामसंगरविधौ मृगीदृशः प्रौढपौरुषधरे पयोधरे ।
स्वेदराजिरुदियाय सर्वतः पुष्पवृष्टिरिव पुष्पधन्वनः ॥ ४१ ॥

अथ रताशंसनम्—

उक्तं यत्कृपणं वचो विरचितो भूयान्वसूनां व्ययः
सोढाः किं च वियोगवज्रततयो दूती मुहुः प्रेषिता ।
बद्धोऽयं प्रणयाञ्जलिर्विनिहिते बीष्पाम्बुधौ दृशौ
निष्पीयाधरपल्लवं मृगदृशः सर्वं सखे विस्मृतम् ॥ ४२ ॥
(भानुकरस्यैतौ)

अथ रतनिद्रा—

मिश्रितोरु मिलिताधरं मिथः स्वप्नवीक्षितपरस्परक्रियम् ।
तौ ततोऽनु परिरम्भसंपुटे पीडनां विदधतौ निनिद्रतुः ॥ ४३ ॥
(श्रीहर्षस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मीणभट्टविरचितया पद्यरचनायामष्टमो व्यापारः ॥

नवमो व्यापारः ।

अथ प्रभातानुनयः—

गतप्राया रात्रिः शशिमुखि शशी शीर्यत इव
 प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णत इव ।
 प्रणामान्तो मानस्तदपि न जहासि कुधमहो
 कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमपि ते चण्डि कठिनम् ॥ १ ॥

क्षीणांशुः शशलाञ्छनः शशिमुखि क्षीणो न कोपस्तव
 स्मेरं पद्मवनं मनागपि न ते स्मेरं मुग्धाभोरुहम् ।
 पीतं श्रोत्रपुटेन षट्दरुतं पीतं न ते जल्पितं
 रक्ता पूर्वदिगङ्गना रविकरैर्नाद्यापि रक्तासि किम् ॥ २ ॥
 (कस्याप्येतौ)

अथ वायुः—

उत्सार्य कुन्तलमपास्य दुकूलमूल-
 मुन्नाम्य बाहुलतिकामलसास्तरुण्यः ।
 स्वेदाम्बुसिक्ततनवः स्पृहयन्ति यस्मै
 तस्मै नमः सुकृतिने मलयानिलाय ॥ ३ ॥

वासो विधूय स्तनयोरमुष्याः
 कपोलकीर्णा कबरीमुदस्य ।
 अवारितः प्रोञ्छति वारिधारां
 मुखे मृगाक्ष्याः सुकृती समीरः ॥ ४ ॥

झञ्झानिलोऽपि सुरतान्तनितान्ततान्त-
 कान्ताकुचान्तधनधर्ममपाकरोति ।
 भूयोऽभिलाषजननी पुनरन्यथैव
 स्वेदापनोदनकला मलयानिलस्य ॥ ५ ॥

मिक्षितकमलकुटुम्बाः शिक्षितगजगामिनीगतयः ।
 लक्षितहिमगिरिपादाः प्रातरमी मातरिश्चानः ॥ ६ ॥

नवमो व्यापारः ।

अथ प्रभातानुनयः—

गतप्राया रात्रिः शशिमुखि शशी शीर्यत इव
 प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णत इव ।
 प्रणामान्तो मानस्तदपि न जहासि क्रुधमहो
 कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमपि ते चण्डि कठिनम् ॥ १ ॥
 क्षीणांशुः शशलाञ्छनः शशिमुखि क्षीणो न कोपस्तव
 स्मेरं पद्मवनं मनागपि न ते स्मेरं मुखाम्भोरुहम् ।
 पीतं श्रोत्रपुटेन षट्पदरुतं पीतं न ते जल्पितं
 रक्ता पूर्वदिगङ्गना रविकरैर्नाद्यापि रक्तासि किम् ॥ २ ॥
 (कस्याप्येतौ)

अथ वायुः—

उत्सार्य कुन्तलमपास्य दुकूलमूल-
 मुन्नाम्य बाहुलतिकामलसास्तरुण्यः ।
 स्वेदाम्बुसिक्ततनवः स्पृहयन्ति यस्मै
 तस्मै नमः सुकृतिने मलयानिलाय ॥ ३ ॥
 वासो विधूय स्तनयोरमुष्याः
 कपोलक्रीणां कवरीमुदस्य ।
 अवारितः प्रोञ्छति वारिधारां
 मुखे मृगाक्ष्याः सुकृती समीरः ॥ ४ ॥
 झञ्झानिलोऽपि सुरतान्तनितान्ततान्त-
 कान्ताकुचान्तघनधर्ममपाकरोति ।
 भूयोऽभिलाषजननी पुनरन्यथैव
 स्वेदापनोदनकला मलयानिलस्य ॥ ५ ॥
 भिक्षितकमलकुटुम्बाः शिक्षितगजगामिनीगतयः ।
 लक्षितहिमगिरिपादाः प्रातरमी मातरिश्वानः ॥ ६ ॥

पद्यरचना ।



लतां पुष्पवतीं स्पृष्ट्वा स्नातो विमलवारिणा
पुनः संपर्कशङ्क्रीव मन्दं चरति मारुतः ॥ ७ ॥

लवङ्गलतिकाभङ्गदयालुर्दक्षिणानिलः ।

कथमुन्मूलयत्येष मानिनीमानपर्वतान् ॥ ८ ॥

(केषामप्येते)

चोलाङ्गनाकुचनिचोलतलानुलीनो

द्राक्केरलीतरलकुन्तलकम्पनोत्कः(लोलः) ।

लाटीललाटतटशोषणमानसोऽयं

फुल्लारविन्दवनबन्धुरूपैति वायुः ॥ ९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ प्रभातम्—

विरलविरलीभूतास्ताराः कलौ सुजना इव

व्यपसरति च ध्वान्तं चित्तात्सतामिव दुर्जनः ।

मन इव मुनेः सर्वत्रापि प्रसन्नमभून्नभो

विगलति निशा क्षिप्रं लक्ष्मीरनुद्यमिनामिव ॥ १० ॥

अभूत्प्राची पिङ्गा रसपतिरिव प्राश्य कनकं

गतच्छायश्चन्द्रो बुधजन इव ग्राम्यसदसि ।

क्षणं क्षीणास्तारा नृपतय इवानुद्यमपरा

न दीपा राजन्ते द्रविणरहितानामिव गुणाः ॥ ११ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

अयमुदयमहीभृन्मूर्ध्नि पाणिं गृहीत्वा

दिवसपतिरहौषीदिन्दुपादान्हवीषि ।

अरुणकिरणवह्नौ कन्यका पौरुहूती

हरिदपि किमकार्षीत्तारकालाजहोमम् ॥ १२ ॥

संनिगृह्य चिकुरं तमोमयं यामिनी तदनु केलिविच्युतम् ।

कुर्वती श्रवसि चन्द्रमण्डलं कुण्डलं गगनकुञ्जमुज्जति ॥ १३ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

पद्यरचना ।



लतां पुष्पवतीं स्पृष्ट्वा स्नातो विमलवारिणः ।

पुनः संपर्कशङ्कीव मन्दं चरति मारुतः ॥ ७ ॥

लवङ्गलतिकाभङ्गदयालुर्दक्षिणानिलः ।

कथमुन्मूलयत्येष मानिनीमानपर्वतान् ॥ ८ ॥

(केषामप्येते)

चोलाङ्गनाकुचनिचोलतलानुलीनो

द्राक्केरलीतरलकुन्तलकम्पनोत्कः(लोलः) ।

लाटीललाटतटशोषणमानसोऽयं

फुल्लारविन्दवनबन्धुरूपैति वायुः ॥ ९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ प्रभातम्—

विरलविरलीभूतास्ताराः कलौ सुजना इव

व्यपसरति च ध्वान्तं चित्तात्सतामिव दुर्जनः ।

मन इव मुनेः सर्वत्रापि प्रसन्नमभून्नभो

विगलति निशा क्षिप्रं लक्ष्मीरनुद्यमिनामिव ॥ १० ॥

अभूत्पाची पिङ्गा रसपतिरिव प्राश्य कनकं

गतच्छायश्चन्द्रो बुधजन इव ग्राम्यसदसि ।

क्षणं क्षीणास्तारा नृपतय इवानुद्यमपरा

न दीपा राजन्ते द्रविणरहितानामिव गुणाः ॥ ११ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

अयमुदयमहीभृन्मूर्ध्नि पाणिं गृहीत्वा

दिवसपतिरहौषीदिन्दुपादान्हवीषि ।

अरुणकिरणवह्नौ कन्यका पौरुहूती

हरिदपि किमकार्षीत्तारकालाजहोमम् ॥ १२ ॥

संनिगृह्य चिकुरं तमोमयं यामिनी तदनु केलिविच्युतम् ।

कुर्वती श्रवसि चन्द्रमण्डलं कुण्डलं गगनकुञ्जमुज्जति ॥ १३ ॥

(मानुकरस्यैतौ)

कोकानुद्धीवयन्तः पथि पथि कुलटामानसं कम्पयन्तः
 प्रस्थातारं विभक्तैः प्रियतममंबला गाढमालिङ्गयन्तः ।
 उत्थातुं चाङ्गभङ्गीः कुलकमलदृशां कारयन्तो निशान्ते
 कूकाराः कुकुटानां मधुमधुरसमारम्भगम्भीरधीराः ॥ १४ ॥
 वृन्देन तारावलितन्दुलानामङ्गेन च श्रीफलपल्लवेन ।
 अभ्यर्च्य जोगेश्वरमिन्दुबिम्बं विसर्जयत्येष नभो मुनीन्द्रः ॥ १५ ॥
 (एतौ गणपतेः)

अनुनयमगृहीत्वा व्योजसुप्ता पराची
 रुतमथ कृकवाकोस्तारमाकर्ण्य कल्ये ।
 कथमपि परिवृत्ता निद्रयान्धा किल स्त्री
 मुकुलितनयनैवाश्लिष्यति प्राणनाथम् ॥ १६ ॥
 (मोर्धस्य)

वियोगार्तिमलिन्याः किं नलिन्या नलिनीधवः ।
 करैर्निःसारयांचक्रे दुःखशैल्यमलिच्छलात् ॥ १७ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ मध्याह्नः—

दुःसहसंतापमयात्सैप्रति मध्यस्थिते दिवसमाथे ।
 छायामिव बाञ्छन्ती छायापि गता तरुतलानि ॥ १८ ॥
 (अघन्तिवर्मणः)

मध्याह्नमीयुषि रवौ बत पादपस्य
 छायाभितापभयतौ भजते द्रुमूलम् ।
 सदृश्य ॥ १९ ॥

मध्याह्ने मूनमापीडयि तिग्मतापीपशान्तये ।
 वधुः कमलिनीपत्रमातपत्रमिवोपरि ॥ २० ॥
 (रामचन्द्रस्यैतौ)

कोकानुद्वीवयन्तः पथि पथि कुलटामानसं कम्पयन्तः

प्रस्थातारं विभातैः प्रियतममंबला गाढमालिङ्गयन्तः ।

उत्थातुं चाङ्गभङ्गीः कुलकमलदृशां कारयन्तो निशान्ते

कूकाराः कुकुटानां मधुमधुरसमारम्भगम्भीरधीराः ॥ १४ ॥

वृन्देन तारावलितन्दुलानामङ्गेन च श्रीफलपल्लवेन ।

अभ्यर्च्य जोगेश्वरमिन्दुबिम्बं विसर्जयत्येष नभो मुनीन्द्रः ॥ १५ ॥

(एतौ गणपतेः)

अनुनयमगृहीत्वा व्योजसुप्ता पराची

रुतमथ कृकवाकोस्तारमाकर्ण्य कल्ये ।

कथमपि परिवृत्ता निद्रयान्धा किल स्त्री

मुकुलितनयनैवाश्लिष्यति प्राणनाथम् ॥ १६ ॥

(मोघस्य)

वियोगार्तिमलिन्याः किं नलिन्या नलिनीधवः ।

करैर्निसारयांचक्रे दुःखशैल्यमलिच्छलात् ॥ १७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ मध्याह्नः—

दुःसहसंतापमयात्सैप्रति मध्यस्थिते दिवसमाथे ।

छायामिव बाञ्छन्ती छायापि गता तरुतलानि ॥ १८ ॥

(अश्वन्तिवर्मणः)

मध्याह्नमीयुषि रवौ बत पादपस्य

छायाभितापमयतो भजते द्रुमूलम् ।

सदृश्य

॥ १९ ॥

मध्याह्ने मूनमायोऽपि तिग्मतापीपशान्तये ।

वधुः कमलिनीपत्रमातपत्रमिवोपरि ॥ २० ॥

(रामचन्द्रस्यैतौ)

अस्वाध्यायः पिकानां मदतमखसमारम्भणस्त्राधिमासो
निद्राया जन्मलम्बं किमपि मधुलिहां कोऽपि दुर्भिक्षकालः ।
त्रिद्विर्यात्रोत्सुकानां मलयजमरुतां पान्थकान्ताकृतान्तः
प्रालेयोन्मूलमूलं समजनि समयः कश्चिदौत्पात्तिकोऽयम् ॥ २१ ॥
(वाहिनीपतेः)

बहद्बहलमारुतप्रसरदग्निखण्डैरिव
स्फुरद्बभ्रुमणिमण्डलद्युतिवितानकैस्तापिता ।
विसारि वपुरात्मनः सपदि वासरश्रीरिमं
न्नलन्मरुमरीचिकानिचयपलवेनाञ्चति ॥ २२ ॥
भान्नोः पादैर्दहनपरुषैर्दहसान्तराणा-
मुत्क्रासन्तः किल विटपितां प्राणपिण्डा इवामी ।
गाढोदन्याकुलितमनसो भिन्नचञ्चुपुटान्ताः
कोकूयन्ते विहगशिशवः कोटराणां मुखेषु ॥ २३ ॥
(एतौ गणपतेः)

अथ जलक्रीडा—

अंसेन कर्णं चिबुकेन वक्षः करद्वयेनाक्षि तिरोदधानः ।
संताडयामास हरिः समेताश्चकोरनेत्राश्चुलकोदकेन ॥ २४ ॥
परस्पराश्लेषवशंगतानि द्वन्द्वानि विहस्य काचित् ।
संताड्य पद्मैः स्वलदंशुकान्ता कृष्णाय कान्ता कथयावभूव ॥ २५ ॥
हिया सखीनां हरिरम्बुजाक्षी मिरा परावर्तयितुं न शक्ते ।
अनङ्गलेखाक्षरसंगतेन संताडयामास सरोरुदेन ॥ २६ ॥
(गणपतेरेतौ)

आत्तमात्तमधिकान्तमुक्षितुं कातरा शफरसङ्घिनी जहौ ।
अङ्गलौ जलमधीरलोचना ॥ २७ ॥

अविस्तमिदमस्मः स्वेच्छयोच्छालयन्त्य
कमलमुकुलकान्तोत्तानद्वयेन ।

अस्वाध्यायः पिकानां मदतमखसमारम्भणस्त्राभिमासो
निद्राया जन्मलसं किमपि सधुलिह्वां कोऽपि दुर्भिक्षकालः ।
त्रिद्विर्ग्योत्रोत्सुकानां मलयजमरुतां पान्थकान्ताकृतान्तः
प्रालेयोन्मूलमूलं समजनि समयः कश्चिदौत्पात्तिकोऽयम् ॥ ११ ॥
(वाहिनीपतेः)

बह्वह्वलमारुतप्रसरदग्निस्वण्डैरिव
स्फुरद्भुमणिमण्डलद्युतिवितानकैस्तापिता ।
विसारि वपुरात्मनः सपदि वासरश्रीरिमं
चलन्मरुमरीचिकानिचयपल्लवेनाञ्चति ॥ २२ ॥
भान्तोः पादैर्दहनपरुषैर्दहमान्तान्तराणा-
मुत्क्रासन्तः किल विटपितां प्राणपिण्डा इवामी ।
गाढोदन्याकुलितमनसो भिन्नचञ्चुपुटान्ताः
कोकूयन्ते विहगशिशवः कोटराणां मुखेषु ॥ २३ ॥
(एतौ गणपतेः)

अथ जलक्रीडा—

अंसेन कर्षं चिबुकेन वक्षः करद्वयेनाक्षि तिरोदधानः ।
संताड्यामास हरिः समेताश्चकोरनेत्राश्चुलकोदकेन ॥ २४ ॥
परस्पराश्लेषवशंगतानि द्वन्द्वानि विहस्य काचित् ।
संताड्य पद्मैः स्खलदंशुकान्ता कृष्णाय कान्ता कश्चावभूव ॥ २५ ॥
हिया सखीनां हरिरम्बुजाक्षी मिसा परावर्तयितुं न मेहे ।
अनङ्गलेखाक्षरसंगतेन संताड्यामास सरोस्वये ॥ २६ ॥
(गणपतेरेतौ)

आत्तमात्तमधिकान्तमुक्षितुं कातरा शफरसङ्घिनी जहौ ।
अङ्गलौ जलमधीरलोचना ॥ २७ ॥
आविस्तमिदमस्मः स्नेह्योच्छलयन्मम
कमलमुकुलकान्तोत्तानहृदयेन ।

परिकलित इवार्घः कामबाणातिथिभ्यः

सलिलमिव वितीर्णं बाललीलासुखाय ॥ २८ ॥

(कस्यापि)

अथ वनक्रीडा—

पतितैः शिरीषरजसां निकरैः कलुषीकृतं नयननीररुहम् ।

हरिणा हिरण्यरमणीयतनोर्मुखमारुतैः किमपि शीतलितम् ॥ २९ ॥

अबलाकृतिं समुपकल्प्य शनैर्व्रजता ।

कपटेन कैटभजिता हसता वनिता धृता करसरोरुहयोः ॥ ३० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

असंख्यपुष्पोऽपि मनोभवस्य पञ्चैव बाणार्थमयं ददाति ।

एवं कदर्यत्वमिवावधार्य सर्वस्वमग्राहि मधोर्वधूभिः ॥ ३१ ॥

(बिह्वस्य)

पाणौ पद्माधिया मधूककुसुमभ्रान्त्या तथा गण्डयो-

नीलेन्दीवरशङ्कया नयनयोर्बन्धूकबुद्ध्याधरे ।

लीयन्ते कबरीभरे निजकुले व्यामोहजातस्पृहा

दुर्वारा मधुपाः कियन्ति तरुणि स्थानानि रक्षिष्यसि ॥ ३२ ॥

(अचलस्य)

रम्भोरु देहपरिरम्भभरैस्त्वदीयै-

र्यन्मानसं विकृतिमेति न चित्रमेतत् ।

त्वत्पादपद्मलवसङ्गवशादशोको

रोमाञ्चमञ्चति दलत्कलिकाछलेन ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ भ्रमरीनृत्यक्रीडा—

भ्रमात्प्रकीर्णे भ्रमरीषु किञ्चिच्चेलाञ्चले चञ्चललोचनानाम् ।

कुचौ कदाचिज्जघनं युवानो विलोक्य साफल्यमवापुरक्ष्णाम् ॥ ३४ ॥

परिभ्रमन्त्या भ्रमरीविनोदे नितम्बबिम्बाद्विगलदुक्कूलम् ।

परिकलित इवार्धः कामबाणातिथिभ्यः

सलिलमिव वितीर्णं बाललीलासुखाय ॥ २८ ॥

(कस्यापि)

अथ वनक्रीडा—

पतितैः शिरीषरजसां निकरैः कलुषीकृतं नयननीररुहम् ।

हरिणा हिरण्यरमणीयतनोर्मुखमारुतैः किमपि शीतलितम् ॥ २९ ॥

अबलाकृतिं समुपकल्प्य शनैर्व्रजता ।

कपटेन कैटभजिता हसता वनिता धृता करसरोरुहयोः ॥ ३० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

असंख्यपुष्पोऽपि मनोभवस्य पञ्चैव बाणार्थमयं ददाति ।

एवं कदर्यत्वमिवावधार्य सर्वस्वमग्राहि मधोर्वधूभिः ॥ ३१ ॥

(बिह्णस्य)

पाणौ पद्माधिया मधूककुसुमभ्रान्त्या तथा गण्डयो-

नीलेन्दीवरशङ्कया नयनयोर्बन्धूकबुद्ध्याधरे ।

लीयन्ते कबरीभरे निजकुले व्यामोहजातस्पृहा

दुर्वारा मधुपाः कियन्ति तरुणि स्थानानि रक्षिष्यसि ॥ ३२ ॥

(अचलस्य)

रम्भोरु देहपरिरम्भभरैस्त्वदीयै-

र्यन्मानसं विकृतिमेति न चित्रमेतत् ।

त्वत्पादपद्मलवसङ्गवशादशोको

रोमाञ्चमञ्चति दलत्कलिकाछलेन ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ भ्रमरीनृत्यक्रीडा—

भ्रमात्प्रकीर्णं भ्रमरीषु किञ्चिच्चेलाञ्चले चञ्चललोचनानाम् ।

कुचौ कदाचिज्जघनं युवानो विलोक्य साफल्यमवापुरक्षणां ॥ ३४ ॥

परिभ्रमन्त्या भ्रमरीविनोदे नितम्बबिम्बाद्विगलहुकूलम् ।

विलोक्य कस्याश्चन कोमलाङ्गचाः पुंभावमन्याः सुदृशो ववाञ्छुः ॥ ३५ ॥

(गुणाकरस्यैतौ)

चेलाञ्चलेन चलहारलताप्रकाण्डै-

र्वेणीगुणेन च चलद्वलयीकृतेन ।

हेलाहितभ्रमरकभ्रममण्डलीभि-

श्छत्रत्रयं रचयतीव चिरं नतभ्रूः ॥ ३६ ॥

मुक्ते काञ्चनकुण्डले निपतिते माणिक्यभूषामणौ

कीर्णे केलिसरोरुहे विगलिते मुक्ताकलापे सति ।

निःश्वस्याम्बुजलोचना भ्रमरिकानृत्यावसाने पुनः

प्राणेशच्युतिशङ्कयेव हृदये हस्तारविन्दं ददौ ॥ ३७ ॥

अलक्षितकुचाभोगं भ्रमन्ती नृत्यभूमिषु ।

सरेणापि सरोजाक्षी न लक्ष्यीक्रियते शरैः ॥ ३८ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

अथ कन्दुकक्रीडा—

सानन्दकन्दुकविहारविधौ वधूनां

दोलायमानमणिकङ्कणनिकणेन ।

उड्डायितेषु युवचित्तविहङ्गमेषु

श्येना इव स्मृतिभुवो विशिखा विलम्बाः ॥ ३९ ॥

अमच्चरणपल्लवकणदमन्दमञ्जीरकं

परिस्खलदुरोहस्तबककम्पमानांशुकम् ।

रणत्कनकमेखलं करसरोरुहाभ्यां पुरः

पतन्तमपराददे कुसुमकन्दुकं सुन्दरी ॥ ४० ॥

(एतौ गणपतेः)

पयोधराकारधरो हि कन्दुकः करेण रोषादिव ताड्यते मुहुः ।

इतीव नेत्राकृति भीतमुत्पलं तस्याः प्रसादाय पपात पादयोः ॥ ४१ ॥

(कालिदासस्य)

विलोक्य कस्याश्चन कोमलाङ्गचाः पुंभावमन्याः सुदृशो ववाञ्छुः ॥ ३५ ॥

(गुणाकरस्यैतौ)

चेलाञ्चलेन चलहारलताप्रकाण्डै-

र्वेणीगुणेन च चलद्वलयीकृतेन ।

हेलाहितभ्रमरकभ्रममण्डलीभि-

श्छत्रत्रयं रचयतीव चिरं नतभ्रूः ॥ ३६ ॥

मुक्ते काञ्चनकुण्डले निपतिते माणिक्यभूषामणौ

कीर्णे केलिसरोरुहे विगलिते मुक्ताकलोपे सति ।

निःश्वस्याम्बुजलोचना भ्रमरिकानृत्यावसाने पुनः

प्राणेशच्युतिशङ्कयेव हृदये हस्तारविन्दं ददौ ॥ ३७ ॥

अलक्षितकुचाभोगं भ्रमन्ती नृत्यभूमिषु ।

सरेणापि सरोजाक्षी न लक्ष्यीक्रियते शरैः ॥ ३८ ॥

(एतौ भानुकरस्य)

अथ कन्दुकक्रीडा—

सानन्दकन्दुकविहारविधौ वधूनां

दोलायमानमणिकङ्कणनिकणेन ।

उज्झायितेषु युवचित्तविहङ्गमेषु

श्येना इव स्मृतिभुवो विशिखा विलम्बाः ॥ ३९ ॥

अमच्चरणपल्लवकणदमन्दमञ्जीरकं

परिस्खलदुरोहस्तबककम्पमानांशुकम् ।

रणत्कनकमेखलं करसरोरुहाभ्यां पुरः

पतन्तमपराददे कुसुमकन्दुकं सुन्दरी ॥ ४० ॥

(एतौ गणपतेः)

पयोधराकारधरो हि कन्दुकः करेण रोषादिव ताड्यते मुहुः ।

इतीव नेत्राकृति भीतमुत्पलं तस्याः प्रसादाय पपात पादयोः ॥ ४१ ॥

(कालिदासस्य)

अथ दृङ्गीलनक्रीडा—

नैतस्याः प्रसृतिद्वयेन सरले शक्ये पिघातुं दृशौ
 सर्वत्रैव विलोक्यते मुखशशिज्योत्स्नावितानैरियम् ।
 इत्थं बालतया सखीभिरसकृद्दृङ्गीलनाकेलिषु
 व्या(षि)द्धा रजनीमुखे च नयने स्वे गर्हते कन्यका ॥ ४२ ॥
 (कस्यापि)

एनं विहाय तुलसीविपिनोपकण्ठं
 गोप्यः परत्र नयनाम्बुजमीलनानि ।
 कुर्वन्तु किंतु तुलसीदलनीलभासं
 का वा मुकुन्दमनुविन्दतु लीनमस्मिन् ॥ ४३ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ हिन्दोलक्रीडा—

दृशा विदधिरे दिशः कमलराजिनीराजिताः
 कृता हसितरोचिषा हरिति चन्द्रिकावृष्टयः ।
 अकारि हरिणीदृशः प्रबलदण्डकप्रस्फुर-
 द्रपुर्विपुलरोचिषा वियति विद्युतां विभ्रमः ॥ ४४ ॥
 (गणपतेः)

उन्नम्य दूरं मुहुरानमन्त्यः कान्ताः श्लथीभूतनितम्बबिम्बाः ।
 दोलाविलासेन जितश्रमत्वात्प्रकर्षमापुः पुरुषायितेषु ॥ ४५ ॥
 (बिह्णस्य)

दोलायमानाः प्रियनुद्यमानहिन्दोलया बालचमूरुनेत्राः ।
 प्रसारिदेहद्युतिवारिपूरे वितेनिरे विप्लवनानि भूयः ॥ ४६ ॥
 (गदाधरस्य)

अथ संध्या—

अस्ताद्रिलम्बिरविविम्बतयोदयाद्रि-
 चूडोन्मिषत्सकलचन्द्रतया च सायम् ।

अथ दृङ्गीलनक्रीडा—

नैतस्याः प्रसृतिद्वयेन सरले शक्ये पिघातुं दृशौ
 सर्वत्रैव विलोक्यते मुखशशिज्योत्स्नावितानैरियम् ।
 इत्थं बालतया सखीभिरसकृद्दृङ्गीलनाकेलिषु
 व्या(षि)द्धा रजनीमुखे च नयने स्वे गर्हते कन्यका ॥ ४२ ॥
 (कस्यापि)

एनं विहाय तुलसीविपिनोपकण्ठं
 गोप्यः परत्र नयनाम्बुजमीलनानि ।
 कुर्वन्तु किंतु तुलसीदलनीलभासं
 का वा मुकुन्दमनुविन्दतु लीनमस्मिन् ॥ ४३ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ हिन्दोलक्रीडा—

दृशा विदधिरे दिशः कमलराजिनीराजिताः
 कृता हसितरोचिषा हरिति चन्द्रिकावृष्टयः ।
 अकारि हरिणीदृशः प्रबलदण्डकप्रस्फुर-
 द्रुपुर्विपुलरोचिषा वियति विद्युतां विभ्रमः ॥ ४४ ॥
 (गणपतेः)

उन्नम्य दूरं मुहुरानमन्त्यः कान्ताः श्लथीभूतनितम्बबिम्बाः ।
 दोलाविलासेन जितश्रमत्वात्प्रकर्षमापुः पुरुषायितेषु ॥ ४५ ॥
 (बिह्मणस्य)

दोलायमानाः प्रियनुद्यमानहिन्दोलया बालचमूरुनेत्राः ।
 प्रसारिदेहद्युतिवारिपूरे वितेनिरे विप्लवनानि भूयः ॥ ४६ ॥
 (गदाधरस्य)

अथ संध्या—

अस्ताद्रिलम्बिरविविम्बतयोदयाद्रि-
 चूडोन्मिषत्सकलचन्द्रतया च सायम् ।

संध्याप्रनृत्तहरहस्तगृहीतकांस्य-

तालद्वयेव समलक्ष्यत नाकलक्ष्मीः ॥ ४७ ॥

(रत्नाकरस्य)

उच्चैस्तरादम्बरशैलमौलेश्च्युतो रविर्गैरिकगण्डशैलः ।

तस्यैव पातेन विचूर्णितस्य संध्यारजोराजिरिवोज्जिहीते ॥ ४८ ॥

(श्रीहर्षस्य)

प्रकटयति वियोगिप्रेयसीविप्रतीपो

भुवनविजययात्राडम्बरं शम्बरारिः ।

यदिह जयति संध्याकैतवेनासमन्ता-

दरुणवसनलेखा काचिदेषा लसन्ती ॥ ४९ ॥

मृगाङ्गमागतं वीक्ष्य संध्या कुलवधूरिव ।

दीपलेखामिषादेषा निर्विवेश निकेतनम् ॥ ५० ॥

(भानुकरस्य)

अथान्धकारः—

चरमगिरिनिकुञ्जमुष्णभानौ भगवति गच्छति विप्रयोगखिन्ना ।

मुकुलितनयनाम्बुजा धरित्री वपुषि बभार तमांसि शैवलानि ॥ ५१ ॥

(भानुकरस्य)

इदं नभसि भीषणभ्रमदुल्लूककोलाहलै-

र्निशाचरविलासिनीनिवहदत्तनेत्रोत्सवम् ।

परिस्फुरति निर्मलप्रचुरपङ्कममोलस-

द्वराहकुलमांसलप्रबलबन्धमन्धं तमः ॥ ५२ ॥

(वासुदेवस्य)

अथाभिसारिका—

गाढे तमसि सरन्ती पथि स्वलन्ती सुपिच्छले मुग्धा ।

अवलम्बनाय चाराद्वारासु करं प्रसारयति ॥ ५३ ॥

चित्रोत्कीर्णादपि विषधराद्वीतिभाजो निशायां

किं नु ब्रूमस्त्वदभिसरणे साहसं नाथ तस्याः ।

संध्याप्रनृत्तहरहस्तगृहीतकांस्य-

तालद्वयेव समलक्ष्यत नाकलक्ष्मीः ॥ ४७ ॥

(रत्नाकरस्य)

उच्चैस्तरादम्बरशैलमौलेश्च्युतो रविर्गैरिकगण्डशैलः ।

तस्यैव पातेन विचूर्णितस्य संध्यारजोराजिरिवोज्जिहीते ॥ ४८ ॥

(श्रीहर्षस्य)

प्रकटयति वियोगिप्रेयसीविप्रतीपो

भुवनविजययात्राडम्बरं शम्बरारिः ।

यदिह जयति संध्याकैतवेनासमन्ता-

दरुणवसनलेखा काचिदेषा लसन्ती ॥ ४९ ॥

मृगाङ्गमागतं वीक्ष्य संध्या कुलवधूरिव ।

दीपलेखामिषादेषा निर्विवेश निकेतनम् ॥ ५० ॥

(भानुकरस्य)

अथान्धकारः—

चरमगिरिनिकुञ्जमुष्णभानौ भगवति गच्छति विप्रयोगसिन्ना ।

मुकुलितनयनाम्बुजा धरित्री वपुषि बभार तमांसि शैवलानि ॥ ५१ ॥

(भानुकरस्य)

इदं नभसि भीषणभ्रमदुल्लूककोलाहलै-

र्निशाचरविलासिनीनिवहदत्तनेत्रोत्सवम् ।

परिस्फुरति निर्मलप्रचुरपङ्कममोलस-

द्राहकुलमांसलप्रबलबन्धमन्धं तमः ॥ ५२ ॥

(वासुदेवस्य)

अथाभिसारिका—

गाढे तमसि सरन्ती पथि स्वलन्ती सुपिच्छले मुग्धा ।

अवलम्बनाय चाराद्वारासु करं प्रसारयति ॥ ५३ ॥

चित्रोत्कीर्णादपि विषधराद्धीतिभाजो निशायां

किं नु ब्रूमस्त्वदभिसरणे साहसं नाथ तस्याः ।

ध्वान्ते यान्त्या यदतिनिभृतं बालयात्मप्रकाश-

त्रासात्पाणिः पथि फणिफणारत्नरोधी व्यधायि ॥ ५४ ॥

(कस्यापि) [हरिहरस्य]

रभसादभिसर्तुमुद्यतानां वनितानां सखि वारिदो विवस्वान् ।

रजनी दिवसोऽन्धकारमर्चिर्विपिनं वेश्म विमार्ग एव मार्गः ॥ ५५ ॥

(भानुकरस्य)

गन्तुं यदि व्यवसितासि घनान्धकारे

नीलाञ्जलेन तनुमावृणु मुग्धशीले ।

विद्युलता यदि पथि प्रतिरोधिनी स्या-

दप्रावृतैव कनकद्रवगौरि गच्छेः ॥ ५६ ॥

(कस्यापि)

मन्दं निधेहि चरणौ परिधेहि नीलं

वासः पिधेहि वलयावलिमञ्जलेन ।

मा जल्प साहसिनि शारदचन्द्रकान्त-

दन्तांशवस्तव तमांसि समापयन्ति ॥ ५७ ॥

(कस्यापि)

एकत्र कौलव्रतभङ्गशङ्का विदग्धताभङ्गभयं परत्र ।

इत्याकुलानां कुलकामिनीनां गतागतैरेव गता त्रियामा ॥ ५८ ॥

(कस्यापि)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां नवमो व्यापारः ॥

दशमो व्यापारः ।

अथ चक्रवाकावस्था—

वापीतोयं तटरुहवनं पद्मिनीपत्रशय्या

चन्द्रालोको विकचकुसुदामोदहृद्यः समीरः ।

यत्रैतेऽपि प्रियविरहिणो दाहिनश्चक्रनाम्न-

स्तत्रोपायः क इव भवतु प्राणसंधारणे यः ॥ १ ॥

ध्वान्ते यान्त्या यदतिनिभृतं बालयात्मप्रकाश-

त्रासात्पाणिः पथि फणिफणारत्नरोधी व्यधायि ॥ ५४ ॥

(कस्यापि) [हरिहरस्य]

रभसादभिसर्तुमुद्यतानां वनितानां सखि वारिदो विवस्वान् ।

रजनी दिवसोऽन्धकारमर्चिर्विपिनं वेश्म विमार्ग एव मार्गः ॥ ५५ ॥

(भानुकरस्य)

गन्तुं यदि व्यवसितासि घनान्धकारे

नीलाञ्चलेन तनुमावृणु मुग्धशीले ।

विद्युलता यदि पथि प्रतिरोधिनी स्या-

दप्रावृत्तैव कनकद्रवगौरि गच्छेः ॥ ५६ ॥

(कस्यापि)

मन्दं निधेहि चरणौ परिधेहि नीलं

वासः पिधेहि वलयावलिमञ्चलेन ।

मा जल्प साहसिनि शारदचन्द्रकान्त-

दन्तांशवस्तव तमांसि समापयन्ति ॥ ५७ ॥

(कस्यापि)

एकत्र कौलन्नतमङ्गशङ्का विदग्धताभङ्गभयं परत्र ।

इत्याकुलानां कुलकामिनीनां गतागतैरेव गता त्रियामा ॥ ५८ ॥

(कस्यापि)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां नवमो व्यापारः ॥

दशमो व्यापारः ।

अथ चक्रवाकावस्था—

वापीतोयं तटरुहवनं पद्मिनीपत्रशय्या

चन्द्रालोको विकचकुमुदामोदहृद्यः समीरः ।

यत्रैतेऽपि प्रियविरहिणो दाहिनश्चक्रनाम्न-

स्तत्रोपायः क इव भवतु प्राणसंधारणे यः ॥ १ ॥

भङ्क्त्वा भोक्तुं न भुङ्क्ते कुटिलविसलताकोटिमिन्दोर्वितर्का-
 ताराकारास्तृषार्तः पिबति न पयसां विप्रुषः पत्रसंस्थाः ।
 छायामम्भोरुहाणामलिकुलमलिनां वेत्ति संध्यामसंध्यां
 कान्ताविश्लेषभीरुर्दिनमपि रजनीं मन्यते चक्रवाकः ॥ २ ॥

[एष रुद्रस्य] (कयोरप्येतौ)

अथ तारावर्णनम्—

सिन्धोः सुधांशुशकलं परिगृह्य संध्या
 क्षेमंकरी निपतिताम्बरभूरुहाग्रे ।
 चञ्चूपुटेन चपलेन तया विकीर्णा-
 स्तारामिषेण पतिता इव पक्षखण्डाः ॥ ३ ॥

व्योम्नि प्राङ्गणसीम्नि सांध्यकिरणं विस्तार्य चेलाञ्चलं
 ध्वान्तैः कर्मणपांसुभिश्च जगतां द्राब्धोहयित्वा दृशौ ।
 ताराशौक्तिकमौक्तिकानि विहगश्रेणीरवच्छन्नाना
 जिजिह्वृत्य च मायिकः स्मरनटो वक्राढ्यहिर्वर्षति ॥ ४ ॥
 (भानुकरस्यैतौ)

इयं संध्यातल्पं किमकृत.....

प्रवालैर्माहेन्द्री हरिदहिमभानोर्विरहिता ।
 यदेषां वृन्तेषु स्फुरदमलमुक्ताचयरुचिः
 [स्फुटं] वारां बिन्दुप्रकर इव तारापरिकरः ॥ ५ ॥

अम्बरविपिनमिदानीं तिमिरवराहोऽवगाहते जलधेः ।
 रोमसु यदस्य लम्मास्तारकजलबिन्दवो भान्ति ॥ ६ ॥

(गणपतेः)

निशाधिनाथस्य करावमर्षात्समीलिताम्भोरुहलोचनायाः ।
 निशाङ्गनायाः कपटादुङ्गनां किं खेदबिन्दूत्कर आविरासीत् ॥ ७ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

भङ्क्त्वा भोक्तुं न भुङ्क्ते कुटिलविसलताकोटिमिन्दोर्वितर्का-
 ताराकारास्तृषार्तः पिबति न पयसां विप्रुषः पत्रसंस्थाः ।
 छायामम्भोरुहाणामलिकुलमलिनां वेत्ति संध्यामसंध्यां
 कान्ताविश्लेषभीरुर्दिनमपि रजनीं मन्यते चक्रवाकः ॥ २ ॥

[एष रुद्रस्य] (कयोरप्येतौ)

अथ तारावर्णनम्—

सिन्धोः सुधांशुशकलं परिगृह्य संध्या
 क्षेमंकरी निपतिताम्बरभूरुहाग्रे ।
 चञ्चूपुटेन चपलेन तया विकीर्णा-
 स्तारामिषेण पतिता इव पक्षखण्डाः ॥ ३ ॥

व्योम्नि प्राङ्गणसीम्नि सांध्यकिरणं विस्तार्य चेलाञ्चलं
 ध्वान्तैः कर्मणपांसुभिश्च जगतां द्राब्धोहयित्वा दृशौ ।
 ताराशौक्तिकमौक्तिकानि विहगश्रेणीरवच्छन्नाना
 जिजिह्वत्य च मायिकः स्मरनटो वक्राढ्यहिर्वर्षति ॥ ४ ॥
 (भानुकरस्यैतौ)

इयं संध्यातल्पं किमकृत.....

प्रवालैर्महिन्द्री हरिदहिमभानोर्विरहिता ।
 यदेषां वृन्तेषु स्फुरदमलमुक्ताचयरुचिः
 [स्फुटं] वारां बिन्दुप्रकर इव तारापरिकरः ॥ ५ ॥

अम्बरविपिनमिदानीं तिमिरवराहोऽवगाहते जलधेः ।
 रोमसु यदस्य लम्बास्तारकजलबिन्दवो भान्ति ॥ ६ ॥

(गणपतेः)

निशाधिनाथस्य करावमर्षात्संमीलिताम्भोरुहलोचनायाः ।
 निशाङ्गनायाः कपटादुङ्गनां किं खेदबिन्दूत्कर आविरासीत् ॥ ७ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ चन्द्रः—

गगनविपिनसिंहः कामभूपालपत्रं
निखिलदिगबलानां कन्दुकं क्रीडनाय ।
मणिरिव रतिभर्तुः कर्मणः पार्वणोऽयं
जयति कुमुदबन्धुर्बन्धुरश्चन्द्रबिम्बः ॥ ८ ॥

(लक्ष्मणस्य)

निर्वेदः सरसीरुहस्य महिलाकोपस्य काशीपदं
सिद्धान्तो मकरध्वजस्य तिमिरस्तोमस्य होमस्थली ।
प्रव्रज्या कुमुदक्लमस्य कुलटावाटस्य पाटच्चरः
पूर्वाद्रेरुदियाय विभ्रमवणिग्देवः क्षपाकामुकः ॥ ९ ॥
नभोलताकुञ्जमुपागतायाः प्रमोदपर्याकुलतारकायाः ।
निशाङ्गनायाः स्फुरता करेण शशी तमःकञ्चुकमुन्मुच ॥ १० ॥
(भानुकरस्यैतौ)

ताराक्षतान्प्रविकिरन्कलकण्ठनादा-
न्मन्त्राक्षराणि निगदन्कुसुमेषुरेषः ।
लाभाय वासरमणेर्मुषितस्य सायं
संचारयत्यमृतदीधितिकांस्यपात्रम् ॥ ११ ॥
दिग्बालाकरकन्दुकः स्मरवधूसीमन्तमुक्तामणिः
कामक्षोणिपतेर्विहारवलभीनिर्व्यूहपारावतः ।
हृद्योन्नि विकीर्णतारकमणिः श्यामावणिकसुभ्रुवः
स्फारः स्फाटिकसंपुटः कुमुदिनीकान्तोऽयमुन्मीलति ॥ १२ ॥
(गणपतेरेतौ)

अथ सकलङ्कचन्द्रः—

अयं पुरः पार्वणशर्वरीशः किं दर्पणोऽयं रजनीरमण्याः ।
यतस्तदीयं प्रतिबिम्बमस्मिन्संलक्ष्यते लाञ्छनकैतवेन ॥ १३ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ चन्द्रः—

गगनविपिनसिंहः कामभूपालपत्रं

निखिलदिगबलानां कन्दुकं क्रीडनाय ।

मणिरिव रतिभर्तुः कर्मणः पार्वणोऽयं

जयति कुमुदबन्धुर्वन्धुरश्चन्द्रबिम्बः ॥ ८ ॥

(लक्ष्मणस्य)

निर्वेदः सरसीरुहस्य महिलाकोपस्य काशीपदं

सिद्धान्तो मकरध्वजस्य तिमिरस्तोमस्य होमस्थली ।

प्रव्रज्या कुमुदक्लमस्य कुलटावाटस्य पाटच्चरः

पूर्वाद्रेरुदियाय विभ्रमवणिगदेवः क्षपाकामुकः ॥ ९ ॥

नभोलताकुञ्जमुपागतायाः प्रमोदपर्याकुलतारकायाः ।

निशाङ्गनायाः स्फुरता करेण शशी तमःकञ्चुकमुन्मुमोच ॥ १० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

ताराक्षतान्प्रविकिरन्कलकण्ठनादा-

न्मन्त्राक्षराणि निगदन्कुसुमेषुरेषः ।

लाभाय वासरमणेर्मुषितस्य सायं

संचारयत्यमृतदीधितिकांस्यपात्रम् ॥ ११ ॥

दिग्बालाकरकन्दुकः स्मरवधूसीमन्तमुक्तामणिः

कामक्षोणिपतेर्विहारवलभीनिर्व्यूहपारावतः ।

हृद्व्योम्नि विकीर्णतारकमणिः श्यामावणिकुसुभ्रुवः

स्फारः स्फाटिकसंपुटः कुमुदिनीकान्तोऽयमुन्मीलति ॥ १२ ॥

(गणपतेरेतौ)

अथ सकलङ्कचन्द्रः—

अयं पुरः पार्वणशर्वरीशः किं दर्पणोऽयं रजनीरमण्याः ।

यतस्तदीयं प्रतिबिम्बमस्मिन्संलक्ष्यते लाञ्छनकैतवेन ॥ १३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

प्रदोषमातङ्गमनङ्गदेवस्तुङ्गं समारुह्य समागतोऽयम् ।
सिन्दूरिते तस्य सुधांशुकुम्भे किमङ्कुशो लक्ष्ममिषेण दत्तः ॥ १४ ॥
(गणपतेः)

ख्याता वयं समधुपा मधुकोशवत्य-
श्चन्द्रः प्रसारितकरो द्विजराज एषः ।
अस्मत्समागमकृतोऽस्य पुनर्द्वितीयो
मा भूत्कलङ्क इति संकुचिता नलिन्यः ॥ १५ ॥
(कस्यापि)

मम प्रियां कैरविणीं करेण संतापयामास दिनाधिनाथः ।
इतीव दुःखैर्विकलः कलावान्पौ विषं लक्ष्ममिषेण सद्यः ॥ १६ ॥
(कस्यापि)

कलाधिनाथानयनाय सायं कुमुद्वतीप्रेषित एव भृङ्गः ।
किमिन्दुनालिङ्ग्य सरागमङ्गे कृतः कलङ्कभ्रममातनोति ॥ १७ ॥
(वाणीविलासस्य)

समस्तापास्तांशौ विरतिमहिमांशौ परिगते
दिवाभीतः शीतद्युतिरयमुदीतः समुदभूत् ।
..... यदपिबत्कुक्षिषु गता-
स्त एवाङ्के बीजं शशिनि किल शङ्के समभवन् ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ हर्म्यम्—

निपीय पीयूषमयूखविम्बे सुधाशरावप्रतिमे कपोताः ।
नक्षत्रमालासु कणभ्रमेण [चिरेण] चञ्चुं चपलाः क्षिपन्ति ॥ १९ ॥
यत्रालसा हरिणशावदृशो विहार-
पर्यस्तहारमणिमेदुरकेलितल्पाः ।
तारासु सौधशिखराञ्चलचुम्बिनीषु
मुक्ताभ्रमेण करपल्लवमर्पयन्ति ॥ २० ॥
(एतौ गणपतेः)

प्रदोषमातङ्गमनङ्गदेवस्तुङ्गं समारुह्य समागतोऽयम् ।
सिन्दूरिते तस्य सुधांशुकुम्भे किमङ्कुशो लक्ष्ममिषेण दत्तः ॥ १४ ॥
(गणपतेः)

ख्याता वयं समधुपा मधुकोशवत्य-
श्चन्द्रः प्रसारितकरो द्विजराज एषः ।
अस्मत्समागमकृतोऽस्य पुनर्द्वितीयो
मा भूत्कलङ्क इति संकुचिता नलिन्यः ॥ १५ ॥
(कस्यापि)

मम प्रियां कैरविणीं करेण संतापयामास दिनाधिनाथः ।
इतीव दुःखैर्विकलः कलावान्पौ विषं लक्ष्ममिषेण सद्यः ॥ १६ ॥
(कस्यापि)

कलाधिनाथानयनाय सायं कुमुद्वतीप्रेषित एव भृङ्गः ।
किमिन्दुनालिङ्ग्य सरागमङ्गे कृतः कलङ्कभ्रममातनोति ॥ १७ ॥
(वाणीविलासस्य)

समस्तापास्तांशौ विरतिमहिमांशौ परिगते
दिवाभीतः शीतद्युतिरयमुदीतः समुदभूत् ।
..... यदपिबत्कुक्षिषु गता-
स्त एवाङ्के बीजं शशिनि किल शङ्के समभवन् ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ हर्म्यम्—

निपीय पीयूषमयूखबिम्बे सुधाशरावप्रतिमे कपोताः ।
नक्षत्रमालासु कणभ्रमेण [चिरेण] चञ्चुं चपलाः क्षिपन्ति ॥ १९ ॥
यत्रालसा हरिणशावदृशो विहार-
पर्यस्तहारमणिमेदुरकेलितल्पाः ।
तारासु सौधशिखराञ्चलचुम्बिनीषु
मुक्ताभ्रमेण करपल्लवमर्पयन्ति ॥ २० ॥
(एतौ गणपतेः)

भित्तौ भित्तौ प्रतिफलगतं भालसिन्दूरपूरं
 दृष्ट्वा दृष्ट्वा कमलनयना केलिदीपभ्रमेण ।
 कान्ते चोलं हरति हरितं लोलमालोकयन्ती
 यत्र प्रच्छादयति सहसा पाणिपङ्केरुहेण ॥ २१ ॥

(भानुकरस्य)

स्फुरत्तुषारांशुमरीचिजालैर्विनिहताः स्फाटिकसौधपङ्क्तीः ।
 आरुह्य नार्यः क्षणदासु यस्यां नभोगता देव्य इव व्यराजन् ॥ २२ ॥
 (माघकवेः)

यदीयसौधस्फुरदिन्द्रनीलगवाक्षकुक्षिं प्रविशन्हिमांशुः ।
 उत्कंधराणामनिशं नराणामिन्दूपरागभ्रममातनोति ॥ २३ ॥
 इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां दशमो व्यापारः ।

एकादशो व्यापारः ।

यतो द्वये निरूप्यत्वं शृङ्गारस्य रसस्य तु ।
 अतः संक्षेपतः कुर्वे नायकानां निरूपणम् ॥ १ ॥

अथानुकूलो नायकः—

अरुणदलनलिन्या स्निग्धपादारविन्दा

कठिनतरधरण्यां यान्यकस्मात्स्खलन्ती ।

अवनि तव सुतेयं पादविन्यासदेशे

त्यज निजकठिनत्वं जानकी यात्यरण्यम् ॥ २ ॥

(महानाटकात् ।)

आत्मीयं चरणं दधाति पुरतो निम्नोन्नतायां भुवि
 स्त्रीयेनैव करेण कर्षति तरोः पुष्पं श्रमाशङ्कया ।
 तल्पे किं च मृगत्वचाविरचिते निद्राति भागैर्भिजै-
 रन्तःप्रेमभरालसां प्रियतमामङ्गे दधानो हरः ॥ ३ ॥
 वक्षोजद्वयशीलनेऽपि नखरातङ्कं न (हि) शङ्के तव
 स्याद्विम्बाधरचुम्बनेऽपि दशनच्छेदेन खेदोदयः ।

भित्तौ भित्तौ प्रतिफलगतं भालसिन्दूरपूरं
 दृष्ट्वा दृष्ट्वा कमलनयना केलिदीपभ्रमेण ।
 कान्ते चोलं हरति हरितं लोलमालोकयन्ती
 यत्र प्रच्छादयति सहसा पाणिपङ्केरुहेण ॥ २१ ॥

(भानुकरस्य)

स्फुरत्तुषारांशुमरीचिजालैर्विनिहताः स्फाटिकसौधपङ्क्तीः ।
 आरुह्य नार्यः क्षणदासु यस्यां नभोगता देव्य इव व्यराजन् ॥ २२ ॥
 (माघकवेः)

यदीयसौधस्फुरदिन्द्रनीलगवाक्षकुक्षिं प्रविशन्हिमांशुः ।
 उत्कंधराणामनिशं नराणामिन्दूपरागभ्रममातनोति ॥ २३ ॥
 इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां दशमो व्यापारः ।

एकादशो व्यापारः ।

यतो द्वये निरूप्यत्वं शृङ्गारस्य रसस्य तु ।
 अतः संक्षेपतः कुर्वे नायकानां निरूपणम् ॥ १ ॥

अथानुकूलो नायकः—

अरुणदलनलिन्या स्निग्धपादारविन्दा
 कठिनतरधरण्यां यान्यकस्मात्स्खलन्ती ।
 अवनि तव सुतेयं पादविन्यासदेशे
 त्यज निजकठिनत्वं जानकी यात्यरण्यम् ॥ २ ॥

(महानाटकात् ।)

आत्मीयं चरणं दधाति पुरतो निम्नोन्नतायां भुवि
 स्त्रीयेनैव करेण कर्षति तरोः पुष्पं श्रमाशङ्कया ।
 तल्पे किं च मृगत्वचाविरचिते निद्राति भागैर्निजै-
 रन्तःप्रेमभरालसां प्रियतमामङ्गे दधानो हरः ॥ ३ ॥
 वक्षोजद्वयशीलनेऽपि नखरातङ्कं न (हि) शङ्के तव
 स्याद्विम्बाधरचुम्बनेऽपि दशनच्छेदेन खेदोदयः ।

आश्लेषेऽपि वपुर्लता तव पुनर्भिद्येत रोमाङ्कुरा-
दित्थं पद्मविलोचने विरमति त्रासो न दासस्य मे ॥ ४ ॥

अथ दक्षिणनायकः—

एतत्पुरः स्फुरति पद्मदृशां सहस्र-
मक्षिद्वयं कथय कुत्र निवेशयामि ।
इत्याकलय्य नयनाम्बुरुहे निमील्य
रोमाञ्चितेन वपुषा स्थितमच्युतेन ॥ ५ ॥

चिरादुपेतः प्रथमं प्रदानं विचिन्त्य कर्तुं न पतिः शशाक ।
मध्येसखं केवलमङ्गनानां संयोजयामास विभूषणानि ॥ ६ ॥
(एते भानुकरस्य)

दृष्ट्वा पतिः पद्मदृशां सहस्रं दातुं न कस्यैचिदलं तदेकम् ।
एकैकमुत्कृत्य कृती दिदेश सर्वाणि पत्राणि सहस्रपत्रात् ॥ ७ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ धृष्टो नायकः—

व.....हरकिसलयो.....
स्वापं ज्ञात्वा पुनरुपगतो दूरतो दत्तदृष्टिः ।

तल्पोपान्ते कनकवलयं अष्टमन्वेषयन्त्या
दृष्टो धृष्टः पुनरपि मया पार्श्वे एव प्रसुप्तः ॥ ८ ॥
एतस्य रहसि वक्षसि सरसिजपत्रेण ताडितस्यापि ।
दयितस्य वीक्ष्य हसितं प्रियसखि हसितं ममाप्यासीत् ॥ ९ ॥

अथ धूर्तो नायकः—

धुन्वन्त्याः करपल्लवं मृगदृशो जातागसः प्रेयसो
वक्राम्भोरुहहेमकङ्कणमणिस्पर्शे समुन्मीलति ।
चक्षुर्विभ्रितमित्युदीर्य सहसा धूर्तेन तच्चेष्टितं
तस्यौ येन चिराय सैव शिरसा नत्रेण शातोदरी ॥ १० ॥
(भानुकरस्यैतौ)

आश्लेषेऽपि वपुर्लता तव पुनर्भिद्येत रोमाङ्कुरा-
दित्थं पद्मविलोचने विरमति त्रासो न दासस्य मे ॥ ४ ॥

अथ दक्षिणनायकः—

एतत्पुरः स्फुरति पद्मदृशां सहस्र-
मक्षिद्वयं कथय कुत्र निवेशयामि ।
इत्याकलय्य नयनाम्बुरुहे निमील्य
रोमाञ्चितेन वपुषा स्थितमच्युतेन ॥ ५ ॥

चिरादुपेतः प्रथमं प्रदानं विचिन्त्य कर्तुं न पतिः शशाक ।
मध्येसखं केवलमङ्गनानां संयोजयामास विभूषणानि ॥ ६ ॥
(एते भानुकरस्य)

दृष्ट्वा पतिः पद्मदृशां सहस्रं दातुं न कस्यैचिदलं तदेकम् ।
एकैकमुत्कृत्य कृती दिदेश सर्वाणि पत्राणि सहस्रपत्रात् ॥ ७ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ धृष्टो नायकः—

व.....हरकिसलयो.....
स्वापं ज्ञात्वा पुनरुपगतो दूरतो दत्तदृष्टिः ।

तत्पुपोपान्ते कनकवलयं अष्टमन्वेषयन्त्या
दृष्टो धृष्टः पुनरपि मया पार्श्वे एव प्रसुप्तः ॥ ८ ॥
एतस्य रहसि वक्षसि सरसिजपत्रेण ताडितस्यापि ।
दयितस्य वीक्ष्य हसितं प्रियसखि हसितं ममाप्यासीत् ॥ ९ ॥

अथ धूर्तो नायकः—

धुन्वन्त्याः करपल्लवं मृगदृशो जातागसः प्रेयसो
वक्त्राम्भोरुहहेमकङ्कणमणिस्पर्शे समुन्मीलति ।
चक्षुर्विभ्रितमित्युदीर्य सहसा धूर्तेन तच्चेष्टितं
तस्यौ येन चिराय सैव शिरसा नग्रेण शातोदरी ॥ १० ॥
(भानुकरस्यैतौ)

अथ मानी नायकः—

संत्यक्तजल्पे परिवृत्तवक्त्रे कृतागसि प्रेयसि तल्पसुप्ते ।

बाला मुहुर्न्यस्यति बाहुपाशं मुहुर्मुखं संमुखमातनोति ॥ ११ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथानभिज्ञो नायकः—

शून्ये सद्मनि योजिता बहुविधा भङ्गिर्वनं निर्जनं

पुष्पव्याजमुपेत्य निर्गतमथ स्फारीकृता दृष्टयः ।

ताम्बूलाहरणच्छलेन विहितौ व्यक्तौ च वक्षोरुहा-

वेतेनापि न वेत्ति दूति कियता यत्नेन संज्ञास्यति ॥ १२ ॥

पर्यस्तालकगण्डपालिवदनाम्भोजं मया चुम्बितं

प्रत्यङ्गं करपल्लवेन पुलकश्रेणिस्पृशा लालितम् ।

दोर्भ्यां तस्य कठोरकङ्कणरवं दोर्वल्लिरालिङ्गिता

निद्रालयेव मुहुस्तथापि दयितः कस्मै किमाचक्ष्महे ॥ १३ ॥

अथ शिशुनायकः—

अनवाप्तवयसि रहसि पर्यङ्कमागते जयति ।

मदचपललोचनाया मूकस्वप्नायितो भावः ॥ १४ ॥

प्रियतममजातयौवनमन्तः परिचिन्त्य पद्माक्षी ।

अङ्गानि भूषयन्तीमालीमालीदयौवना हसति ॥ १५ ॥

(भानुकरस्य)

संमुखं मुखविधुं न चुम्बतः कुर्वतो न च कुचे करार्पणम् ।

पत्युरल्पवयसोऽन्तिके गता दैवमेव विनिनिन्द सुन्दरी ॥ १६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ वृद्धनायकः—

उद्भिदुरं स्तनवदनं लोचनमल्लिगर्वमोचनं सुदृशः ।

दृष्ट्वा विगतविचारं धातारं निन्दति स्थविरः ॥ १७ ॥

(भानुकरस्य)

अथ मानी नायकः—

संत्यक्तजल्पे परिवृत्तवक्त्रे कृतागसि प्रेयसि तल्पसुप्ते ।

बाला मुहुर्न्यस्यति बाहुपाशं मुहुर्मुखं संमुखमातनोति ॥ ११ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथानभिज्ञो नायकः—

शून्ये सद्मनि योजिता बहुविधा भङ्गिर्वनं निर्जनं

पुष्पव्याजमुपेत्य निर्गतमथ स्फारीकृता दृष्टयः ।

ताम्बूलाहरणच्छलेन विहितौ व्यक्तौ च वक्षोरुहा-

वेतेनापि न वेत्ति दूति कियता यत्नेन संज्ञास्यति ॥ १२ ॥

पर्यस्तालकगण्डपालिवदनाम्भोजं मया चुम्बितं

प्रत्यङ्गं करपल्लवेन पुलकश्रेणिस्पृशा लालितम् ।

दोर्भ्यां तस्य कठोरकङ्कणरवं दोर्वलिरालिङ्गिता

निद्रालयेव मुहुस्तथापि दयितः कस्मै किमाचक्ष्महे ॥ १३ ॥

अथ शिशुनायकः—

अनवाप्तवयसि रहसि पर्यङ्कमागते जयति ।

मदचपललोचनाया मूकस्वप्नायितो भावः ॥ १४ ॥

प्रियतममजातयौवनमन्तः परिचिन्त्य पद्माक्षी ।

अङ्गानि भूषयन्तीमालीमालीदयौवना हसति ॥ १५ ॥

(भानुकरस्य)

संमुखं मुखविधुं न चुम्बतः कुर्वतो न च कुचे करार्पणम् ।

पत्युरल्पवयसोऽन्तिके गता दैवमेव विनिनिन्द सुन्दरी ॥ १६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ वृद्धनायकः—

उद्भिदुरं स्तनवदनं लोचनमलिगर्वमोचनं सुदृशः ।

दृष्ट्वा विगतविचारं धातारं निन्दति स्थविरः ॥ १७ ॥

(भानुकरस्य)

अचिन्तनीया विधिवञ्चनेयं यदम्बुजाक्षी स्थविरस्य भर्तुः ।
स्वयं समादाय करं निधाय वक्षोजयुग्मे स्वपिति श्वसन्ती ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथाविदग्धनायकः—

क्रीडासु सत्रीडमहो विलासानीवीनिरोधे निहितं मृगाक्ष्या ।
कराम्बुजं वीक्ष्य पतिः सरोषो ददौ ललाटे सुदृशश्चपेटाम् ॥ १९ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ देशान्तरोपगतनायकः—

दिदृक्षमाणः क्षणमायताक्ष्या मुखाम्बुजं मञ्जुलमध्वनीनः ।
मुहूर्तमात्रं सुमुहूर्तकालं स वर्षकालं कलयांचकार ॥ २० ॥
निशम्य केलीभवनोपकण्ठे मञ्जीरमञ्जुध्वनिमध्वनीनः ।
यथा तथा बद्धकथावशेषं समापयामास समं सुहृद्भिः ॥ २१ ॥
(कस्यापि)

मुखं प्रियायाः समुदीक्षमाणः कान्तो दिनस्यान्तमपेक्षमाणः ।
मुहुर्मुहुर्व्योमनि तिग्मभानौ निवेशयामास विलोचनानि ॥ २२ ॥
(भानुकरस्य)

अथ षट्पतुवर्णनम् । तत्र वर्षर्तुः—

कामेन कामं प्रहिता जवेन प्रावृट् चचाल त्रिजगद्विजेतुम् ।
किं चन्द्रबिम्बं दधि भक्षयन्ती संधारयन्ती हरितः शुभाय ॥ २३ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ जलधरः—

शीतलादिव संत्रस्तं प्रावृषेप्यान्नभस्वतः ।
नमो बभार नीरन्ध्रं जीमूतकुलकम्बलम् ॥ २४ ॥
(सर्वदासस्य)

चलद्दलाकादशनाभिरामः परिस्रवद्भारिमदाम्बुधारः ।
आहन्यमानस्तडिदंशुकेन सरस्य दध्वान घनद्विपेन्द्रः ॥ २५ ॥
(गदाधरस्य)

अचिन्तनीया विधिवञ्चनेयं यदम्बुजाक्षी स्थविरस्य भर्तुः ।
स्वयं समादाय करं निधाय वक्षोजयुग्मे स्वपिति श्वसन्ती ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथाविदग्धनायकः—

क्रीडासु सव्रीडमहो विलासान्वीवीनिरोधे निहितं मृगाक्ष्या ।
कराम्बुजं वीक्ष्य पतिः सरोषो ददौ ललाटे सुदृशश्चपेटाम् ॥ १९ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ देशान्तरोपगतनायकः—

दिदृक्षमाणः क्षणमायताक्ष्या मुखाम्बुजं मञ्जुलमध्वनीनः ।
मुहूर्तमात्रं सुमुहूर्तकालं स वर्षकालं कलयांचकार ॥ २० ॥
निशम्य केलीभवनोपकण्ठे मञ्जीरमञ्जुध्वनिमध्वनीनः ।
यथा तथा बद्धकथावशेषं समापयामास समं सुहृद्भिः ॥ २१ ॥
(कस्यापि)
मुखं प्रियायाः समुदीक्षमाणः कान्तो दिनस्यान्तमपेक्षमाणः ।
मुहुर्मुहुर्व्योमनि तिग्मभानौ निवेशयामास विलोचनानि ॥ २२ ॥
(भानुकरस्य)

अथ षट्पदवर्णनम् । तत्र वर्षर्तुः—

कामेन कामं प्रहिता जवेन प्रावृट् चचाल त्रिजगद्विजेतुम् ।
किं चन्द्रबिम्बं दधि भक्षयन्ती संधारयन्ती हरितः शुभाय ॥ २३ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ जलधरः—

शीतलादिव संत्रस्तं प्रावृषेप्यान्नमस्वतः ।
नभो बभार नीरन्ध्रं जीमूतकुलकम्बलम् ॥ २४ ॥
(सर्वदासस्य)
चलद्भलाकादशनाभिरामः परिस्रवद्भारिमदाम्बुधारः ।
आहन्यमानस्तडिदंशुकेन सरस्य दध्वान घनद्विप्रेन्द्रः ॥ २५ ॥
(गदाधरस्य)

वर्षासु जाता नवयौवनश्रीराशावधूः प्रौढपयोधराभूत् ।
 पुष्पोद्गमोऽजायत मालतीनां बभूवुरस्पृश्यतमास्तटिन्यः ॥ २६ ॥
 दशमुखभजमानिहीकः (?) स्फुरदतिघोरगभीरमेघनादः ।
 अयमिह समयः पयोधराणां तुलयति रावणपत्तनोपकण्ठे ॥ २७ ॥
 (रामचन्द्रस्यैतौ)

अथ घनदुर्दिनम्—

घनतरघनवृन्दच्छादिते व्योम्नि लोके
 सवितुरथ हिमांशोः संकथैव व्यरंसीत् ।
 रजनिदिवसभेदं मन्दवाताः शशंसुः
 कुमुदकमलगन्धानाहरन्तः क्रमेण ॥ २८ ॥ (रघुपतेः)
 घनतरघनवृन्दच्छादिते व्योम्नि लोके
 सवितुरथ सुधांशोः संकथैव व्यरंसीत् ।
 विरहमनुभवन्ती संगमं चापि भर्त्रा
 रजनिदिवसभेदं चक्रवाकी शशंस ॥ २९ ॥
 (अम्बष्ठस्य)

घनोद्गमे गाढतमेऽन्धकारे न कोऽपि निर्णेतुमहः शशाक ।
 स्पृशन्मुहुः किंतु करेण नाभीसरोजमाभीरकुलाधिनाथः ॥ ३० ॥
 (रामचन्द्रस्य)

अथ घनगर्जितम्—

या कामिनी सा यदि मानिनी स्यात्सरस्य राज्ञो ह्यपराधिनी स्यात् ।
 इतीव दण्डैः किमु ताड्यतेऽसौ कादम्बिनी कामनृपस्य ढक्का ॥ ३१ ॥
 चन्द्रबिम्बरविविम्बतारकामण्डलानि घनमेघदम्बैः ।
 भक्षितानि जलदोदरेषु तद्रोदनध्वनिरिवैष गर्जितम् ॥ ३२ ॥
 निद्रितस्य बत शम्बरद्विषो जागराय किमु वारिवाहकः ।
 उर्जितं दधदतीव गर्जितं संभ्रमन्नभसि संभ्रमाद्ययौ ॥ ३३ ॥
 (एते लक्ष्मणस्य)

वर्षासु जाता नवयौवनश्रीराशावधूः प्रौढपयोधराभूत् ।
 पुष्पोद्गमोऽजायत मालतीनां बभूवुरस्पृश्यतमास्तटिन्यः ॥ २६ ॥
 दशमुखभजमानिहीकः (?) स्फुरदतिघोरगभीरमेघनादः ।
 अयमिह समयः पयोधराणां तुलयति रावणपत्तनोपकण्ठे ॥ २७ ॥
 (रामचन्द्रस्यैतौ)

अथ घनदुर्दिनम्—

घनतरघनवृन्दच्छादिते व्योम्नि लोके
 सवितुरथ हिमांशोः संकथैव व्यरंसीत् ।
 रजनिदिवसभेदं मन्दवाताः शशंसुः
 कुमुदकमलगन्धानाहरन्तः क्रमेण ॥ २८ ॥ (रघुपतेः)
 घनतरघनवृन्दच्छादिते व्योम्नि लोके
 सवितुरथ सुधांशोः संकथैव व्यरंसीत् ।
 विरहमनुभवन्ती संगमं चापि भर्त्रा
 रजनिदिवसभेदं चक्रवाकी शशंस ॥ २९ ॥
 (अम्बष्ठस्य)

घनोद्गमे गाढतमेऽन्धकारे न कोऽपि निर्णेतुमहः शशाक ।
 स्पृशन्मुहुः किंतु करेण नाभीसरोजमाभीरकुलाधिनाथः ॥ ३० ॥
 (रामचन्द्रस्य)

अथ घनगर्जितम्—

या कामिनी सा यदि मानिनी स्यात्सरस्य राज्ञो ह्यपराधिनी स्यात् ।
 इतीव दण्डैः किमु ताड्यतेऽसौ कादम्बिनी कामनृपस्य ढक्का ॥ ३१ ॥
 चन्द्रबिम्बरविबिम्बतारकामण्डलानि घनमेघडम्बरैः ।
 भक्षितानि जलदोदरेषु तद्रोदनध्वनिरिवैष गर्जितम् ॥ ३२ ॥
 निद्रितस्य बत शम्बरद्विषो जागराय किमु वारिवाहकः ।
 ऊर्जितं दधदतीव गर्जितं संभ्रमन्नभसि संभ्रमाद्यौ ॥ ३३ ॥
 (एते लक्ष्मणस्य)

अथ विद्युत्—

याचितेन बहु चातकद्विजैरम्बुदेन जलदानपूर्वकम् ।

हेमयष्टिरिव दूरमीरिता संचचार रुचिरा चिरप्रभा ॥ ३४ ॥

(कविराजस्य)

क्षपां क्षामीकृत्य प्रसभमपहृत्याम्बु सरितां

प्रताप्योर्वीं कृत्स्नां तरुगहनमुच्छोष्य सकलम् ।

क संप्रत्युष्णांशुर्गत इति तदन्वेषणपरा-

स्तडिद्दीपालोका दिशि दिशि चरन्तीव जलदाः ॥ ३५ ॥

(पाणिनेः)

अथ वर्षाविरहिणी—

मन्दं मन्दं ध्वनति जलदो बिन्दुः.....वर्ष-

न्मन्दं मन्दं किरति पवनः केतकीकेसराणि ।

स्वैरं स्वैरं लसति च तडित्किंतु वाच्यं मया ते

वारंवारं वितर सखि मे जीवनं जीवनाय ॥ ३६ ॥

सहचरि परिपन्थिनं पुरस्ताज्जलधरमतकं कसरानुकारम् ।(?)

परिहर परिहार्यमाशु नोचेद्वितर जलाञ्जलिमेव जीवनाय ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

अथ खद्योतः—

खद्योतपोतप्रकराः समं खे द्योतन्त एते द्युतिभिः प्रचण्डाः ।

पयोदसंघट्टविघट्टनस्य किं वैद्युतस्य ज्वलनस्य खण्डाः ॥ ३७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

पाथोधरीयपटलेन विदारितस्य

मार्तण्डमण्डलपचेलिमदाडिमस्य ।

व्योमाङ्गणे निपतिता इव बीजपूराः

खद्योतपोतसुषमां स्फुटमावहन्ति ॥ ३८ ॥

प्राचीमहीधरशिला विनिवेशितस्य

धाराधरस्फुरदयोधनताडितस्य ।

अथ विद्युत्—

याचितेन बहु चातकद्विजैरम्बुदेन जलदानपूर्वकम् ।

हेमयष्टिरिव दूरमीरिता संचचार रुचिरा चिरप्रभा ॥ ३४ ॥

(कविराजस्य)

क्षपां क्षामीकृत्य प्रसभमपहृत्याम्बु सरितां

प्रताप्योर्वीं कृत्स्नां तरुगहनमुच्छोष्य सकलम् ।

क्व संप्रत्युष्णांशुर्गत इति तदन्वेषणपरा-

स्तडिदीपालोका दिशि दिशि चरन्तीव जलदाः ॥ ३५ ॥

(पाणिनेः)

अथ वर्षाविरहिणी—

मन्दं मन्दं ध्वनति जलदो बिन्दुः...वर्ष-

न्मन्दं मन्दं किरति पवनः केतकीकेसराणि ।

स्वैरं स्वैरं लसति च तडित्किंतु वाच्यं मया ते

वारंवारं वितर सखि मे जीवनं जीवनाय ॥ ३६ ॥

सहचरि परिपन्थिनं पुरस्ताज्जलधरमतकं कसरानुकारम् ।(?)

परिहर परिहार्यमाशु नोचेद्वितर जलाञ्जलिमेव जीवनाय ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

अथ खद्योतः—

खद्योतपोतप्रकराः समं खे द्योतन्त एते द्युतिभिः प्रचण्डाः ।

पयोदसंघट्टविघट्टनस्य किं वैद्युतस्य ज्वलनस्य खण्डाः ॥ ३७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

पाथोधरीयपटलेन विदारितस्य

मार्तण्डमण्डलपचेलिमदाडिमस्य ।

व्योमाङ्गणे निपतिता इव बीजपूराः

खद्योतपोतसुषमां स्फुटमावहन्ति ॥ ३८ ॥

प्राचीमहीधरशिला विनिवेशितस्य

धाराधरस्फुरदयोधनताडितस्य ।

तप्तायसस्य तपनस्य कणा विकीर्णाः

खद्योतपोतकपटादिव विस्फुरन्ति ॥ ३९ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

अथ हंसः—

तटमुपगतं पद्मे पद्मे निवेशितमाननं

प्रतिपुटकिनीपत्रच्छायं मुहुर्मुहुरासितम् ।

मुहुरुपगतैरसैः कोष्णीकृता जलवीचयो

जलदमलिनां हंसेनाशां विलोक्य पिपासता ॥ ४० ॥

(कस्यापि)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायामेकादशो व्यापारः ।

द्वादशो व्यापारः ।

अथ शरत्—

खच्छाम्बराच्छादितसर्वगात्रा राजीवनेत्रा लसदिन्दुवक्त्रा ।

कणन्मरालव्रजनूपुराढ्या ययौ मदाढ्येव शरन्नताङ्गी ॥ १ ॥

(लक्ष्मणस्य)

पयोदजालजम्बालजटिला शरदङ्गना ।

अम्बरं धारयामास चन्द्रिकाचयवारिभिः ॥ २ ॥

अहो बाणस्य संधानं शरदि स्मरभूपतेः ।

अपि सोऽयं त्विषामीशः कन्याराशिमुपागतः ॥ ३ ॥

अथोत्तरस्यां दिशि खञ्जरीटमालोक्य कोऽपि स्मितमादधानः ।

कस्याश्चिदास्ये स्मितचारुभासि संभावयामास विलोचनानि ॥ ४ ॥

(भानुकरस्यैते)

तीक्ष्णं रविस्तपति नीच इवाचिराढ्यः

शृङ्गं रुरुस्त्यजति मित्रमिवाकृति(त)शः ।

तोयं प्रसीदति मुनेरिव चित्तवृत्तिः

कामं दरिद्र इव शोषमुपैति पङ्कः ॥ ५ ॥

(भासस्य)

तप्तायसस्य तपनस्य कणा विकीर्णाः

खद्योतपोतकपटादिव विस्फुरन्ति ॥ ३९ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

अथ हंसः—

तटमुपगतं पद्मे पद्मे निवेशितमाननं

प्रतिपुटकिनीपत्रच्छायं मुहुर्मुहुरासितम् ।

मुहुरुपगतैरसैः कोष्णीकृता जलवीचयो

जलदमलिनां हंसेनाशां विलोक्य पिपासता ॥ ४० ॥

(कस्यापि)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायामेकादशो व्यापारः ।

द्वादशो व्यापारः ।

अथ शरत्—

स्वच्छाम्बराच्छादितसर्वगात्रा राजीवनेत्रा लसदिन्दुवक्त्रा ।

कणन्मरालव्रजनूपुराढ्या ययौ मदाढ्येव शरन्नताङ्गी ॥ १ ॥

(लक्ष्मणस्य)

पयोदजालजम्बालजटिला शरदङ्गना ।

अम्बरं धारयामास चन्द्रिकाचयवारिभिः ॥ २ ॥

अहो बाणस्य संधानं शरदि स्मरभूपतेः ।

अपि सोऽयं त्विषामीशः कन्याराशिमुपागतः ॥ ३ ॥

अथोत्तरस्यां दिशि खञ्जरीटमालोक्य कोऽपि स्मितमादधानः ।

कस्याश्चिदास्ये स्मितचारुभासि संभावयामास विलोचनानि ॥ ४ ॥

(भानुकरस्यैते)

तीक्ष्णं रविस्तपति नीच इवाचिराढ्यः

शृङ्गं रुरुस्त्यजति मित्रमिवाकृति(त)शः ।

तोयं प्रसीदति मुनेरिव चित्तवृत्तिः

कामं दरिद्र इव शोषमुपैति पङ्कः ॥ ५ ॥

(भासस्य)

वान्ति कङ्कारसुभगाः सप्तच्छदसुगन्धयः ।

वाता नवरतग्लानवधूगमनमन्थराः ॥ ६ ॥

(वाल्मीकेः)

कलमाः पाकविनम्रा मूलतलाघ्रातसुरभिकङ्काराः ।

पवनाकम्पितशिरसः प्रायः कुर्वन्ति परिमलश्लाघाम् ॥ ७ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

प्रबोधभाजः परमस्य पुंसो विलोचने द्वे किल मुक्तनिद्रे ।

व्यपेतपाथोद(ध)रपक्षमरोधे व्यराजतां व्योमनि पुष्पवन्तौ ॥ ८ ॥

(कविराजस्य)

चन्द्रे गते सभिग(क)तामिह कार्तिकेय-

इचूतोत्सवं.....खेलति पञ्चबाणे (?) ।

.....

तारास्त एव परितो वियति स्फुरन्ति ॥ ९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ हेमन्तः—

हेमन्तहिमनिस्पन्दमवलोक्य मनोभवम् ।

प्रहर्तुं सुभ्रुवां चेतो रविर्देवो धनुर्दधौ ॥ १० ॥

अभ्युल्लसन्ति विनिवारितचन्दनाना-

मेणीदृशां वपुषि कुङ्कुमपत्रलेखाः ।

अभ्यागताः करसरोजपदारविन्द-

संरक्षणाय किरणा इव शीत(तिम्भ)भानोः ॥ ११ ॥

अम्बरमेष रमण्यै यामिन्यै वासरः प्रेयान् ।

अधिकं ददौ निजाङ्गादथ संकुचितः स्वयं तस्थौ ॥ १२ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

लज्जा प्रौढमृगीदृशामिव नवस्त्रीणां रतेच्छा इव

स्वैरिण्या नियमा इव सितरुचः कुर्याङ्गनानामिव ।

वान्ति कङ्कारसुभगाः सप्तच्छदसुगन्धयः ।

वाता नवरतग्लानवधूगमनमन्थराः ॥ ६ ॥

(वाल्मीकेः)

कलमाः पाकविनम्रा मूलतलाघ्रातसुरभिकङ्काराः ।

पवनाकम्पितशिरसः प्रायः कुर्वन्ति परिमलश्लाघाम् ॥ ७ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

प्रबोधभाजः परमस्य पुंसो विलोचने द्वे किल मुक्तनिद्रे ।

व्यपेतपाथोद(ध)रपक्षमरोधे व्यराजतां व्योमनि पुष्पवन्तौ ॥ ८ ॥

(कविराजस्य)

चन्द्रे गते सभिग(क)तामिह कार्तिकेय-

इचूतोत्सवं.....खेलति पञ्चबाणे (?) ।

.....

तारास्त एव परितो वियति स्फुरन्ति ॥ ९ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ हेमन्तः—

हेमन्तहिमनिस्पन्दमवलोक्य मनोभवम् ।

प्रहर्तुं सुश्रुवां चेतो रविर्देवो घनुर्दधौ ॥ १० ॥

अभ्युल्लसन्ति विनिवारितचन्दनाना-

मेणीदृशां वपुषि कुङ्कुमपत्रलेखाः ।

अभ्यागताः करसरोजपदारविन्द-

संरक्षणाय किरणा इव शीत(तिग्म)भानोः ॥ ११ ॥

अम्बरमेष रमण्यै यामिन्यै वासरः प्रेयान् ।

अधिकं ददौ निजाङ्गादथ संकुचितः स्वयं तस्थौ ॥ १२ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

लज्जा प्रौढमृगीदृशामिव नवस्त्रीणां रतेच्छा इव

स्वैरिण्या नियमा इव स्मितरुचः कुल्याङ्गनानामिव ।

दम्पत्योः कलहा इव प्रणयिता वाराङ्गनानामिव
 प्रादुर्भूय तिरोभवन्ति सहसा हैमन्तिका वासराः ॥ १३ ॥
 (कविकङ्कणस्य)

अपि दिनमणिरेषः क्लेशितः शीतसङ्घै-
 रथ निशि निजभार्या गाढमालिङ्ग्य दोर्भ्याम् ।
 स्वपिति पुनरुदेतुं सालसाङ्गस्तु तस्मा-
 त्किमु न भवतु दीर्घा यामिनी कामिनीयम् ॥ १४ ॥
 दधत्यधरचुम्बनं नयनपङ्कजं मुदय-
 त्यमन्दपुलकं मनागमलमङ्गमालिङ्गते ।
 विचालयति चालकं चपललोचनानां हठा-
 त्तनोत्यविनयं मरुत्प्रिय इवैष हैमन्तिकः ॥ १५ ॥
 कामिनो हन्त हेमन्तनिशि शीतज्वरातुराः ।
 जीवन्ति हरिणाक्षीणां वक्षोजाश्लेषरक्षिताः ॥ १६ ॥
 (एते लक्ष्मणस्य)

हे हेमन्त स्मरिष्यामि त्वय्यतीते गुणद्वयम् ।
 अयन्नशीतलं वारि निशाश्च सुरतक्षमाः ॥ १७ ॥
 हसन्तीं वा हसन्तीं वा हसन्तीं वामलोचनाम् ।
 हेमन्ते ये न सेवन्ते ते नूनं दैववञ्चिताः ॥ १८ ॥
 (कयोरपि)

अथ शिशिरः—

तुषारभारविक्षुण्णं प्रेक्ष्य पङ्कजकाननम् ।
 पङ्केरुहदशः शङ्के पाणिः कम्पमविन्दत ॥ १९ ॥
 आचुम्ब्य बिम्बाधरमङ्गवल्लि-
 मालिङ्ग्य संस्पृश्य कपोलपालीम् ।
 श्रीखण्डमादाय करेण कान्तः
 संत्रासयामास सरोरुहाक्षीम् ॥ २० ॥

दम्पत्योः कलहा इव प्रणयिता वाराङ्गनानामिव
 प्रादुर्भूय तिरोभवन्ति सहसा हैमन्तिका वासराः ॥ १३ ॥
 (कविकङ्कणस्य)

अपि दिनमणिरेषः क्लेशितः शीतसङ्घै-
 रथ निशि निजभार्या गाढमालिङ्गच दोर्भ्याम् ।
 स्वपिति पुनरुदेतुं सालसाङ्गस्तु तस्मा-
 त्किमु न भवतु दीर्घा यामिनी कामिनीयम् ॥ १४ ॥
 दधत्यधरचुम्बनं नयनपङ्कजं मुद्रय-
 त्यमन्दपुलकं मनागमलमङ्गमालिङ्गते ।
 विचालयति चालकं चपललोचनानां हठा-
 त्तनोत्यविनयं मरुत्प्रिय इवैष हैमन्तिकः ॥ १५ ॥
 कामिनो हन्त हेमन्तनिशि शीतज्वरातुराः ।
 जीवन्ति हरिणाक्षीणां वक्षोजाश्लेषरक्षिताः ॥ १६ ॥
 (एते लक्ष्मणस्य)

हे हेमन्त स्मरिष्यामि त्वय्यतीते गुणद्वयम् ।
 अयन्नशीतलं वारि निशाश्च सुरतक्षमाः ॥ १७ ॥
 हसन्तीं वा हसन्तीं वा हसन्तीं वामलोचनाम् ।
 हेमन्ते ये न सेवन्ते ते नूनं दैववञ्चिताः ॥ १८ ॥

(कयोरपि)

अथ शिशिरः—

तुषारभारविक्षुण्णं प्रेक्ष्य पङ्कजकाननम् ।
 पङ्केरुहदृशः शङ्के पाणिः कम्पमविन्दत ॥ १९ ॥
 आचुम्ब्य बिम्बाधरमङ्गवल्लि-
 मालिङ्गच संस्पृश्य कपोलपालीम् ।
 श्रीखण्डमादाय करेण कान्तः
 संत्रासयामास सरोरुहाक्षीम् ॥ २० ॥

एते समुल्लसद्भासो राजन्ते कुन्दकोरकाः ।

शीतभीता लताकुन्दमाश्रिता इव तारकाः ॥ २१ ॥
(भानुकरस्यैते)

शर्वरीषु किल शैशिरीषु तद्योषितां निधुवनेषु केलिषु ।
शीतशीर्यदधरेषु चुम्बनैः सीत्कृतं द्विगुणितं तदाभवत् ॥ २२ ॥
याम्या दिशः संनिधिचारिणस्ते खवैरिणः शौमनवाहनस्य ।
भिया हयाः किं तरणेः प्रतूर्णं जग्मुस्ततो दीनमिदं दिनं किम् ॥ २३ ॥
(लक्ष्मणस्यैतौ)

अथ वसन्तसंधिः—

चूतानां चिरनिर्गतापि कलिका बध्नाति न स्वं रजः
संनद्धं यदपि स्थितं कुरबकं तत्कोरकावस्थया ।
कण्ठेषु स्खलितं गतेऽपि शिशिरे पुंस्कोकिलानां रुतं
शङ्के संहरति सरोऽपि चकितस्तूणार्धकृष्टं शरम् ॥ २४ ॥
(कालिदासस्य)

आपृच्छन्ते मलयजतरूनास्वजन्ते च वल्ली-
राभाषन्ते चिरपरिचितान्मालिनीनिर्झरौघान् ।
अद्य स्थित्वा द्रविडमहिलामन्दिरे श्वः प्रभाते
प्रस्थातारो मलयमरुतः कुर्वते संविधानम् ॥ २५ ॥
अनुभूतचरेषु दीर्घिकाणामुपकण्ठेषु गतागतैकतानाः ।
मधुपाः कथयन्ति पद्मिनीनां सलिलैरन्तरितानि कोरकाणि ॥ २६ ॥
उषसि अमरयुवानः स्वप्ने दृष्ट्वा सरोजसाम्राज्यम् ।
गतकल्पकुन्दतल्पाः सरसीसलिलानि जिघ्रन्ति ॥ २७ ॥
(केषामप्येते)

व्यतीतकल्पे शिशिरैकबाल्ये संकल्पपुष्पोद्गमबन्धुराङ्गी ।
इयं लवङ्गी युवमृङ्गसङ्गादुच्छूनगुच्छस्तनिकेव भाति ॥ २८ ॥

एते समुल्लसद्भासो राजन्ते कुन्दकोरकाः ।

शीतभीता लताकुन्दमाश्रिता इव तारकाः ॥ २१ ॥
(भानुकरस्यैते)

शर्वरीषु किल शैशिरीषु तद्योषितां निधुवनेषु केलिषु ।

शीतशीर्यदधरेषु चुम्बनैः सीत्कृतं द्विगुणितं तदाभवत् ॥ २२ ॥

याम्या दिशः संनिधिचारिणस्ते खवैरिणः शौमनवाहनस्य ।

भिया हयाः किं तरणेः प्रतूर्णं जग्मुस्ततो दीनमिदं दिनं किम् ॥ २३ ॥
(लक्ष्मणस्यैतौ)

अथ वसन्तसंधिः—

चूतानां चिरनिर्गतापि कलिका बध्नाति न स्वं रजः

संनद्धं यदपि स्थितं कुरबकं तत्कोरकावस्थया ।

कण्ठेषु स्खलितं गतेऽपि शिशिरे पुंस्कोकिलानां रुतं

शङ्के संहरति सरोऽपि चकितस्तूणार्धकृष्टं शरम् ॥ २४ ॥
(कालिदासस्य)

आपृच्छन्ते मलयजतरूनास्वजन्ते च वल्ली-

राभाषन्ते चिरपरिचितान्मालिनीनिर्झरौघान् ।

अद्य स्थित्वा द्रविडमहिलामन्दिरे श्वः प्रभाते

प्रस्थातारो मलयमरुतः कुर्वते संविधानम् ॥ २५ ॥

अनुभूतचरेषु दीर्घिकाणामुपकण्ठेषु गतागतैकतानाः ।

मधुपाः कथयन्ति पद्मिनीनां सलिलैरन्तरितानि कोरकाणि ॥ २६ ॥

उषसि अमरयुवानः स्वप्ने दृष्ट्वा सरोजसाम्राज्यम् ।

गतकल्पकुन्दतल्पाः सरसीसलिलानि जिघ्रन्ति ॥ २७ ॥

(केषामप्येते)

व्यतीतकल्पे शिशिरैकबाल्ये संकल्पपुष्पोद्गमबन्धुराङ्गी ।

इयं लवङ्गी युवभृङ्गसङ्गादुच्छूनगुच्छस्तनिकेव भाति ॥ २८ ॥

भृङ्गीरवो मङ्गलगीतमासीत्पिकध्वनिर्दुन्दुभितामयासीत् ।

प्रस्थातुकामस्य जगज्जयाय सराज्ञया हन्त वसन्तकस्य ॥ २९ ॥
(लक्ष्मणस्यैतौ)

अथ वसन्तः—

प्रयान्ति (प)पान्थास्त्वरया गृहाणि भवत्कृतान्तश्चरते वसन्तः ।

इतीव भृङ्गारवतो रसालैः संताड्यते किं पटहः पिकोऽयम् ॥ ३० ॥
(लक्ष्मणस्य)

स्थलकमलतरूणां कामिनीलोचनेषु

क्षिपति मुकुलमुष्ट्या धूलिजातं विशालम् ।

तदनु हरति हन्त स्वान्तसर्वस्वमासा-

मयमनयविदग्धो धूर्तवन्मीनकेतुः ॥ ३१ ॥

(गणपतेः)

कामस्य जेतुकामस्य मिलनाय महीपतेः ।

देवो मीनं त्विषां मीने द्वारीकर्तुमिवाययौ ॥ ३२ ॥

उत्सष्टुमम्बुजदृशमिव मानरत्न-

मादाय षट्पदतिलान्मधुवारिपूरान् ।

पुंस्कोकिलस्य कलकूजितकैतवेन

संकल्पवाक्यमयमातनुते रसालः ॥ ३३ ॥

रणत्कङ्कणानां झणन्नूपुराणां चलत्कुण्डलानां कणत्किङ्किणीनाम् ।

वधूनां मुखाम्भोरुहं द्रष्टुकामो रथं मन्थरं चक्रबन्धुश्चकार ॥ ३४ ॥

(भानुकरस्यैते)

अथ ग्रीष्मः—

निदाघकाले किल चण्डरश्मिप्रचण्डरश्मिप्रकरावलीढम् ।

स्यादेव दग्धं जगदेव न स्याद्यदि सवत्सेदजलावलीनम् ॥ ३५ ॥

स्वदेहधर्मोदकपिच्छलेऽस्मिन्नभःस्थले किं तरणेस्तुरङ्गाः ।

स्वलत्खुरा न त्वरया विचेलुस्ततो नु दीर्घा दिवसा निदाघे ॥ ३६ ॥

(द्वौ लक्ष्मणस्य)

भृङ्गीरवो मङ्गलगीतमासीत्पिकध्वनिर्दुन्दुभितामयासीत् ।

प्रस्थातुकामस्य जगज्जयाय सराज्ञया हन्त वसन्तकस्य ॥ २९ ॥
(लक्ष्मणस्यैतौ)

अथ वसन्तः—

प्रयान्ति (प)पान्थास्त्वरया गृहाणि भवत्कृतान्तश्चरते वसन्तः ।

इतीव भृङ्गारवतो रसालैः संताड्यते किं पटहः पिकोऽयम् ॥ ३० ॥
(लक्ष्मणस्य)

स्थलकमलतरूणां कामिनीलोचनेषु

क्षिपति मुकुलमुष्ट्या धूलिजातं विशालम् ।

तदनु हरति हन्त स्वान्तसर्वस्वमासा-

मयमनयविदग्धो धूर्तवन्मीनकेतुः ॥ ३१ ॥

(गणपतेः)

कामस्य जेतुकामस्य मिलनाय महीपतेः ।

देवो मीनं त्विषां मीने द्वारीकर्तुमिवाययौ ॥ ३२ ॥

उत्सष्टुमम्बुजदृशमिव मानरत्न-

मादाय षट्पदतिलान्मधुवारिपूरान् ।

पुंस्कोकिलस्य कलकूजितकैतवेन

संकल्पवाक्यमयमातनुते रसालः ॥ ३३ ॥

रणत्कङ्कणानां झणन्नूपुराणां चलत्कुण्डलानां कणत्किङ्किणीनाम् ।

वधूनां मुखाम्भोरुहं द्रष्टुकामो रथं मन्थरं चक्रबन्धुश्चकार ॥ ३४ ॥

(भानुकरस्यैते)

अथ ग्रीष्मः—

निदाघकाले किल चण्डरश्मिप्रचण्डरश्मिप्रकरावलीढम् ।

स्यादेव दग्धं जगदेव न स्याद्यदि सवत्सेदजलावलीनम् ॥ ३५ ॥

स्वदेहधर्मोदकपिच्छलेऽस्मिन्नभःस्थले किं तरणेस्तुरङ्गाः ।

स्खलत्खुरा न त्वरया विचेलुस्ततो नु दीर्घा दिवसा निदाघे ॥ ३६ ॥

(द्वौ लक्ष्मणस्य)

माध्वीकदुर्भिक्षमलिविजानां प्रदोषकालः पिकपण्डितानाम् ।
जरालवो मन्मथनायकस्य निदाषकालः समुपाजगाम ॥ ३७ ॥

(गदाधरस्य)

तप्ता मही विरहिणामिव चित्तवृत्ति-

स्तृष्णाध्वगेषु कृपणेष्विव वृद्धिमेति ।

सूर्यः करैर्दहति दुर्वचनैः खलो नु

छाया सतीव न विमुञ्चति पादमूलम् ॥ ३८ ॥

(कस्यापि)

अथ संसारसंहारवामनावन्धवासितः ।

अजायत वृषारूढो भैरवो महसां निधिः ॥ ३९ ॥

अत्युल्लसद्विसरहस्ययुजा भुजेन

वक्त्रेण शारदसुधांशुसहोदरेण ।

पीयूषपोषसुभगेन च भाषितेन

त्वं चेत्प्रसीदसि मृगाक्षि कुतो निदाषः ॥ ४० ॥

मलयपवनचञ्चच्चन्दनस्पन्दशीतं

जलनिधितनयायाः कण्ठमालिङ्ग्य दोर्भ्याम् ।

दिनकरकरजालज्वालाया दूनदेहो

जलधिपयसि देवो वासुदेवो निदद्रौ ॥ ४१ ॥

(एते भानुकरस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां द्वादशो व्यापारः ।

त्रयोदशो व्यापारः ।

शृङ्गारस्य निरूपितकल्पत्वादल्पतया हास्यरसादयोऽपि निरूप्यन्ते—

अथ हास्यरसः—

प्रीतः प्रकाममहिफेनरसं निपीय

वृद्धो वृतः शिशुगणैः प्रलपन्वचांसि ।

माध्वीकदुर्भिक्षमलिविजानां प्रदोषकालः पिकपण्डितानाम् ।
जरालवो मन्मथनायकस्य निदाघकालः समुपाजगाम ॥ ३७ ॥

(गदाधरस्य)

तप्ता मही विरहिणामिव चित्तवृत्ति-

स्तृष्णाध्वगेषु कृपणेष्विव वृद्धिमेति ।

सूर्यः करैर्दहति दुर्वचनैः खलो नु

छाया सतीव न विमुञ्चति पादमूलम् ॥ ३८ ॥

(कस्यापि)

अथ संसारसंहारवामनावन्धवासितः ।

अजायत वृषारूढो भैरवो महसां निधिः ॥ ३९ ॥

अत्युल्लसद्विसरहस्ययुजा भुजेन

वक्त्रेण शारदसुधांशुसहोदरेण ।

पीयूषपोषसुभगेन च भाषितेन

त्वं चेत्प्रसीदसि मृगाक्षि कुतो निदाघः ॥ ४० ॥

मलयपवनचञ्चच्चन्दनस्पन्दशीतं

जलनिधितनयायाः कण्ठमालिङ्ग्य दोर्भ्याम् ।

दिनकरकरजालज्वालाया दूनदेहो

जलधिपयसि देवो वासुदेवो निदद्रौ ॥ ४१ ॥

(एते भानुकरस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां द्वादशो व्यापारः ।

त्रयोदशो व्यापारः ।

शृङ्गारस्य निरूपितकल्पत्वादल्पतया हास्यरसादयोऽपि निरूप्यन्ते—

अथ हास्यरसः—

प्रीतः प्रकाममहिफेनरसं निपीय

वृद्धो वृतः शिशुगणैः प्रलपन्वचांसि ।

आघूर्णयन्नयनमाकुलयन्मुखेन्दु-

मुद्गामयन्वपुरुषैति नृपस्य वेश्म ॥ १ ॥

(भानुकरस्य)

उपभुक्तखदिरवीटकजनिताधररागभङ्गभयात् ।

पितरि मृतेऽपि हि वेश्या रोदिति हा तात तातेति ॥ २ ॥

(क्षेमेन्द्रस्य)

सामगायनपूतं मे नोच्छिष्टमधरं कुरु ।

उत्कण्ठितासि चेद्भद्रे कर्णं चुम्बस्व दक्षिणम् ॥ ३ ॥

(कयोरपि)

रे रे लोकाः कुरुध्वं श्रवणपुटविधानं द्रुतं हस्तयुग्मैः

शैलाः सर्वेऽपि यूयं भवत गुरुतराः सावधाना धरित्र्याम् ।

शीघ्रं रे रावण त्वं विरचय वसनैर्नासिकानां पिधानं

सुप्तोऽयं कुम्भकर्णः कदुरवविकटं शर्धते दीर्घमुच्चैः ॥ ४ ॥

गताः केचित्प्रबोधाय स्वपन्तं कुम्भकर्णकम् ।

तदधः पवनोत्सर्गादुड्डीय पतिताः कचित् ॥ ५ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

अथ करुणरसः—

कनकमृगमुदस्य स्वां कुटीं संप्रविष्टः

कचिदपि न वधूटीं नो(सं)ददर्शज्जनादौ ।

तदपि स रघुवीरः पर्णशालागृहान्त-

र्न विशति हृदयाशतन्तुनाशातिभीरुः ॥ ६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अनुवनमनुयान्तं बाष्पवारि त्यजन्तं

मृदितकमलदाम क्षाममालोक्य रामम् ।

दिनमपि रविरोचिस्तापमन्तः प्रपेदे

रजनिरपि च ताराबाष्पबिन्दून्बभार ॥ ७ ॥

(भानुकरस्य)

आघूर्णयन्नयनमाकुलयन्मुखेन्दु-

मुद्गामयन्वपुरुषैति नृपस्य वेश्म ॥ १ ॥

(भानुकरस्य)

उपभुक्तखदिरवीटकजनिताधररागभङ्गभयात् ।

पितरि मृतेऽपि हि वेश्या रोदिति हा तात तातेति ॥ २ ॥

(क्षेमेन्द्रस्य)

सामगायनपूतं मे नोच्छिष्टमधरं कुरु ।

उत्कण्ठितासि चेद्भद्रे कर्णं चुम्बस्व दक्षिणम् ॥ ३ ॥

(कयोरपि)

रे रे लोकाः कुरुध्वं श्रवणपुटविधानं द्रुतं हस्तयुग्मैः

शैलाः सर्वेऽपि यूयं भवत गुरुतराः सावधाना धरित्र्याम् ।

शीघ्रं रे रावण त्वं विरचय वसनैर्नासिकानां पिधानं

सुप्तोऽयं कुम्भकर्णः कदुरवविकटं शर्धते दीर्घमुच्चैः ॥ ४ ॥

गताः केचित्प्रबोधाय स्वपन्तं कुम्भकर्णकम् ।

तदधः पवनोत्सर्गादुड्डीय पतिताः कचित् ॥ ५ ॥

(लक्ष्मणस्यैतौ)

अथ करुणरसः—

कनकमृगमुदस्य स्वां कुटीं संप्रविष्टः

कचिदपि न वधूटीं नो(सं)ददर्शज्जनादौ ।

तदपि स रघुवीरः पर्णशालागृहान्त-

र्न विशति हृदयाशतन्तुनाशातिभीरुः ॥ ६ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अनुवनमनुयान्तं बाष्पवारि त्यजन्तं

मृदितकमलदाम क्षाममालोक्य रामम् ।

दिनमपि रविरोचिस्तापमन्तः प्रपेदे

रजनिरपि च ताराबाष्पबिन्दून्बभार ॥ ७ ॥

(भानुकरस्य)

सीतामपास्य त्रपया नतास्यं समागतं लक्ष्मणमानिरीक्ष्य ।

बभूव बाष्पाम्बुधिमध्यलीनो दृगन्तमीनो रघुनन्दनस्य ॥ ८ ॥

(कस्यापि)

असारं संसारं परिमुषितरत्नं त्रिभुवनं

निरालोकं लोकं मरणशरणं बान्धवजनम् ।

अदर्पं कंदर्पं जननयननिर्माणमफलं

जगज्जीर्णारण्यं कथमसि विधातुं व्यवसितः ॥ ९ ॥

(भवभूतेः)

शीलानि ते चन्दनशीतलानि श्रुतानि भूमीतलविश्रुतानि ।

तथापि जीर्णौ पितरौ वनेऽस्मिन्विहाय हा वत्स कथं प्रयासि ॥ १० ॥

(गदाधरस्य)

अविशीर्णकान्तपत्रे नव्यदशे सुमुखि संभृतस्त्रेहे ।

मद्देहदीपकलिके कथमुपयातासि निर्वाणम् ॥ ११ ॥

(लीलावतीकारस्य)

यस्याः कुसुमशय्यापि कोमलाङ्गया रुजाकरी ।

साधिशेते कथं दीना ज्वलन्तीमधुना [चिताम्] ॥ १२ ॥

(दण्डिनः)

स्रगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम् ।

विषमप्यमृतं कचिद्भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया ॥ १३ ॥

(कालिदासस्य)

आदाय मांसमखिलं स्तनवर्जमङ्गा-

न्मां मुञ्च वागुरिक यामि कुरु प्रसादम् ।

सीदन्ति शष्पकवलग्रहणानभिज्ञा

मन्मार्गवीक्षणपराः शिशवो मदीयाः ॥ १४ ॥

(कस्यापि)

अथ रौद्ररसः—

देव्याज्ञां विज्ञ राज्ञां कुलमुकुटमणे राम लङ्काधिनाथं

मन्थीयां चास्त्रपाथोनिधिमथ मरुतां प्रापये किनु लङ्काम् ।

सीतामपास्य त्रपया नतास्यं समागतं लक्ष्मणमानिरीक्ष्य ।

बभूव बाष्पाम्बुधिमध्यलीनो दृगन्तमीनो रघुनन्दनस्य ॥ ८ ॥

(कस्यापि)

असारं संसारं परिमुषितरत्नं त्रिभुवनं

निरालोकं लोकं मरणशरणं बान्धवजनम् ।

अदर्पं कंदर्पं जननयननिर्माणमफलं

जगज्जीर्णारण्यं कथमसि विधातुं व्यवसितः ॥ ९ ॥

(भवभूतेः)

शीलानि ते चन्दनशीतलानि श्रुतानि भूमीतलविश्रुतानि ।

तथापि जीर्णौ पितरौ वनेऽस्मिन्विहाय हा वत्स कथं प्रयासि ॥ १० ॥

(गदाधरस्य)

अविशीर्णकान्तपत्रे नव्यदशे सुमुखि संभृतस्त्रेहे ।

मद्देहदीपकलिके कथमुपयातासि निर्वाणम् ॥ ११ ॥

(लीलावतीकारस्य)

यस्याः कुसुमशय्यापि कोमलाङ्गया रुजाकरी ।

साधिशेते कथं दीना ज्वलन्तीमधुना [चिताम्] ॥ १२ ॥

(दण्डिनः)

स्रगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम् ।

विषमप्यमृतं कचिद्भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया ॥ १३ ॥

(कालिदासस्य)

आदाय मांसमखिलं स्तनवर्जमङ्गा-

न्मां मुञ्च वागुरिक यामि कुरु प्रसादम् ।

सीदन्ति शष्पकवलग्रहणानभिज्ञा

मन्मार्गवीक्षणपराः शिशवो मदीयाः ॥ १४ ॥

(कस्यापि)

अथ रौद्ररसः—

देव्याज्ञां विज्ञ राज्ञां कुलमुकुटमणे राम लङ्काधिनाथं

मन्थीयां चास्त्रपाथोनिधिमथ मरुतां प्रापये किनु लङ्काम् ।

यद्वा मद्वाहुदण्डोद्यमितपृथुतरक्षोणिभृत्क्षेपभिद्य-

द्वक्षःसंक्षुब्धरक्षःकरनिकरकृतस्फारचीत्कारघोराम् ॥ १५ ॥

(लक्ष्मणस्य)

चञ्चद्भुजभ्रमितचण्डगदाभिघात-

संचूर्णितोरुयुगलस्य सुयोधनस्य ।

स्त्यानावनद्धघनशोणितशोणपाणि-

रुतंसयिष्यति कचांस्तव देवि भीमः ॥ १६ ॥

(नारायणस्य)

केयं माता पिशाची क इव च जनको भ्रातरः केऽत्र कीटा ।

वध्योऽयं बन्धुवर्गः कुटिलविटसुहृच्चेष्टिता ज्ञातयोऽमी ।

आगर्भं यावदेषां कुलमिदमखिलं नैव निःशेषयामि

स्फूर्जन्तः क्रोधवहेर्न दधति विरतिं तावदङ्गे स्फुलिङ्गाः ॥ १७ ॥

(कृष्णमिश्रस्य)

क्रीडातुङ्गतुरङ्गटापपटलीखर्वीकृतोर्वीधर-

श्रेणिस्फूर्जितधूलिधोरणितमः सोमावलीढं जगत् ।

युद्धकुद्धकरीन्द्रवृन्दचरणव्याभुम्भोगीश्वर-

व्यग्रोदग्रफणाग्रलरुचिभिर्विद्योतयामः पुनः ॥ १८ ॥

(भानुकरस्य)

अथ वीररसः—

संग्रामाङ्गणमागते दशमुखे सौमित्रिणा विस्मितं

सुग्रीवेण विचिन्तितं हनुमता व्यालोलमालोकितम् ।

श्रीरामेण परंतु पीनपुलकस्फूर्जेत्प्रकोष्ठश्रिया

सान्द्रानन्दरसालसा निदधिरे बाणासने दृष्टयः ॥ १९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ भयानकरसः—

स्फूर्जेद्भुजाविशतिकं समन्तात्समुलसद्भीषणवक्रपङ्क्तिम् ।

दृष्ट्वैव रौद्रं दशवक्रदेहं सीतातिभीता बत मूर्च्छितासीत् ॥ २० ॥

(लक्ष्मणस्य)

यद्वा मद्वाहुदण्डोद्यमितपृथुतरक्षोणिभृत्क्षेपभिद्य-

द्वक्षःसंक्षुब्धरक्षःकरनिकरकृतस्फारचीत्कारघोराम् ॥ १५ ॥

(लक्ष्मणस्य)

चञ्चद्भुजभ्रमितचण्डगदाभिघात-

संचूर्णितोरुयुगलस्य सुयोधनस्य ।

स्त्यानावनद्धधनशोणितशोणपाणि-

रुत्तंसयिष्यति कचांस्तव देवि भीमः ॥ १६ ॥

(नारायणस्य)

केयं माता पिशाची क इव च जनको आतरः केऽत्र कीटा ।

वध्योऽयं बन्धुवर्गः कुटिलवित्सुहृच्चेष्टिता ज्ञातयोऽमी ।

आगर्भं यावदेषां कुलमिदमखिलं नैव निःशेषयामि

स्फूर्जन्तः क्रोधवहेर्न दधति विरतिं तावदङ्गे स्फुलिङ्गाः ॥ १७ ॥

(कृष्णमिश्रस्य)

क्रीडातुङ्गतुरङ्गटापपटलीखर्वीकृतोर्वीधर-

श्रेणिस्फूर्जितधूलिधोरणितमः सोमावलीढं जगत् ।

युद्धकुद्धकरीन्द्रवृन्दचरणव्याभुम्रभोगीश्वर-

व्यग्रोदग्रफणाग्ररत्नरुचिभिर्विद्योतयामः पुनः ॥ १८ ॥

(भानुकरस्य)

अथ वीररसः—

संग्रामाङ्गणभागते दशमुखे सौमित्रिणा विस्रितं

सुग्रीवेण विचिन्तितं हनुमता व्यालोलमालोकितम् ।

श्रीरामेण परंतु पीनपुलकस्फूर्जत्प्रकोष्ठश्रिया

सान्द्रानन्दरसालसा निदधिरे बाणासने दृष्टयः ॥ १९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ भयानकरसः—

स्फूर्जद्भुजाविंशतिकं समन्तात्समुल्लसद्भीषणवक्रपङ्क्तिम् ।

दृष्ट्वैव रौद्रं दशवक्रदेहं सीतातिभीता बत मूर्च्छितासीत् ॥ २० ॥

(लक्ष्मणस्य)

किञ्चित्कोपकलाकलापकलनाहुंकारदृष्यद्भुवो-

र्विक्षेपादकरोदसौ रघुपतिर्लङ्कापतेः पत्तनम् ।

क्रन्दत्फेरु रटत्करी(रे)दु विघटद्दारु स्फुटद्गुगुल

प्रोत्क्रीडत्कपि निःश्वसत्फणि रणज्जिह्वलि अमद्वीपि च ॥ २१ ॥

(वररुचेः) [मुसारेः]

अथ बीभत्सरसः—

फेत्कारकृत्फेरुभिरद्विजुष्टं श्वभिर्विलुब्धैरथ जग्धपृष्ठम् ।

आ पक्षिभिर्मिद्वितसर्वनासमासीद्वपुस्तद्दशकंधरस्य ॥ २२ ॥

(लक्ष्मणस्य)

विकीर्णहरिचन्दनद्रविणि यत्र लीलालसा

निपेतुरतिचञ्चलाश्चतुरकामिनीदृष्टयः ।

तदेतदुपरिभ्रमन्निविडगृध्रजालं जनै-

र्लुठत्कृमि कलेवरं पिहितनासिकैर्वीक्ष्यते ॥ २३ ॥

(इन्द्रकवेः)

अथानुतरसः—

विनिर्गतं मानदमात्ममन्दिराद्भवत्युपश्रुत्य यदृच्छयापि यम् ।

ससंभ्रमेन्द्रद्रुतपातितार्गला निमीलिताक्षीव भियामरावती ॥ २४ ॥

(कस्यापि)

अथानुतपर्यवसानात्युक्तिः—

आकाशदेशात्परिपातुकानि लङ्केशशीर्षाणि सकुन्तलानि ।

क्षणं नभःप्रांशुमहीरुहस्य शिक्वाश्रितानीव फलानि रेजुः ॥ २५ ॥

(लक्ष्मणस्य)

दिव्यहरेर्मुखकुहरे पर्णति व्योम चूर्णति चन्द्रः ।

क्रमुकति कनकगिरिः खदिरसारति खरांशुः ॥ २६ ॥

(भानुकरस्य)

अथ शान्तरसः—

नमस्तस्मै कारालाय कालाय क्षुधितात्मने ।

जगन्ति भुञ्जतो यस्य ब्रह्मग्रासोऽवधिर्भुजे ॥ २७ ॥

किञ्चित्कोपकलाकलापकलनाहुंकारदृष्यञ्जुवो-
 विक्षेपादकरोदसौ रघुपतिर्लङ्कापतेः पत्तनम् ।
 क्रन्दत्फेरु रटत्करी(रे)टु विघटद्धारु स्फुटदुग्गुलु
 प्रोत्कीडत्कपि निःश्वसत्फणि रणज्झिलि भ्रमद्वीपि च ॥ २१ ॥
 (वररुचेः) [मुरारेः]

अथ बीभत्सरसः—

फेत्कारकृत्फेरुभिरङ्घ्रिजुष्टं श्वभिर्विलुब्धैरथ जग्धपृष्ठम् ।
 आ पक्षिभिर्मङ्घ्रितसर्वनासमासीद्वपुस्तद्वशकंधरस्य ॥ २२ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

विकीर्णहरिचन्दनद्रविणि यत्र लीलालसा
 निपेतुरतिचञ्चलाश्चतुरकामिनीदृष्टयः ।
 तदेतदुपरिभ्रमन्निबिडगृध्रजालं जनै-
 ल्लुटत्कृमि कलेवरं पिहितनासिकैर्वीक्ष्यते ॥ २३ ॥
 (इन्द्रकवेः)

अथाद्भुतरसः—

विनिर्गितं मानदमात्ममन्दिराद्भवत्युपश्रुत्य यदृच्छयापि यम् ।
 ससंभ्रमेन्द्रद्रुतपातितार्गला निमीलिताक्षीव भियामरावती ॥ २४ ॥
 (कस्यापि)

अथाद्भुतपर्यवसानात्युक्तिः—

आकाशदेशात्परिपातुकानि लङ्केशशीर्षाणि सकुन्तलानि ।
 क्षणं नभःप्रांशुमहीरुहस्य शिक्वाश्रितानीव फलानि रेजुः ॥ २५ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

दिव्यहरेर्मुखकुहरे पर्णति व्योम चूर्णति चन्द्रः ।
 क्रमुकति कनकगिरिः खदिरसारति खरांशुः ॥ २६ ॥
 (भानुकरस्य)

अथ शान्तरसः—

नमस्तस्मै कारालाय कालाय क्षुधितात्मने ।
 जगन्ति भुञ्जतो यस्य ब्रह्मग्रासोऽवधिर्भुजे ॥ २७ ॥

पुनः पुनर्भुवि क्षिप्तः पुनरेति स्वसंनिधिम् ।
 मन्दकन्दुकवज्जातो मृत्योः क्रीडनकं नरः ॥ २८ ॥
 जन्तुः संसारकान्तारे कालव्यालभयंकरे ।
 प्रविशन्नेव कोऽनेन नो नृशंसेन दंशितः ॥ २९ ॥
 नराः संसारकान्तारे विषयांश्चपलान्मृगान् ।
 व्याधा इव प्रधावन्तो यान्ति व्याघ्रान्तकान्तिकम् ॥ ३० ॥
 तरले जीवने जन्तुर्भोगान्भोक्तुं य ईहते ।
 स नूनं तडिदुद्योते मणीन्प्रथितुमीहते ॥ ३१ ॥
 यः खोद्धाराय गृह्णाति मूढो यान्यान्परिग्रहान् ।
 सार्धं मज्जति तैः पङ्के मग्नेभाङ्घ्रिरिवेतैः ॥ ३२ ॥
 मायया कर्षिता ह्येते न चोद्य(इय)न्ते मिथस्तथा ।
 पुनर्यथा न मुच्यन्ते तुर्येव पटतन्तवः ॥ ३३ ॥
 भङ्गदं भङ्गुरं भोगं गत्वरं सत्वरं धनम् ।
 भज मा भज मावासं तमीश्वरमनश्वरम् ॥ ३४ ॥
 उद्यद्विवेकतपनप्रफुल्ले हृदयाम्बुजे ।
 विंशते भगवद्भक्तिररविन्द इवेन्दिरा ॥ ३५ ॥
 संसारतापदहनैः प्रतप्तायां मनोभुवि ।
 सम्यगरोहन्ति भगवद्भक्तिबीजाङ्कुरा इमे ॥ ३६ ॥
 उपरिस्था भक्तिरन्तर्निर्मूला तारयेत्कथम् ।
 नहि भारक्षमा दृष्टा वारां सान्द्रापि नीलिका ॥ ३७ ॥
 धर्मे सक्तिर्भवे भक्तिर्भवेऽरक्तिर्वरत्रयम् ।
 चतुर्थपुरुषार्थाय चतुर्थं तीर्थवर्तनम् ॥ ३८ ॥
 तन्मनस्विन्मनः स्वीयं दिक्पर्यटनलम्पटम् ।
 दुर्मर्कटमिव क्षिप्रं स्थाणौ बद्धं स्थिरीकुरु ॥ ३९ ॥

(एते लक्ष्मणस्य)

पुनः पुनर्भुवि क्षिप्तः पुनरेति स्वसंनिधिम् ।
 मन्दकन्दुकवज्जातो मृत्योः क्रीडनकं नरः ॥ २८ ॥
 जन्तुः संसारकान्तारे कालव्यालभयंकरे ।
 प्रविशन्नेव कोऽनेन नो नृशंसेन दंशितः ॥ २९ ॥
 नराः संसारकान्तारे विषयांश्चपलान्मृगान् ।
 व्याधा इव प्रधावन्तो यान्ति व्याघ्रान्तकान्तिकम् ॥ ३० ॥
 तरले जीवने जन्तुर्भोगान्भोक्तुं य ईहते ।
 स नूनं तडिदुद्योते मणीन्ग्रथितुमीहते ॥ ३१ ॥
 यः खोद्धाराय गृह्णाति मूढो यान्यान्परिग्रहान् ।
 सार्धं मज्जति तैः पङ्के मग्नेभाङ्गिरिवेतरैः ॥ ३२ ॥
 मायया कर्षिता ह्येते न चोद्य(इय)न्ते मिथस्तथा ।
 पुनर्यथा न मुच्यन्ते तुर्येव पटतन्तवः ॥ ३३ ॥
 भङ्गदं भङ्गुरं भोगं गत्वरं सत्वरं धनम् ।
 भज मा भज मावासं तमीश्वरमनश्वरम् ॥ ३४ ॥
 उद्यद्विवेकतपनप्रफुल्ले हृदयाम्बुजे ।
 विशंते भगवद्भक्तिररविन्द इवेन्दिरा ॥ ३५ ॥
 संसारतापदहनैः प्रतप्तायां मनोभुवि ।
 सम्यगरोहन्ति भगवद्भक्तिबीजाङ्कुरा इमे ॥ ३६ ॥
 उपरिस्था भक्तिरन्तर्निर्मूला तारयेत्कथम् ।
 नहि भारक्षमा दृष्टा वारां सान्द्रापि नीलिका ॥ ३७ ॥
 धर्मे सक्तिर्भवे भक्तिर्भवेऽरक्तिर्वरत्रयम् ।
 चतुर्थपुरुषार्थाय चतुर्थं तीर्थवर्तनम् ॥ ३८ ॥
 तन्मनस्विन्मनः स्वीयं दिक्पर्यटनलम्पटम् ।
 दुर्मर्कटमिव क्षिप्रं स्थाणौ बद्धं स्थिरीकुरु ॥ ३९ ॥

(एते लक्ष्मणस्य)

व्याघ्रीव तिष्ठति जरा परितर्जयन्ती
 रोगाश्च शत्रव इव प्रहरन्ति नित्यम् ।
 आयुः परिस्रवति भिन्नघटादिवाम्भो
 लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम् ॥ ४० ॥
 यावत्स्वस्थमिदं शरीरमरुजं यावज्जरा दूरतो
 यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः ।
 आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्यः प्रयत्नो महान्
 संदीप्ते भवने तु कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ॥ ४१ ॥
 उत्खातं निधिशङ्कया क्षितितलं धमाता गिरेर्धातवो
 निस्तीर्णः सरितां पतिर्नृपतयो यत्नेन संतोषिताः ।
 मन्त्राराधनतत्परेण मनसा नीताः श्मशाने निशाः
 प्रासः काणवराटकोऽपि न मया तृष्णेऽधुना मुञ्च माम् ॥ ४२ ॥
 अग्रे गीतं सरसकवयः पार्श्वतो दाक्षिणात्याः
 पृष्ठे लीलाबलयरणितं चामरग्राहिणीनाम् ।
 यद्यस्त्येवं कुरु भवरसास्वादने लम्पटत्वं
 नो चेच्चेतः प्रविश सहसा निर्विकल्पे समाधौ ॥ ४३ ॥
 अश्रीमहि वयं भिक्षामाशावासो वसीमहि ।
 शयीमहि महीपृष्ठे कुर्वीमहि किमीश्वरैः ॥ ४४ ॥
 (मर्तृहरेरेते)

बन्धुव्रजैः सुभटकोटिभिरासवर्गै-
 र्मम्रास्तत्रविधिभिः परिरक्ष्यमाणः ।
 जन्तुर्बलादधिबलोपकृतान्तदूतै-
 रानीयतेऽयमवशाय वराक एषः ॥ ४५ ॥
 दैवाद्धनेष्वधिगतेषु पटुर्न कायः
 काये पटौ न पुनरायदवाप्ति वित्तम् ।
 इत्थं परस्परहतात्मभिरात्मधर्मै-
 र्लोकं सुदुःखयति जन्मकरः प्रबन्धः ॥ ४६ ॥

व्याघ्रीव तिष्ठति जरा परितर्जयन्ती

रोगाश्च शत्रव इव प्रहरन्ति नित्यम् ।

आयुः परित्यजति भिन्नघटादिवाम्भो

लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम् ॥ ४० ॥

यावत्स्वस्थमिदं शरीरमरुजं यावज्जरा दूरतो

यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः ।

आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्यः प्रयत्नो महान्

संदीप्ते भवने तु कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ॥ ४१ ॥

उत्खातं निधिशङ्कया क्षितितलं धमाता गिरेर्धातवो

निस्तीर्णः सरितां पतिर्नृपतयो यत्नेन संतोषिताः ।

मन्त्राराधनतत्परेण मनसा नीताः श्मशाने निशाः

प्राप्तः काणवराटकोऽपि न मया तृष्णेऽधुना मुञ्च माम् ॥ ४२ ॥

अग्रे गीतं सरसकवयः पार्श्वतो दाक्षिणात्याः

पृष्ठे लीलावलयरणितं चामरग्राहिणीनाम् ।

यद्यस्त्येवं कुरु भवरसास्वादने लम्पटत्वं

नो चेच्चेतः प्रविश सहसा निर्विकल्पे समाधौ ॥ ४३ ॥

अश्रीमहि वयं भिक्षामाशावासो वसीमहि ।

शयीमहि महीपृष्ठे कुर्वीमहि किमीश्वरैः ॥ ४४ ॥

(भर्तृहरेरेते)

बन्धुव्रजैः सुभटकोटिभिरासवर्गै-

र्मन्त्रास्त्रतन्त्रविधिभिः परिरक्ष्यमाणः ।

जन्तुर्बलादधिबलोपकृतान्तद्वैतै-

रानीयतेऽयमवशाय वराक एषः ॥ ४५ ॥

दैवाद्धनेष्वधिगतेषु पटुर्न कायः

काये पटौ न पुनरायदवाप्ति वित्तम् ।

इत्थं परस्परहतात्मभिरात्मधर्मै-

ल्लोकं सुदुःखयति जन्मकरः प्रबन्धः ॥ ४६ ॥

आस्तां भवान्तरविधौ सुविपर्ययोऽय-

मत्रैव जन्मनि नृणामधरोच्चभावः ।

अल्पः पृथुः पृथुरपि क्षणतोऽल्प एव

स्वामी भवत्यनुचरः स च तत्पदार्हः ॥ ४७ ॥

एकस्त्वभावहसि जन्मनि संक्षये च

भोक्तुं स्वयं स्वकृतकर्मफलानुबन्धम् ।

अन्यो न जातु सुखदुःखविधौ सहायः

स्वाजीवनाय मिलितं विटपेटकं ते ॥ ४८ ॥

बाह्यः परिग्रहविधिस्तव दूरमास्तां

देहोऽयमेति न समं सहसंभवोऽपि ।

किं ताम्यसि त्वमनिशं क्षणदृष्टनष्टै-

र्द्रात्मजद्रविणमन्दिरमोहपाशैः ॥ ४९ ॥

संशोच्य शोकविदसौ दिवसं तमेक-

मन्येद्युरापर.....स्वजनतवस्वे (?) ।

कायोऽपि भस्म भवति प्रचयार्चिषाग्नेः

संसारयन्त्रघटनाघटने त्वमेकः(?) ॥ ५० ॥

(एते सोमदेवस्य)

केनाप्यनर्थरुचिना कपटं प्रयुक्त-

मेतत्सुहृत्स्वजनबन्धुमयं विचित्रम् ।

कस्यात्र कः परिजनः स्वजनो जनो वा

स्वप्नेन्द्रजालसदृशः खलु जीवलोकः ॥ ५१ ॥

वीभत्सा विषया जुगुप्सिततमः कायो वयो गत्वरं

प्रायो बन्धुभिरध्वनीव पथिकैर्योगो वियोगावहः ।

हातव्योऽयमसार एष विरसः संसार इत्यादिकं

सर्वस्यैव हि वाचि चेतसि पुनः कस्यापि पुण्यात्मनः ॥ ५२ ॥

आत्मज्ञानविवेकनिर्मलधियः कुर्वन्त्यहो दुष्करं

यन्मुञ्चन्त्युपभोगभाङ्ग्यपि धनान्येकान्ततो निःस्पृहाः ।

आस्तां भवान्तरविधौ सुविपर्ययोऽय-

मत्रैव जन्मनि नृणामधरोच्चभावः ।

अल्पः पृथुः पृथुरपि क्षणतोऽल्प एव

स्वामी भवत्यनुचरः स च तत्पदार्हः ॥ ४७ ॥

एकस्त्वमावहसि जन्मनि संक्षये च

भोक्तुं स्वयं स्वकृतकर्मफलानुबन्धम् ।

अन्यो न जातु सुखदुःखविधौ सहायः

स्वाजीवनाय मिलितं विटपेटकं ते ॥ ४८ ॥

बाह्यः परिग्रहविधिस्तव दूरमास्तां

देहोऽयमेति न समं सहसंभवोऽपि ।

किं ताम्यसि त्वमनिशं क्षणदृष्टनष्टै-

र्द्रात्मजद्रविणमन्दिरमोहपाशैः ॥ ४९ ॥

संशोच्य शोकविदसौ दिवसं तमेक-

मन्येद्युरापर.....स्वजनतवस्वे (?) ।

कायोऽपि भस्म भवति प्रचयार्चिषाग्नेः

संसारयन्त्रघटनाघटने त्वमेकः(?) ॥ ५० ॥

(एते सोमदेवस्य)

केनाप्यनर्थरुचिना कपटं प्रयुक्त-

मेतत्सुहृत्स्वजनबन्धुमयं विचित्रम् ।

कस्यात्र कः परिजनः स्वजनो जनो वा

स्वप्नेन्द्रजालसदृशः खलु जीवलोकः ॥ ५१ ॥

वीभत्सा विषया जुगुप्सिततमः कायो वयो गत्वरं

प्रायो बन्धुभिरध्वनीव पथिकैर्योगो वियोगावहः ।

हातव्योऽयमसार एष विरसः संसार इत्यादिकं

सर्वस्यैव हि वाचि चेतसि पुनः कस्यापि पुण्यात्मनः ॥ ५२ ॥

आत्मज्ञानविवेकनिर्मलधियः कुर्वन्त्यहो दुष्करं

यन्मुञ्चन्त्युपभोगभाङ्ग्यपि धनान्येकान्ततो निःस्पृहाः ।

न प्राप्ताणि पुरा न संप्रति न च प्राप्सो दृढः प्रत्ययो
 वाल्छामोऽत्र परिग्रहाण्यपि वयं त्यक्तुं न तानि क्षमाः ॥ ५३ ॥
 अजानन्दाहार्तिं विशति शलभो दीपदहनं
 न मीनोऽपि ज्ञात्वा वृत्तम(ब)लिशमश्नाति पिशितम् ।
 विजानन्तोऽप्येतान्वयमिह विपज्जालजटिलान्
 न मुञ्चामः कामानहह गहनो मोहमहिमा ॥ ५४ ॥
 क्षान्तं न क्षमया गृहोचितसुखं त्यक्तं न संतोषतः
 सोढा दुःसहशीतवाततपनक्लेशा न तप्तं तपः ।
 ध्यातं वित्तमहर्निशं नियमितप्राणैर्न शम्भोः पदं
 तत्तत्कर्म कृतं यदेव मुनिभिस्तैस्तैः फलैर्वञ्चितम् ॥ ५५ ॥
 जन्मेदं वध्यतां नीतं भवभोगोपलिप्सया ।
 काचमूल्येन विक्रीतो हन्त चिन्तामणिर्मया ॥ ५६ ॥
 कामं वनेषु हरिणास्तृणेन जीवन्त्ययत्नसुलभेन ।
 धनिषु न दैन्यं विदधति ते खलु पशवो वयं सुधियः ॥ ५७ ॥
 महता पुण्यपण्येन क्रीतेयं कायनौस्त्वया ।
 पारं दुःखाम्बुधेर्गन्तुं तर यावन्न भिद्यते ॥ ५८ ॥
 उपश.....विद्या बीजात्फलं धनमिच्छतां
 भवति विफलो यत्प्रारम्भस्तदत्र किमद्भुतम् ।
 नियतविषया ह्येते भावा नयन्ति विपर्ययं
 जनयति.....शाले बीजं न जातु यवाङ्कुरम् ॥ ५९ ॥
 स्थूलप्रावरणोऽतिवृत्तकथनः कासाश्रुलालाविलो
 भमोरःकटिपृष्ठजानुजघनो मुग्धोऽतिथीन्वारयन् ।
 शृण्वन्धृष्टवधूवचांसि धनुषा संत्रासयन्वायसा-
 नाशापाशनिबद्धजीवविभवो वृद्धो गृहे ग्लायति ॥ ६० ॥
 (एते बिह्वणशतकात्)
 मृत्योर्बिम्बेषु किं मूढ भीतं मुञ्चति किं यमः ।
 अजातं नैव गृह्णाति कुरु यत्नमजन्मनि ॥ ६१ ॥

न प्राप्ताणि पुरा न संप्रति न च प्राप्सो दृढः प्रत्ययो

वाञ्छामोऽत्र परिग्रहाण्यपि वयं त्यक्तुं न तानि क्षमाः ॥ ५३ ॥

अजानन्दाहार्तिं विशति शलभो दीपदहनं

न मीनोऽपि ज्ञात्वा वृत्तम(ब)लिशमश्नाति पिशितम् ।

विजानन्तोऽप्येतान्वयमिह विपज्जालजटिलान्

न मुञ्चामः कामानहह गहनो मोहमहिमा ॥ ५४ ॥

क्षान्तं न क्षमया गृहोचितसुखं त्यक्तं न संतोषतः

सोढा दुःसहशीतवाततपनक्लेशा न तप्तं तपः ।

ध्यातं वित्तमहर्निशं नियमितप्राणैर्न शम्भोः पदं

तत्तत्कर्म कृतं यदेव मुनिभिस्तैस्तैः फलैर्वञ्चितम् ॥ ५५ ॥

जन्मेदं वध्यतां नीतं भवभोगोपलिप्सया ।

काचमूल्येन विक्रीतो हन्त चिन्तामणिर्मया ॥ ५६ ॥

कामं वनेषु हरिणास्तृणेन जीवन्त्ययत्नसुलभेन ।

धनिषु न दैन्यं विदधति ते खलु पशवो वयं सुधियः ॥ ५७ ॥

महता पुण्यपण्येन क्रीतेयं कायनौस्त्वया ।

पारं दुःखाम्बुधेर्गन्तुं तर यावन्न भिद्यते ॥ ५८ ॥

उपश.....विद्या बीजात्फलं धनमिच्छतां

भवति विफलो यत्प्रारम्भस्तदत्र किमद्भुतम् ।

नियतविषया ह्येते भावा नयन्ति विपर्ययं

जनयति.....शाले बीजं न जातु यवाङ्कुरम् ॥ ५९ ॥

स्थूलप्रावरणोऽतिवृत्तकथनः कासाश्रुलालाविलो

भमोरःकटिपृष्ठजानुजघनो मुग्धोऽतिथीन्वारयन् ।

शृण्वन्धृष्टवधूवचांसि धनुषा संत्रासयन्वायसा-

नाशापाशनिबद्धजीवविभवो वृद्धो गृहे ग्लायति ॥ ६० ॥

(एते बिह्वणशतकात्)

मृत्योर्बिम्बेषु किं मूढ भीतं मुञ्चति किं यमः ।

अजातं नैव गृह्णाति कुरु यत्नमजन्मनि ॥ ६१ ॥

अहौ वा हारे वा बलवति रिपौ वा सुहृदि वा
मणौ वा लोष्ठे वा कुसुमशयने वा दृषदि वा ।
तृणे वा स्त्रैणे वा मम समदृशो यान्तु दिवसाः
कचित्पुण्यारण्ये शिव शिव शिवेति प्रलपतः ॥ ६२ ॥

(श्रीभर्तृहरेः)

सवेदो निर्वेदमृतिपण्डितै रतिजडस्यसंभावनव्यसौ (?)
.....तदधुना मनाक् हसति हतान् पण्डितान् ॥ ६३ ॥
(लक्ष्मणस्य)

कल्पद्रुमोऽपि कालेन भवेद्यदि फलप्रदः ।
को विशेषस्तदा तस्य वन्यैरन्यैर्महीरुहैः ॥
.....माणो भ्रमान्मद्विरहे स्थिता स्यात् ।

शाकुन्तिका कापि मिथोऽथ पोतान्विधाय नीडं निबिडं कदा वा ॥ ६४ ॥

कुचौ तु परिचर्चितौ परिचितं चिरं चन्दनं
कृताः परमुरोजयोः परिसरेऽरविन्दस्रजः ।
स्तुतिर्नतिरपि स्मृतिर्वरतनोः कृतैवादरा-

दिदं तु निखिलं मया विरचितं पुनर्नेश्वरे ॥ ६५ ॥

चिरं ध्याता रामा क्षणमपि न रामप्रतिकृतिः

परं पीतं रामाधरमधु न रामाङ्घ्रिसलिलम् ।

नता रुष्टा रामा यदरचि न रामाय विनति-

र्गतं मे जन्माग्र्यं न दशरथजन्मा परिगतः ॥ ६६ ॥

(एते लक्ष्मणस्य)

पुत्रमन्दिरकलत्रमेदुरं मे दुरन्तमिव भासितं जगत् ।

तन्निवेदय दयामनोहरं [संतरं] स्मरसि चेतसा कुतः ॥ ६७ ॥

(भानुकरस्य)

निधानमानन्दनिधेरिदानीं चिदां निदानं भज वा भवानीम् ।

कर्पूरगौरं भज शूलिनं वा नीलाम्बुदामं वनमालिनं वा ॥ ६८ ॥

(लक्ष्मणस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां त्रयोदशो व्यापारः ।

अहौ वा हारे वा बलवति रिपौ वा सुहृदि वा
मणौ वा लोष्ठे वा कुसुमशयने वा दृषदि वा ।
तृणे वा स्त्रेणे वा मम समदृशो यान्तु दिवसाः
कचित्पुण्यारण्ये शिव शिव शिवेति प्रलपतः ॥ ६२ ॥

(श्रीभर्तृहरेः)

सवेदो निर्वेदमृतिपण्डितै रतिजडस्यसंभावनव्यसौ (?)
.....तदधुना मनाक् हसति हतान् पण्डितान् ॥ ६३ ॥
(लक्ष्मणस्य)

कल्पद्रुमोऽपि कालेन भवेद्यदि फलप्रदः ।
को विशेषस्तदा तस्य वन्यैरन्यैर्महीरुहैः ॥
.....माणो भ्रमान्मद्विरहे स्थिता स्यात् ।

शाकुन्तिका कापि मिथोऽथ पोतान्विधाय नीडं निबिडं कदा वा ॥ ६४ ॥

कुचौ तु परिचर्चितौ परिचितं चिरं चन्दनं
कृताः परमुरोजयोः परिसरेऽरविन्दस्रजः ।
स्तुतिर्नतिरपि स्मृतिर्वरतनोः कृतैवादरा-
दिदं तु निखिलं मया विरचितं पुनर्नेश्वरे ॥ ६५ ॥

चिरं ध्याता रामा क्षणमपि न रामप्रतिकृतिः
परं पीतं रामाधरमधु न रामाङ्घ्रिसलिलम् ।
नता रुष्टा रामा यदरचि न रामाय विनति-
र्गतं मे जन्माग्र्यं न दशरथजन्मा परिगतः ॥ ६६ ॥

(एते लक्ष्मणस्य)

पुत्रमन्दिरकलत्रमेदुरं मे दुरन्तमिव भासितं जगत् ।
तन्निवेदय दयामनोहरं [संतरं] स्मरसि चेतसा कुतः ॥ ६७ ॥
(भानुकरस्य)

निधानमानन्दनिधेरिदानीं चिदां निदानं भज वा भवानीम् ।
कर्पूरगौरं भज शूलिनं वा नीलाम्बुदामं वनमालिनं वा ॥ ६८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां त्रयोदशो व्यापारः ।

चतुर्दशो व्यापारः ।

चिरं बुद्ध्या विरचितान्कविभिः.....

धन्यानन्यापदेशांस्ताना..... ॥ १ ॥

अथ कल्पद्रुमः—

विवेकविधुरं किलानुचितमेव कल्पद्रुम

द्रुमाधिप कृतं त्वया वितरणैकचेतस्तया ।

समं वदति पण्डितैरतिजडस्य संभावना-

मसौ तदधुना मनाग्हसति हन्त तान्पण्डितान् ॥ २ ॥

(लक्ष्मणः)

कल्पद्रुमोऽपि कालेन भवेद्यदि फलप्रदः ।

को विशेषस्तदा तस्य वन्यैरन्यैर्महीरुहैः ॥ ३ ॥

(कस्यापि)

अथ चम्पकः—

साधारणतरुबुद्ध्या न मया बद्धस्तवालवालोऽपि ।

लज्जयसि मामिदानीं चम्पक भुवनाधिवासिभिः कुसुमैः ॥ ४ ॥

अमन्वनान्ते नवमञ्जरीषु न षट्पदो गन्धफलीमजिघ्रत् ।

सा किं न रम्या स च किं न रन्ता बलीयसी केवलमीश्वरेच्छा ॥ ५ ॥

कोपं चम्पक मुञ्च याचकजनैरायासितस्त्वं सखे

मा म्लासीः परितो विलोकय तरुः कस्तेऽधिरूढस्तुलाम् ।

कोपश्चेन्नियतस्तवास्ति हृदये धात्रे तदा कुप्यतां

येन त्वं हि सुवर्णवर्णकुसुमामोदोऽद्वितीयः कृतः ॥ ६ ॥

अथ केसरतरुः—

[संभावितो न] तरुणीकरपल्लवेन

सिक्तोसि नेन्दुवदनावदनासवेन ।

कुग्रामपामरनिकेतनसंनिधाने

केनेह केसरतरो बत रोपितोऽसि ॥ ७ ॥

चतुर्दशो व्यापारः ।

चिरं बुद्ध्या विरचितान्कविभिः.....

धन्यानन्यापदेशास्ताना..... ॥ १ ॥

अथ कल्पद्रुमः—

विवेकविधुरं किलानुचितमेव कल्पद्रुम

द्रुमाधिप कृतं त्वया वितरणैकचेतस्तया ।

समं वदति पण्डितैरतिजडस्य संभावना-

मसौ तदधुना मनाग्हसति हन्त तान्पण्डितान् ॥ २ ॥

(लक्ष्मणः)

कल्पद्रुमोऽपि कालेन भवेद्यदि फलप्रदः ।

को विशेषस्तदा तस्य वन्यैरन्यैर्महीरुहैः ॥ ३ ॥

(कस्यापि)

अथ चम्पकः—

साधारणतरुबुद्ध्या न मया बद्धस्तवालवालोऽपि ।

लज्जयसि मामिदानीं चम्पक भुवनाधिवासिभिः कुसुमैः ॥ ४ ॥

अमन्वनान्ते नवमञ्जरीषु न षट्पदो गन्धफलीमजिघ्रत् ।

सा किं न रम्या स च किं न रन्ता बलीयसी केवलमीश्वरेच्छा ॥ ५ ॥

कोपं चम्पक मुञ्च याचकजनैरायासितस्त्वं सखे

मा म्लासीः परितो विलोकय तरुः कस्तेऽधिरूढस्तुलाम् ।

कोपश्चेन्नियतस्तवास्ति हृदये धात्रे तदा कुप्यतां

येन त्वं हि सुवर्णवर्णकुसुमामोदोऽद्वितीयः कृतः ॥ ६ ॥

अथ केसरतरुः—

[संभावितो न] तरुणीकरपल्लवेन

सिक्तोसि नेन्दुवदनावदनासवेन ।

कुग्रामपामरनिकेतनसंनिधाने

केनेह केसरतरो बत रोपितोऽसि ॥ ७ ॥

अथागुरुः—

एणाद्याः पशवः किरातपरिषन्नैषा गुणग्राहिणी
 संचारोऽस्ति न नागरस्य विषयोच्छिन्नं मुनीनां मनः ।
 धूमेनातिसुगन्धिनात्र विपिने दिक्कक्रमामोदय-
 त्रामूलं परिदह्यतेऽगुरुतरुः कस्मै किमाचक्ष्महे ॥ ८ ॥
 आपत्स्वेव हि महतां शक्तिरभिव्यज्यते न संपत्सु ।
 अगुरोस्तथा न गन्धः प्रागस्ति यथाम्निपतितस्य ॥ ९ ॥
 (केषामप्येते)

अथाग्रः—

रे रे रसाल तरुसार वचो वि(ऽव)धेहि
 वासन्तिकीं खफलपल्लवपुष्पलक्ष्मीम् ।
 तावद्विकस्वरपिकद्विजसात्कुरु द्रा-
 ङ्ग व्यग्रितोऽसि कलभैः शलभैश्च यावत् ॥ १० ॥
 यद्यध्वनीन चिरमध्वनि धर्मखिन्नः
 कासारतीररुहमाश्रय नम्रमाम्रम् ।
 छाया न केवलमितः श्रमिता लभन्ते
 कामं पचेलिमफलं विमलं जलं च ॥ ११ ॥
 (भोजप्रबन्धात्)
 न तादृक्पूर्वे न च मलयजे नो मृगमदे
 फले वा पुष्पे वा तव मिलति यादृक्परिमलः ।
 परं त्वेको दोषस्त्वयि खलु रसाले यदधिकः
 पिके वा काके वा गुरुलघुविशेषं न मनुषे ॥ १२ ॥
 (एते लक्ष्मणस्य)

अथ द्राक्षा—

दासेरकस्य दासीयं बदरी यदि रोचते ।
 एतावतैव किं द्राक्षा न साक्षादमृतास्पदम् ॥ १३ ॥

अथागुरुः—

एणाद्याः पशवः किरातपरिषन्नैषा गुणग्राहिणी
 संचारोऽस्ति न नागरस्य विषयोच्छिन्नं मुनीनां मनः ।
 धूमेनातिसुगन्धिनात्र विपिने दिक्कक्रमामोदय-
 त्रामूलं परिदह्यतेऽगुरुतरुः कस्मै किमाचक्ष्महे ॥ ८ ॥
 आपत्स्वेव हि महतां शक्तिरभिव्यज्यते न संपत्सु ।
 अगुरोस्तथा न गन्धः प्रागस्ति यथाम्निपतितस्य ॥ ९ ॥
 (केषामप्येते)

अथाग्रः—

रे रे रसाल तरुसार वचो वि(ऽव)धेहि
 वासन्तिकीं खफलपल्लवपुष्पलक्ष्मीम् ।
 तावद्विकस्वरपिकद्विजसात्कुरु द्रा-
 ङ्ग व्यग्रितोऽसि कलभैः शलभैश्च यावत् ॥ १० ॥
 यद्यध्वनीन चिरमध्वनि धर्मखिन्नः
 कासारतीररुहमाश्रय नम्रमाम्रम् ।
 छाया न केवलमितः श्रमिता लभन्ते
 कामं पचेलिमफलं विमलं जलं च ॥ ११ ॥
 (भोजप्रबन्धात्)
 न तादृक्पूर्वे न च मलयजे नो मृगमदे
 फले वा पुष्पे वा तव मिलति यादृक्परिमलः ।
 परं त्वेको दोषस्त्वयि खलु रसाले यदधिकः
 पिके वा काके वा गुरुलघुविशेषं न मनुषे ॥ १२ ॥
 (एते लक्ष्मणस्य)

अथ द्राक्षा—

दासेरकस्य दासीयं बदरी यदि रोचते ।
 एतावतैव किं द्राक्षा न साक्षादमृतास्पदम् ॥ १३ ॥

यद्यपि न भवति हानिः परकीयां चरति रासभो द्राक्षाम् ।
असमञ्जसमिति मत्त्वा तथापि परिखिद्यते चेतः ॥ १४ ॥ (कयोरपि)

अथ पलाशः—

किंशुके शुक मा तिष्ठ भाविमृष्टफलाशया ।

बाह्यरङ्गप्रसङ्गेन के के नानेन वञ्चिताः ॥ १५ ॥ (कस्यापि)

उपनदपुलिने महापलाशः पवनसमुच्चलदेकपत्रपाणिः ।

दवदहनविनष्टजीवितानां सलिलमिवैष ददाति पादपानाम् ॥ १६ ॥
(भोजप्रबन्धात्)

अथ तालः—

त्वमध्वनीनाध्वनि तालशालच्छायामिमां हस्तमितां श्रितोऽसि ।

छायाफलेनाप्यतुलं फलं चे.....दलितं वृथा स्यात् ॥ १७ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ वृक्षः—

कश्चिन्नवं पल्लवमादधाति कश्चित्प्रसूनानि फलानि कश्चित् ।

परं करालेऽस्य निदाघकाले मूले न दाता सलिलस्य कश्चित् ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

मुक्तानि यैस्तव फलानि पचेलिमानि

क्रोडस्थितैरहह वीतभयैः प्रसुप्तम् ।

ते पक्षिणो जलरयेण विकृष्यमाणं

पश्यन्ति पादप भवन्तममी तटस्थाः ॥ १९ ॥

(महादेवस्य)

किं जातोऽसि चतुष्पथे घनतरं छन्नोऽसि किं छायाया

छन्नश्चेत्फलितोऽसि किं फलभरैराढ्योऽसि किं संनतः ।

हे सद्बृक्ष सहस्र संप्रति सखे शाखाशिखाकर्षण-

क्षोभाभोटनभञ्जनानि जनतः स्वैरेव दुश्चेष्टितैः ॥ २० ॥

(कस्यापि)

यद्यपि न भवति हानिः परकीयां चरति रासभो द्राक्षाम् ।
असमञ्जसमिति मत्त्वा तथापि परिखिद्यते चेतः ॥ १४ ॥ (कयोरपि)

अथ पलाशः—

किंशुके शुक मा तिष्ठ भाविमृष्टफलाशया ।

बाह्यरङ्गप्रसङ्गेन के के नानेन वञ्चिताः ॥ १५ ॥ (कस्यापि)

उपनदपुलिने महापलाशः पवनसमुच्चलदेकपत्रपाणिः ।

दवदहनविनष्टजीवितानां सलिलमिवैष ददाति पादपानाम् ॥ १६ ॥
(भोजप्रबन्धात्)

अथ तालः—

त्वमध्वनीनाध्वनि तालशालच्छायामिमां हस्तमितां श्रितोऽसि ।

छायाफलेनाप्यतुलं फलं चे.....दलितं वृथा स्यात् ॥ १७ ॥
(लक्ष्मणस्य)

अथ वृक्षः—

कश्चिन्नवं पल्लवमादधाति कश्चित्प्रसूनानि फलानि कश्चित् ।

परं करालेऽस्य निदाघकाले मूले न दाता सलिलस्य कश्चित् ॥ १८ ॥
(लक्ष्मणस्य)

भुक्तानि यैस्तव फलानि पचेलिमानि

क्रोडस्थितैरहह वीतभयैः प्रसुप्तम् ।

ते पक्षिणो जलरयेण विकृष्यमाणं

पश्यन्ति पादप भवन्तममी तटस्थाः ॥ १९ ॥

(महादेवस्य)

किं जातोऽसि चतुष्पथे घनतरं छन्नोऽसि किं छायाया

छन्नश्चेत्फलितोऽसि किं फलभरैराढ्योऽसि किं संनतः ।

हे सद्वृक्ष सहस्र संप्रति सखे शाखाशिखाकर्षण-

क्षोभामोटनभञ्जनानि जनतः स्वैरेव दुश्चेष्टितैः ॥ २० ॥

(कस्यापि)

इयं बाला वल्ली मृदुकिंसलयं तापविलयं
 घनच्छायं शालं नवमतिविशालं परिगता ।
 परं त्वस्याभ्यन्तर्गललवभस्सीकृतवनं
 भुजङ्गं प्रोत्तुङ्गं कथमिव वराकी कलयतु ॥ २१ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ कमलिनी—

विधौ पुरःस्थे(पि)निधौ कलानामुद्यत्करेऽपि द्विजराजनान्नि ।
 किं पद्मिनी हारकवच्चकार वराटकीनामपि गोपनानि ॥ २२ ॥
 रे पद्मिनीपत्र भवच्चरित्रं चित्रं प्रतीमो वयमत्र किंचित् ।
 त्वं पङ्कजन्मापि यदृच्छभावादपि स्पृशस्यम्बु न पङ्कसङ्गि ॥ २३ ॥
 (द्वौ लक्ष्मणस्य)

अथ कुमुद्वती—

अपि त्वया कैरविणि व्यधायि मुधा सुधाबन्धुनि बन्धुभावः ।
 जनापवादः परितः प्रयातः समागमो हन्त न जातु जातः ॥ २४ ॥
 (कस्यापि)
 जनिः सरोऽङ्कादतिपङ्किनो यद्यलोलुपैर्वा मधुपैर्विहारः ।
 कलङ्क एवैष कुमुद्वतीनां कलङ्किनः किंतु कलावतीनाम् ॥ २५ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ भृङ्गः—

अन्यासु तावदुपमर्दसहासु भृङ्ग
 लोलं विनोदय मनः सुमनोलतासु ।
 मुग्धामजातरजसं कलिकामकाले
 बालां कदर्थयसि किं नवमलिकायाः ॥ २६ ॥
 (विकटनितम्बायाः)

मदनमवलोक्य निष्फलमनित्यतां बन्धुजीवकुसुमानाम् ।
 वनमुपगम्य भ्रमरः संप्रति जातो जपासक्तः ॥ २७ ॥
 (कस्यापि)

इयं बाला वल्ली मृदुकिंसलयं तापविलयं
 घनच्छायं शालं नवमतिविशालं परिगता ।
 परं त्वस्याभ्यन्तर्गललवभस्सीकृतवनं
 भुजङ्गं प्रोत्तुङ्गं कथमिव वराकी कलयतु ॥ २१ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ कमलिनी—

विधौ पुरःस्थे(पि)निधौ कलानामुद्यत्करेऽपि द्विजराजनान्नि ।
 किं पद्मिनी हारकवच्चकार वराटकीनामपि गोपनानि ॥ २२ ॥
 रे पद्मिनीपत्र भवच्चरित्रं चित्रं प्रतीमो वयमत्र किंचित् ।
 त्वं पङ्कजन्मापि यदृच्छभावादपि स्पृशस्यम्बु न पङ्कसङ्गि ॥ २३ ॥
 (द्वौ लक्ष्मणस्य)

अथ कुमुद्वती—

अपि त्वया कैरविणि व्यधायि मुधा सुधाबन्धुनि बन्धुभावः ।
 जनापवादः परितः प्रयातः समागमो हन्त न जातु जातः ॥ २४ ॥
 (कस्यापि)
 जनिः सरोऽङ्कादतिपङ्किनो यद्यलोलुपैर्वा मधुपैर्विहारः ।
 कलङ्क एवैष कुमुद्वतीनां कलङ्किनः किंतु कलावतीनाम् ॥ २५ ॥
 (लक्ष्मणस्य)

अथ भृङ्गः—

अन्यासु तावदुपमर्दसहासु भृङ्ग
 लोलं विनोदय मनः सुमनोलतासु ।
 मुग्धामजातरजसं कलिकामकाले
 बालां कदर्थयसि किं नवमलिकायाः ॥ २६ ॥
 (विकटनितम्बायाः)

मदनमवलोक्य निष्फलमनित्यतां बन्धुजीवकुसुमानाम् ।
 वनमुपगम्य भ्रमरः संप्रति जातो जपासक्तः ॥ २७ ॥
 (कस्यापि)

कियद्वारं वारस्थितमधुकरैः पद्मसदने
त्वमद्धा रुद्धोऽसि द्रुतमिति निषिद्धोऽस्यपसर ।

हठादन्तर्गत्वा पिबसि मकरन्दं च मधुलिङ्गं

मिषन्तस्तिष्ठामो वयमिह दुराशानियमिनः ॥ २८ ॥

आलिङ्गसे(?) चारुलतां लवङ्गीमाचुम्बसे(?) चाम्बुजिनीं क्रमेण ।

तां चूतवल्लीं मधुप प्रकामं संताडयस्येव पदैः किमेतत् ॥ २९ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

स्वामोदवासितसमग्रदिगन्तराला

रक्ता मनोहरशिखा सुकुमारमूर्तिः ।

सेव्या सरोजकलिका तु यदैव जाता

नीतस्तदैव विधिना मधुपोऽन्यदेशम् ॥ ३० ॥

अपसर मधुकर दूरं परिमलबहुलेऽपि केतकीकुसुमे ।

इह नहि मधुलवलाभो भवति परं धूलिधूसरं वदनम् ॥ ३१ ॥

(कस्यापि)

सानन्दमेष मकरन्दमिहारविन्दे

विन्देत षट्पदयुवेति जनैरटङ्कि ।

दैवादकाण्डपरिमुद्रितपुण्डरीक-

कोषादभूदहह निःसरणं पुमर्थः ॥ ३२ ॥

(रामचन्द्रस्य)

अथ पिकः—

किं कोमलैः कलरवैः पिक तिष्ठ तूष्णी-

मेते तु पामरनराः स्वरमाकलय्य ।

को वा रटत्ययमये निकटे कङ्कनि

रे वध्यतामिति वदन्ति गृहीतदण्डाः ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

शृगालशशशार्दूलदूषितं दण्डकावनम् ।

पञ्चमं गायतानेन कोकिलेन प्रतिष्ठितम् ॥ ३४ ॥ (भानुकरस्य)

कियद्वारं वारस्थितमधुकरैः पद्मसदने
त्वमद्धा रुद्धोऽसि द्रुतमिति निषिद्धोऽस्यपसर ।

हठादन्तर्गत्वा पिबसि मकरन्दं च मधुलिङ्गं

मिषन्तस्तिष्ठामो वयमिह दुराशानियमिनः ॥ २८ ॥

आलिङ्गसे(?) चारुलतां लवङ्गीमाचुम्बसे(?) चाम्बुजिनीं क्रमेण ।

तां चूतवल्लीं मधुप प्रकामं संताडयस्येव पदैः किमेतत् ॥ २९ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

स्वामोदवासितसमग्रदिगन्तराला

रक्ता मनोहरशिखा सुकुमारमूर्तिः ।

सेव्या सरोजकलिका तु यदैव जाता

नीतस्तदैव विधिना मधुपोऽन्यदेशम् ॥ ३० ॥

अपसर मधुकर दूरं परिमलबहुलेऽपि केतकीकुसुमे ।

इह नहि मधुलवलाभो भवति परं धूलिधूसरं वदनम् ॥ ३१ ॥

(कस्यापि)

सानन्दमेष मकरन्दमिहारविन्दे

विन्देत षट्पदयुवेति जनैरटङ्कि ।

दैवादकाण्डपरिमुद्रितपुण्डरीक-

कोषादभूदहह निःसरणं पुमर्थः ॥ ३२ ॥

(रामचन्द्रस्य)

अथ पिकः—

किं कोमलैः कलरवैः पिक तिष्ठ तूष्णी-

मेते तु पामरनराः स्वरमाकलय्य ।

को वा रटत्ययमये निकटे कङ्कनि

रे वध्यतामिति वदन्ति गृहीतदण्डाः ॥ ३३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

शृगालशशशार्दूलदूषितं दण्डकावनम् ।

पञ्चमं गायतानेन कोकिलेन प्रतिष्ठितम् ॥ ३४ ॥ (भानुकरस्य)

अथ चातकः—

ऊर्ध्वाकृतग्रीवमहो मुधैव किं याचसे चातकपोत मेघम् ।

अत्यूर्जितं गर्जितमात्रमस्मिन्नम्भोधरे बिन्दुलवस्तु दूरम् ॥ ३५ ॥

(लक्ष्मणस्य)

एक एव खगो मानी चिरं जीवतु चातकः ।

त्रियते वा पिपासायां याचते वा पुरंदरम् ॥ ३६ ॥ (कस्यापि)

अथ शुकः—

सुभाषितस्याध्ययनेऽनुषक्तं शुकं वराकाः प्रहसन्ति काकाः ।

तमेव संसत्सु गिरं किरन्तं दृष्ट्वा भवन्ति त्रपया नतास्याः ॥ ३७ ॥

अमुष्मिन्नारामे तरुभिरभिरामे विटपिनः

स्फुटं नृत्यद्भृङ्गीविविधनवसंगीतकलनात् ।

परानन्दैः पूर्णाः क इव तव वर्णावलिपद-

क्रमश्रोता वेत्ता द्विजवर शुक श्राम्यसि कुतः ॥ ३८ ॥

(द्वौ लक्ष्मणस्य)

इयं पल्ली भिल्लैरनुचितसमारम्भरसिकैः

समन्तादाक्रान्ता विषविषमबाणप्रणयिभिः ।

तरोरस्य स्कन्धे गमय समयं कीर निभृतं

न वाणी कल्याणी तदिह मुखमुद्रैव शरणम् ॥ ३९ ॥

(भर्तृहरेः)

द्राक्षां प्रदेहि मधु वा वदने निषेहि

देहे विषेहि किमु वा करलालनानि ।

जातिस्वभावचपलः पुनरेष कीर-

स्तत्रैव यास्यति कुशोदरि मुक्तबन्धः ॥ ४० ॥ (कस्यापि)

अथ हंसः—

हा हन्त मानससरःसलिलावतंस

रे राजहंस पथसोः प्रविवेचनाय ।

अथ चातकः—

ऊर्ध्वीकृतग्रीवमहो मुधैव किं याचसे चातकपोत मेघम् ।

अत्यूर्जितं गर्जितमात्रमस्मिन्नम्भोधरे बिन्दुलवस्तु दूरम् ॥ ३५ ॥

(लक्ष्मणस्य)

एक एव खगो मानी चिरं जीवतु चातकः ।

म्रियते वा पिपासायां याचते वा पुरंदरम् ॥ ३६ ॥ (कस्यापि)

अथ शुकः—

सुभाषितस्याध्ययनेऽनुषक्तं शुकं वराकाः प्रहसन्ति काकाः ।

तमेव संसत्सु गिरं किरन्तं दृष्ट्वा भवन्ति त्रपया नतास्याः ॥ ३७ ॥

अमुष्मिन्नारामे तरुभिरभिरामे विटपिनः

स्फुटं नृत्यद्भृङ्गीविविधनवसंगीतकलनात् ।

परानन्दैः पूर्णाः क इव तव वर्णावलिपद-

क्रमश्रोता वेत्ता द्विजवर शुक श्राम्यसि कुतः ॥ ३८ ॥

(द्वौ लक्ष्मणस्य)

इयं पल्ली भिल्लैरनुचितसमारम्भरसिकैः

समन्तादाक्रान्ता विषविषमबाणप्रणयिभिः ।

तरोरस्य स्कन्धे गमय समयं कीर निभृतं

न वाणी कल्याणी तदिह मुखमुद्रैव शरणम् ॥ ३९ ॥

(भर्तृहरेः)

द्राक्षां प्रदेहि मधु वा वदने निधेहि

देहे विधेहि किमु वा करलालनानि ।

जातिस्वभावचपलः पुनरेष कीर-

स्तत्रैव यास्यति कृशोदरि मुक्तबन्धः ॥ ४० ॥ (कस्यापि)

अथ हंसः—

हा हन्त मानससरःसलिलावतंस

रे राजहंस पयसोः प्रविवेचनाय ।

चेच्छक्तिमान्खलु भवान्न तदा किमु स्यात्

किं वा कपोत उत वा कलविङ्कपोतः ॥ ४१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

हंसी वेत्ति परागपिञ्जरतनुः कुत्रापि पद्माकरे

प्रेयान्मे विसकन्दलीकिसलयं भुङ्क्ते ह्ययं निर्वृतः ।

नो जानाति तपस्विनी यदनिशं जम्बालमालोडय-

ञ्शैवालाङ्कुरमप्यसौ न लभते हंसो विशीर्णच्छदः ॥ ४२ ॥

(कस्यापि)

अथ समुद्रः—

निष्पीतपीनतिमिराणि मनोहराणि

रत्नानि सन्ति न कियन्ति तवान्तिकेषु ।

एतस्य कौस्तुभमणेर्रजतः परंतु

पाथोनिधे स्मरणमान्तरमावहेथाः ॥ ४३ ॥

त्वमद्य सिन्धो जगदेकबन्धो रत्नानि दातुं विमुखोऽसि कस्मात् ।

किं वा सुतः कल्पमहीरुहस्ते दानैः कृतार्थीकुरुते जगन्ति ॥ ४४ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

पीत्वा गर्जन्यपस्ते दिशि दिशि जलदास्त्वं शरण्यो गिरीणां

सुत्रामत्रासभाजां त्रिदशविटपिनां जन्मभूमिस्त्वमेव ।

गाम्भीर्यं तच्च तादृक् तव सलिलनिधे किंतु विज्ञाप्यमेत-

त्सर्वोपायेन मैत्रावरुणिमुनिकृपादृष्टयः काङ्क्षणीयाः ॥ ४५ ॥

(हरिहरस्य)

रत्नैरापूरितस्यापि मदलेशोऽस्ति नाम्बुधेः ।

मुक्ताः कतिपयाः प्राप्य मातङ्गा मदविह्वलाः ॥ ४६ ॥

खस्त्यस्तु विद्रुमवनाय नमो मणिभ्यः

कल्याणिनी भवतु मौक्तिकशुक्तिमाला ।

प्राप्तं मया सकलमेव फलं पयोधे

यद्धारुणैर्जलचरैर्न विदारितोऽस्मि ॥ ४७ ॥ (कयोरपि)

चेच्छक्तिमान्खलु भवान्न तदा किमु स्यात्

किं वा कपोत उत वा कलविङ्कपोतः ॥ ४१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

हंसी वेत्ति परागपिञ्जरतनुः कुत्रापि पद्माकरे

प्रेयान्मे विसकन्दलीकिसलयं भुङ्क्ते ह्ययं निर्वृतः ।

नो जानाति तपस्विनी यदनिशं जम्बालमालोडय-

ञ्शैवालाङ्कुरमप्यसौ न लभते हंसो विशीर्णच्छदः ॥ ४२ ॥

(कस्यापि)

अथ समुद्रः—

निष्पीतपीनतिमिराणि मनोहराणि

रत्नानि सन्ति न कियन्ति तवान्तिकेषु ।

एतस्य कौस्तुभमणेर्रजतः परंतु

पाथोनिधे स्मरणमान्तरमावहेथाः ॥ ४३ ॥

त्वमद्य सिन्धो जगदेकबन्धो रत्नानि दातुं विमुखोऽसि कस्मात् ।

किं वा सुतः कल्पमहीरुहस्ते दानैः कृतार्थीकुरुते जगन्ति ॥ ४४ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

पीत्वा गर्जन्यपस्ते दिशि दिशि जलदास्त्वं शरण्यो गिरीणां

सुत्रामत्रासभाजां त्रिदशविटपिनां जन्मभूमिस्त्वमेव ।

गाम्भीर्यं तच्च तादृक् तव सलिलनिधे किंतु विज्ञाप्यमेत-

त्सर्वोपायेन मैत्रावरुणिमुनिकृपादृष्टयः काङ्क्षणीयाः ॥ ४५ ॥

(हरिहरस्य)

रत्नैरापूरितस्यापि मदलेशोऽस्ति नाम्बुधेः ।

मुक्ताः कतिपयाः प्राप्य मातङ्गा मदविह्वलाः ॥ ४६ ॥

खस्त्यस्तु विद्रुमवनाय नमो मणिभ्यः

कल्याणिनी भवतु मौक्तिकशुक्तिमाला ।

प्राप्तं मया सकलमेव फलं पयोधे

यद्धारुणैर्जलचरैर्न विदारितोऽस्मि ॥ ४७ ॥ (कयोरपि)

अथ तडागः—

क्रौञ्चः क्रीडतु कूर्दतां च कुररः कङ्कः परिष्वज्यतां ।

मद्गुर्माद्यतु सारसश्च रसतु प्रोङ्डीयतां टिट्ठिभः ।

भेकाः सन्तु बका वसन्तु चरतु स्वच्छन्दमाटिस्तटे

हंहो पद्मसरः कुतः कतिपयैर्हसैर्विना श्रीस्तव ॥ ४८ ॥

(कस्यापि)

अमरैर्गतं मधुकरैश्चलितं प्रकरं(रैः) प्रयातमपि पद्मदशाम् ।

विभवे गते सकलमेव गतं ध्रुवमेकमञ्चयति यशः सरसीम् ॥ ४९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ गिरिनिर्झरः—

कल्लोलसंचलदगाधजलैरलोलैः

कल्लोलिनीपरिवृढैः किमपेयतोयैः ।

जीयात्स जर्जरतनुर्गिरिनिर्झरोऽयं

यद्विप्रुषापि तृषिता वितृषा भवन्ति ॥ ५० ॥

यद्वैभवाय निजवारिणि वारिसिन्धोः

क्षारं विमिश्रयसि निर्झर तद्वथैव ।

धिग्वैभवं तु तदमी तृषितास्तवैव

नीराय हन्त मधुराय करं किरन्ति ॥ ५१ ॥

(द्वौ लक्ष्मणस्य)

अथ जलम्—

शैत्यं नाम गुणस्तवैव सहजः स्वाभाविकी स्वच्छता

किं ब्रूमः शुचितां भवन्ति शुचयः स्पर्शेन यस्यापरे ।

किं वातः परमस्ति ते स्तुतिपदं यज्जीवनं देहिनां

त्वं चेन्नीचपथेन गच्छसि पयः कस्त्वां निरोद्धुं क्षमः ॥ ५२ ॥

(कस्यापि)

अथ तडागः—

क्रौञ्चः क्रीडतु कूर्दतां च कुररः कङ्कः परिष्वज्यतां

मद्गुर्माद्यतु सारसश्च रसतु प्रोड्डीयतां टिट्ठिभः ।

भेकाः सन्तु बका वसन्तु चरतु स्वच्छन्दमाटिस्तटे

हंहो पद्मसरः कुतः कतिपयैर्हसैर्विना श्रीस्तव ॥ ४८ ॥

(कस्यापि)

अमरैर्गतं मधुकरैश्चलितं प्रकरं(रैः) प्रयातमपि पद्मदशाम् ।

विभवे गते सकलमेव गतं ध्रुवमेकमञ्चयति यशः सरसीम् ॥ ४९ ॥

(भानुकरस्य)

अथ गिरिनिर्झरः—

कल्लोलसंचलदगाधजलैरैलोलैः

कल्लोलिनीपरिवृढैः किमपेयतोयैः ।

जीयात्स जर्जरतनुर्गिरिनिर्झरोऽयं

यद्विप्लुषापि तृषिता वितृषा भवन्ति ॥ ५० ॥

यद्वैभवाय निजवारिणि वारिसिन्धोः

क्षारं विमिश्रयसि निर्झर तद्वृथैव ।

धिग्वैभवं तु तदमी तृषितास्तवैव

नीराय हन्त मधुराय करं किरन्ति ॥ ५१ ॥

(द्वौ लक्ष्मणस्य)

अथ जलम्—

शैत्यं नाम गुणस्तवैव सहजः स्वाभाविकी स्वच्छता

किं ब्रूमः शुचितां भवन्ति शुचयः स्पर्शेन यस्यापरे ।

किं वातः परमस्ति ते स्तुतिपदं यज्जीवनं देहिनां

त्वं चेन्नीचपथेन गच्छसि पयः कस्त्वां निरोद्धुं क्षमः ॥ ५२ ॥

(कस्यापि)

अथ कूपः—

यद्यपि बहुगुणगम्यं जीवनमेतस्य कूपमुख्यस्य ।

जयति तथापि विवेको दानं पात्रानुमानेन ॥ ५३ ॥

(भोजदेवस्य)

सगुणैः सेवितोपान्तो विनतैः प्राप्तदर्शनः ।

नीचोऽपि कूपः सत्पात्रैर्जीवनार्थं समाश्रितः ॥ ५४ ॥

(शार्ङ्गधरस्य)

अथ महीधरः—

किं तेन हेमगिरिणा रजताद्रिणा वा

यत्राश्रिता हि तरवस्तरवस्त एव ।

मन्यामहे मलयमेव यदाश्रयेण

शाखोटनिम्बकुटजा अपि चन्दनानि ॥ ५५ ॥

रोहणाचल शैलेषु कस्तुलां कलयेत्तव ।

यस्य पाषाणखण्डानि मण्डनानि महीभृताम् ॥ ५६ ॥

(कथोरपि)

अथ केसरी—

कुरङ्गीणां यूथं निभृतमिदमङ्गीकृतमयं

निरातङ्को यन्निर्दयहृदयभावोऽर्दयतु तत् ।

निवेद्यो वा कस्मिन्नयमविनयः केसरियुवा

हठान्मत्तेभानां युवतिषु विधत्ते नखपदम् ॥ ५७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अन्तर्बलान्यहममुष्य सृगाधिपस्य

वाचा निवेद्य कथमद्य लघूकरोमि ।

जानन्ति किंतु करजक्षतकुम्भिकुम्भ-

निर्मुक्तमौक्तिकमयानि वनान्तराणि ॥ ५८ ॥

(कस्यापि)

अथ कूपः—

यद्यपि बहुगुणगम्यं जीवनमेतस्य कूपमुख्यस्य ।

जयति तथापि विवेको दानं पात्रानुमानेन ॥ ५३ ॥

(भोजदेवस्य)

सगुणैः सेवितोपान्तो विनतैः प्राप्तदर्शनः ।

नीचोऽपि कूपः सत्पात्रैर्जीवनार्थं समाश्रितः ॥ ५४ ॥

(शार्ङ्गधरस्य)

अथ महीधरः—

किं तेन हेमगिरिणा रजताद्रिणा वा

यत्राश्रिता हि तरवस्तरवस्त एव ।

मन्यामहे मलयमेव यदाश्रयेण

शाखोटनिम्बकुटजा अपि चन्दनानि ॥ ५५ ॥

रोहणाचल शैलेषु कस्तुलां कलयेत्तव ।

यस्य पाषाणखण्डानि मण्डनानि महीभृताम् ॥ ५६ ॥

(कथोरपि)

अथ केसरी—

कुरङ्गीणां यूथं निभृतमिदमङ्गीकृतमयं

निरातङ्को यन्निर्दयहृदयभावोऽर्दयतु तत् ।

निवेद्यो वा कस्मिन्नयमविनयः केसरियुवा

हठान्मत्तेभानां युवतिषु विधत्ते नखपदम् ॥ ५७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अन्तर्बलान्यहममुष्य मृगाधिपस्य

वाचा निवेद्य कथमद्य लघूकरोमि ।

जानन्ति किंतु करजक्षतकुम्भिकुम्भ-

निर्मुक्तमौक्तिकमयानि वनान्तराणि ॥ ५८ ॥

(कस्यापि)

स्तन्यं जातो न जग्राह कण्ठीरवकिशोरकः ।

चक्षुर्व्यापारयामास कुञ्जे कुञ्जरशालिनि ॥ ५९ ॥

(भानुकरस्य)

क्षुक्षामोऽपि जराकृशोऽपि शिथिलप्रायोऽपि कष्टां दशा-

मापन्नोऽपि विपन्नधीधृतिरपि प्राणेषु गच्छत्स्वपि ।

मत्तेभेन्द्रविभिन्नकुम्भपिशितग्रासैकबद्धस्पृहः

किं जीर्णं तृणमत्ति मानमहतामग्रेसरः केसरी ॥ ६० ॥

सिंहः शिशुरपि निपतति मदमलिनकपोलमितिषु गजेषु ।

प्रकृतिरियं सत्त्ववतां न खलु वयस्तेजसो हेतुः ॥ ६१ ॥

(भर्तृहरेः)

अथ गजः—

क्रीडाकारि तडागवारिणि गतातङ्कं न पङ्केरुहै-

र्वल्ली काचन शल्लकीतरुगता नाकर्षिता हर्षतः ।

नास्त्रिष्टा करिणी करेण करिणा कामातुरेणामुना

दंष्ट्राभिर्विकटाननः शिव शिव व्यालोकि पञ्चाननः ॥ ६२ ॥

(लक्ष्मणस्य)

केलिं कुरुष्व परिभुङ्क्ष्व सरोरुहाणि

गाहस्य शैलतटनिर्झरिणीपयांसि ।

भावानुरक्तकरिणीकरलालिताङ्ग

मातङ्ग मुञ्च मृगराजरेणामिलाषम् ॥ ६३ ॥

(आनन्दवर्धनस्य)

कौपे पयसि लघीयसि तापेन करः प्रसारितः करिणा ।

सोऽपि न पयसा लिप्तो लाघवमात्मा परं नीतः ॥ ६४ ॥

दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालै-

र्दूरीकृताः करिवरैण मदान्धबुद्ध्या ।

तस्यैव गण्डयुगमण्डनहानिरेषा

भृङ्गाः पुनर्विकचपद्मवने चरन्ति ॥ ६५ ॥

(कयोरपि)

स्तन्यं जातो न जग्राह कण्ठीरवकिशोरकः ।

चक्षुर्व्यापारयामास कुञ्जे कुञ्जरशालिनि ॥ ५९ ॥

(भानुकरस्य)

क्षुत्क्षामोऽपि जराकृशोऽपि शिथिलप्रायोऽपि कष्टां दशा-

मापन्नोऽपि विपन्नधीधृतिरपि प्राणेषु गच्छत्स्वपि ।

मत्तेभेन्द्रविभिन्नकुम्भपिशितग्रासैकबद्धस्पृहः

किं जीर्णं तृणमत्ति मानमहतामग्रेसरः केसरी ॥ ६० ॥

सिंहः शिशुरपि निपतति मदमलिनकपोलमितिषु गजेषु ।

प्रकृतिरियं सत्त्ववतां न खलु वयस्तेजसो हेतुः ॥ ६१ ॥

(भर्तृहरेः)

अथ गजः—

क्रीडाकारि तडागवारिणि गतातङ्कं न पङ्केरुहै-

र्वल्ली काचन शलकीतरुगता नाकर्षिता हर्षतः ।

नाक्षिष्ठा करिणी करेण करिणा कामातुरेणामुना

दंष्ट्राभिर्विकटाननः शिव शिव व्यालोकि पञ्चाननः ॥ ६२ ॥

(लक्ष्मणस्य)

केलिं कुरुष्व परिभुङ्क्त सरोरुहाणि

गाहस्व शैलतटनिर्झरिणीपयांसि ।

भावानुरक्तकरिणीकरलालिताङ्ग

मातङ्ग मुञ्च मृगराजरेणाभिलाषम् ॥ ६३ ॥

(आनन्दवर्धनस्य)

कौपे पयसि लघीयसि तापेन करः प्रसारितः करिणा ।

सोऽपि न पयसा लिप्तो लाघवमात्मा परं नीतः ॥ ६४ ॥

दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालै-

दूरीकृताः करिवरेण मदान्धबुद्ध्या ।

तस्यैव गण्डयुगमण्डनहानिरेषा

भृङ्गाः पुनर्विकचपद्मवने चरन्ति ॥ ६५ ॥

(कयोरपि)

निषेवन्तामेते वृषमहिषमेषाश्चहरिणा

गृहाणि क्षुद्राणां कतिपयतृणैरेव सुखिनः ।

गजानामास्थानं मदसलिलजम्बालितभुवां

तदेकं विन्ध्याद्रेर्विपिनमथवा भूपसदनम् ॥ ६६ ॥

लुलाये गोमायौ मृगपरिषदि श्वापदकुले

करिष्यन्कार्पण्यं किमिह महिमानं गमयसि ।

निमग्नः पङ्केऽस्मिन्ननुभव करीन्द्राधिप दशा-

मभद्रं भद्रं वा विधिलिखितमुन्मूलयतु कः ॥ ६७ ॥

(कयोरपि)

तापो नापगतस्तृषा न च कृशा धौता न धूली तनो-

र्न स्वच्छन्दमकारि कन्दकवलः का नाम केलीकथा ।

बूरोत्क्षिप्तकरेण हन्त करिणा स्पृष्टा न वा पद्मिनी

प्रारब्धो मधुपैरकारणमहो झाङ्कारकोलाहलः ॥ ६८ ॥

(लक्ष्मणसेनस्य)

एष एव मनस्तापः पङ्के मग्नस्य दन्तिनः ।

यतते यत्समुद्धर्तुं ज्ञातयो निभृतस्मिताः ॥ ६९ ॥

गजस्य पङ्कमग्नस्य त्रपाकरमिदं महत् ।

पारमुत्प्लुत्य यद्गच्छन्हरिणोऽपि हसत्यसौ ॥ ७० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

अथ मृगः—

तृणं किं तर्णोषि प्रपिबसि किमर्णोऽपि मधुरं

रतक्रीडासक्तामभिरमयसे किं नु हरिणीम् ।

अथे जानासि त्वं न खलु मृगयोः पाशपतितं

ततो मोक्षोपायं तव कमपि संचिन्तय सखे ॥ ७१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ मेघः—

ते ते चातकपोतका वितृषिता दावामिमं वनं

संनिर्वापितमुष्णतापितमही निर्वापिता सर्वतः ।

निषेवन्तामेते वृषमहिषमेषाश्चहरिणा

गृहाणि क्षुद्राणां कतिपयतृणैरेव सुखिनः ।

गजानामास्थानं मदसलिलजम्बालितभुवां

तदेकं विन्ध्याद्रेर्विपिनमथवा भूपसदनम् ॥ ६६ ॥

लुलाये गोमायौ मृगपरिषदि श्वापदकुले

करिष्यन्कार्पण्यं किमिह महिमानं गमयसि ।

निमग्नः पङ्केऽसिन्ननुभव करीन्द्राधिप दशा-

मभद्रं भद्रं वा विधिलिखितमुन्मूलयतु कः ॥ ६७ ॥

(कयोरपि)

तापो नापगतस्तृषा न च कृशा धौता न धूली तनो-

र्न स्वच्छन्दमकारि कन्दकवलः का नाम केलीकथा ।

दूरोत्क्षिप्तकरेण हन्त करिणा स्पृष्टा न वा पद्मिनी

प्रारब्धो मधुपैरकारणमहो झाङ्कारकोलाहलः ॥ ६८ ॥

(लक्ष्मणसेनस्य)

एष एव मनस्तापः पङ्के मग्नस्य दन्तिनः ।

यतते यत्समुद्धर्तुं ज्ञातयो निभृतस्मिताः ॥ ६९ ॥

गजस्य पङ्कमग्नस्य त्रपाकरमिदं महत् ।

पारमुत्प्लुत्य यद्गच्छन्हरिणोऽपि हसत्यसौ ॥ ७० ॥

(भानुकरस्यैतौ)

अथ मृगः—

तृणं किं तर्णोषि प्रपिबसि किमर्णोऽपि मधुरं

रतक्रीडासक्तामभिरमयसे किं नु हरिणीम् ।

अथे जानासि त्वं न खलु मृगयोः पाशपतितं

ततो मोक्षोपायं तव कमपि संचिन्तय सखे ॥ ७१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ मेघः—

ते ते चातकपोतका वितृषिता दावाभिममं वनं

संनिर्वापितमुष्णतापितमही निर्वापिता सर्वतः ।

कासाराः परिपूरिताः पृथुपयोधाराभिरम्भोधर

त्वय्येवायमहो महोर्जितमहादानावदानक्रमः ॥ ७२ ॥

नीरं दूरं तदपि विरसं जंगमा नो लताद्या-

स्तस्मिन्दातर्यपि जलनिधौ को लभेताम्बुबिन्दुम् ।

दानाध्यक्षे त्वयि जलधर कापि कुत्रापि शैलाः

शालावन्तोऽमृतनिभजलैस्तर्पिताः सर्व एते ॥ ७३ ॥

अकूपाराद्वारि प्रचुरतरमादाय जलदः

स दानाध्यक्षोऽपि प्रकिरति जलं नाद्धतमिदम् ।

स मेघो धन्यो यत्परिकिरति मुक्ताफलतया

यदीयासौ कीर्तिर्नेटति नृपनारीकुचतटे ॥ ७४ ॥

नैवालवालवल्यं भरितं दुमाणां

नार्द्राकृतापि बत चातकपोतचञ्चुः ।

दावानलाकुलतरुः शमितो न शीघ्रं

भाराय वारिधर वारिपदं तवाभूत् ॥ ७५ ॥

(लक्ष्मणस्यैते)

आश्रयः क्रियतामेष तरुः सन्मार्गमाश्रितः ।

पाथोद सिच्यतां काले नोपेक्ष्यो दूरभावतः ॥ ७६ ॥

(रङ्गनाथस्य)

भैकैः कोटरशायिभिर्मृतमिव क्षमान्तर्गतं कच्छपैः

पाठीनैः पृथुपङ्कपीठलुठितैर्यस्मिन्मुहुर्मूर्च्छितम् ।

तस्मिन्शुष्कसरस्यकालजलदेनागत्य तच्चेष्टितं

यत्राकुम्भनिमग्नवन्यकरिणां यूथैः पयः पीयते ॥ ७७ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

शोषं गते सरसि शैवलमञ्जरीणा-

मन्तस्तिमिर्लुठति तापविशीर्णदेहः ।

अत्रान्तरे यदि न वारिद वारिपूरै-

राष्ठावयेस्तदनु किं मृतमण्डनेन ॥ ७८ ॥

कासाराः परिपूरिताः पृथुपयोधाराभिरम्भोधर

त्वय्येवायमहो महोर्जितमहादानावदानक्रमः ॥ ७२ ॥

नीरं दूरं तदपि विरसं जंगमा नो लताद्या-

स्तस्मिन्दातर्यपि जलनिधौ को लभेताम्बुबिन्दुम् ।

दानाध्यक्षे त्वयि जलधर कापि कुत्रापि शैलाः

शालावन्तोऽमृतनिभजलैस्तर्पिताः सर्व एते ॥ ७३ ॥

अकूपाराद्वारि प्रचुरतरमादाय जलदः

स दानाध्यक्षोऽपि प्रकिरति जलं नाद्भुतमिदम् ।

स मेघो धन्यो यत्परिकिरति मुक्ताफलतया

यदीयासौ कीर्तिर्नेदति नृपनारीकुचतटे ॥ ७४ ॥

नैवालवालवल्यं भरितं द्रुमाणां

नार्द्राकृतापि बत चातकपोतचञ्चुः ।

दावानलाकुलतरुः शमितो न शीघ्रं

भाराय वारिधर वारिपदं तवाभूत् ॥ ७५ ॥

(लक्ष्मणस्यैते)

आश्रयः क्रियतामेष तरुः सन्मार्गमाश्रितः ।

पाथोद सिच्यतां काले नोपेक्ष्यो दूरभावतः ॥ ७६ ॥

(रङ्गनाथस्य)

भैकैः कोटरशायिभिर्मृतमिव क्षमान्तर्गतं कच्छपैः

पाठीनैः पृथुपङ्कपीठलुठितैर्यस्मिन्मुहुर्मूर्च्छितम् ।

तस्मिन्शुष्कसरस्यकालजलदेनागत्य तच्चेष्टितं

यत्राकुम्भनिमग्नवन्यकरिणां यूथैः पयः पीयते ॥ ७७ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

शोषं गते सरसि शैवलमञ्जरीणा-

मन्तस्तिमिर्लुठति तापविशीर्णदेहः ।

अत्रान्तरे यदि न वारिद वारिपूरै-

राष्ठावयेस्तदनु किं मृतमण्डनेन ॥ ७८ ॥

प्रावृषेण्यस्य मालिन्यं दोषः कोऽभीष्टवर्षिणः ।
 शारदाभ्रस्य शुभ्रत्वं वद कुत्रोपयुज्यते ॥ ७९ ॥
 त्वमेव चातकाधार इति केषां न गोचरः ।
 धिगम्भोधर तस्यापि कार्पण्योक्तिं प्रतीक्षसे ॥ ८० ॥

(केषामप्येते)

अथ वायुः—

वृथा धूलीधाराः परिकिरसि वात्याः प्रथयसे
 नवावेगः कोऽयं पवन तव हा नन्वसमये ।
 रतान्तश्रान्ताभिः स्तिमितनयनान्ताभिरनिशं
 स्मृतो यत्कान्ताभिर्न सुलभतरः कापि च भवान् ॥ ८१ ॥
 स्वतो ददाति नो नीरं नीरदानोन्मुखं घनम् ।
 यत्तु वारयसे तन्न मातरिश्चन् तवोचितम् ॥ ८२ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ चन्द्रान्यापदेशः—

कलास्तास्ताः सम्यग्वहसि यदसि त्वं द्विजपति-
 र्युतिस्तादृग्नुला जनिरपि च रत्नाकरकुले ।
 बहु ब्रूमः किंवा पुरहरशिरोमण्डनमसि
 त्वदीयं तत्सर्वं शशधर कलङ्काद्विफलितम् ॥ ८३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

व्यज्यमानकलङ्कस्य वृद्धौ सैति कलानिधेः ।
 आशास्महे वयं पूर्वा सर्वश्लाघ्यां कृशां दशाम् ॥ ८४ ॥
 क्षीणः क्षीणः समीपत्वं पूर्णः पूर्णोऽतिदूरताम् ।
 उपैति मित्राद्यच्चन्द्रो युक्तं तन्मलिनात्मनः ॥ ८५ ॥

(कयोरपि)

नीराणि नक्रवडवानलदूषितानि
 तीराणि दुस्तरतरङ्गदुरुत्तराणि ।

प्रावृषेण्यस्य मालिन्यं दोषः कोऽभीष्टवर्षिणः ।

शारदाश्रस्य शुभ्रत्वं वद कुत्रोपयुज्यते ॥ ७९ ॥

त्वमेव चातकाधार इति केषां न गोचरः ।

धिगम्भोधर तस्यापि कार्पण्योक्तिं प्रतीक्षसे ॥ ८० ॥

(केषामप्येते)

अथ वायुः—

वृथा धूलीधाराः परिकिरसि वात्याः प्रथयसे

नवावेगः कोऽयं पवन तव हा नन्वसमये ।

रतान्तश्रान्ताभिः स्तिमितनयनान्ताभिरनिशं

स्मृतो यत्कान्ताभिर्न सुलभतरः कापि च भवान् ॥ ८१ ॥

स्वतो ददाति नो नीरं नीरदानोन्मुखं घनम् ।

यत्तु वारयसे तन्न मातरिश्वन् तवोचितम् ॥ ८२ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथ चन्द्रान्यापदेशः—

कलास्तास्ताः सम्यग्बहसि यदसि त्वं द्विजपति-

द्युतिस्तादृग्भूला जनिरपि च रत्नाकरकुले ।

बहु ब्रूमः किंवा पुरहरशिरोमण्डनमसि

त्वदीयं तत्सर्वं शशधर कलङ्काद्विफलितम् ॥ ८३ ॥

(लक्ष्मणस्य)

व्यज्यमानकलङ्कस्य वृद्धौ सैति कलानिधेः ।

आशासहे वयं पूर्वा सर्वश्लाघ्यां कृशां दशाम् ॥ ८४ ॥

क्षीणः क्षीणः समीपत्वं पूर्णः पूर्णोऽतिदूरताम् ।

उपैति मित्राद्यच्चन्द्रो युक्तं तन्मलिनात्मनः ॥ ८५ ॥

(कयोरपि)

नीराणि नक्रवडवानलदूषितानि

तीराणि दुस्तरतरङ्गदुरुत्तराणि ।

श्राव्यं किमस्य जलधेर्यदि नैष सूनु-

राशाप्रसाधनकरो रजनीकरः स्यात् ॥ ८६ ॥

(भानुकरस्य)

अथ रवेरन्यापदेशः—

खद्योतो द्योतते तावद्यावन्नोदयते शशी ।

उदिते तु सहस्रांशौ न खद्योतो न चन्द्रमाः ॥ ८७ ॥

दक्षिणाशाप्रवृत्तस्य प्रसारितकरस्य च ।

तेजस्तेजस्विनोऽर्कस्य क्षीयतेऽन्यस्य का कथा ॥ ८८ ॥

करं प्रसार्य रविणा दक्षिणाशावलम्बिना ।

न केवलमनेनात्मा दिवसोऽपि लघूकृतः ॥ ८९ ॥

(केषामपि)

यत्पादाः शिरसा न केन विधृताः पृथ्वीभृतां मध्यत-

स्तस्मिन् भास्वति राहुणा कवलिते लोकत्रयीचक्षुषि ।

खद्योतैः स्फुरितं तमोभिरुदितं ताराभिरुज्जृम्भितं

घूकैरुत्थितमाः किमत्र करवै किं किं न कैश्चेष्टितम् ॥ ९० ॥

(परिमलस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां चतुर्दशो व्यापारः ।

पञ्चदशो व्यापारः ।

अथ कौतुकार्त्तिकचित्समस्याख्यानम्—

सर्वस्य जन्तोर्भवति प्रमोदो विरोधिवर्गे परिभूयमाने ।

तिरोहिते त्वद्यशसा नरेन्द्र चन्द्रोदये नृत्यति चक्रवाकी ॥ १ ॥

(देवेश्वरस्य)

तवानने मानिनि मञ्जुलस्य यदञ्जनस्यैष लवो निमग्नः ।

इतीव लोकः प्रकरोति तर्कं पिपीलिका चुम्बति चन्द्रबिम्बम् ॥ २ ॥

(लक्ष्मणस्य)

श्राव्यं किमस्य जलधेर्यदि नैष सूनु-

राशाप्रसाधनकरो रजनीकरः स्यात् ॥ ८६ ॥

(भानुकरस्य)

अथ रवेरन्यापदेशः—

खद्योतो द्योतते तावद्यावन्नोदयते शशी ।

उदिते तु सहस्रांशौ न खद्योतो न चन्द्रमाः ॥ ८७ ॥

दक्षिणाशाप्रवृत्तस्य प्रसारितकरस्य च ।

तेजस्तेजस्विनोऽर्कस्य क्षीयतेऽन्यस्य का कथा ॥ ८८ ॥

करं प्रसार्य रविणा दक्षिणाशावलम्बिना ।

न केवलमनेनात्मा दिवसोऽपि लघूकृतः ॥ ८९ ॥

(केषामपि)

यत्पादाः शिरसा न केन विधृताः पृथ्वीभृतां मध्यत-

स्तस्मिन् भास्वति राहुणा कवलिते लोकत्रयीचक्षुषि ।

खद्योतैः स्फुरितं तमोभिरुदितं ताराभिरुज्जृम्भितं

धूकैरुत्थितमाः किमत्र करवै किं किं न कैश्चेष्टितम् ॥ ९० ॥

(परिमलस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टकृतौ पद्यरचनायां चतुर्दशो व्यापारः ।

पञ्चदशो व्यापारः ।

अथ कौतुकार्त्तिकचित्समस्याख्यानम्—

सर्वस्य जन्तोर्भवति प्रमोदो विरोधिवर्गे परिभूयमाने ।

तिरोहिते त्वद्यशसा नरेन्द्र चन्द्रोदये नृत्यति चक्रवाकी ॥ १ ॥

(देवेश्वरस्य)

तवानने मानिनि मञ्जुलस्य यदञ्जनस्यैष लवो निमग्नः ।

इतीव लोकः प्रकरोति तर्कं पिपीलिका चुम्बति चन्द्रबिम्बम् ॥ २ ॥

(लक्ष्मणस्य)

चमूभरन्यञ्चदुदञ्चदुर्वीतले प्रयाणे तव भूमिपाल ।

अभून्नृपाणां विगलन्नृपाणां कण्ठे कुठारः कमठे ठकारः ॥ ३ ॥

प्रविशति हरितामः पङ्कजातैर्निमग्न-

द्रुहिणचरणसेवां कर्तुमिद्वेशलेपैः (१?)

अगणितपरिमाणे भृङ्गभङ्गीं दधाने

भ्रमति कमलकोषे मत्तमातङ्गसङ्घः ॥ ४ ॥

तर्तुं पर्वतसंनिभेन कपिनालाबूं कृतां वक्षसि

क्षिप्रं वीक्ष्य निमज्जतीमथ नलस्पृष्टास्तरन्तीः शिलाः ।

लोको नृत्यपरं विभीषणजनं चेत्याह सेतूद्यमे

तुम्बी मज्जति संतरन्ति दृषदः प्रेतो दिवा नृत्यति ॥ ५ ॥

कर्णेन निर्जितोऽसीति चिन्तां चिन्तामणे त्यज ।

जिता देवद्रुमाः पञ्च न दुःखं पञ्चभिः सह ॥ ६ ॥

यदि प्राप्नोमि तां तन्वीं नो वर्षमपि कामये ।

को विहाय सुधाधारां दशमूलीपयः पिबेत् ॥ ७ ॥

स्निग्धालिवृद्धसौहार्दं सरसामोदमन्दिरम् ।

इयं गणयती भाति पुष्पमालेव कामिनी ॥ ८ ॥

युद्धक्रुद्धभटच्छिन्नकुम्भिकुम्भस्थलोद्गतैः ।

मुक्ताफलशतैः शङ्के दिवा तारकितं नभः ॥ ९ ॥

धन्योऽसौ पोत्रिणीपुत्रो यस्यासौ प्रलयापदि ।

सगोत्रस्य स्थितो दंष्ट्राकण्टकाग्रे महोदधिः ॥ १० ॥

सुमेरुशिखरप्रान्तस्थितदिव्यवधूमुखैः ।

परितः स्फुरितैः शङ्के शतचन्द्रं नभस्तलम् ॥ ११ ॥

दामोदरकराघातैर्विह्वलीकृतचेतसा ।

दृष्टं चाणूरमल्लेन शतचन्द्रं नभस्तलम् ॥ १२ ॥

विधे पिधेहि शीतांशुं यावदायाति मे पतिः ।

आयाते दयिते कुर्याः शतचन्द्रं नभस्तलम् ॥ १३ ॥

चमूभरन्यञ्चदुदञ्चदुर्वीतले प्रयाणे तव भूमिपाल ।

अभ्रनृपाणां विगलन्नपाणां कण्ठे कुठारः कमठे ठकारः ॥ ३ ॥

प्रविशति हरिताभः पङ्कजातैर्निमग्न-

द्रुहिणचरणसेवां कर्तुमिद्रेशलेपैः (।?)

अगणितपरिमाणे भृङ्गभङ्गीं दधाने

भ्रमति कमलकोषे मत्तमातङ्गसङ्घः ॥ ४ ॥

तर्तु पर्वतसंनिभेन कपिनालाबुं कृतां वक्षसि

क्षिप्रं वीक्ष्य निमज्जतीमथ नलस्पृष्टास्तरन्तीः शिलाः ।

लोको नृत्यपरं विभीषणजनं चेत्याह सेतूद्यमे

तुम्बी मज्जति संतरन्ति दृषदः प्रेतो दिवा नृत्यति ॥ ५ ॥

कर्णेन निर्जितोऽसीति चिन्तां चिन्तामणे त्यज ।

जिता देवदुमाः पञ्च न दुःखं पञ्चभिः सह ॥ ६ ॥

यदि प्राप्नोमि तां तन्वीं नो वर्षमपि कामये ।

को विहाय सुधाधारां दशमूलीपयः पिबेत् ॥ ७ ॥

स्निग्धालिवृद्धसौहार्दं सरसामोदमन्दिरम् ।

इयं गणयती भाति पुष्पमालेव कामिनी ॥ ८ ॥

युद्धकुद्धभटच्छिन्नकुम्भिकुम्भस्थलोद्गतैः ।

मुक्ताफलशतैः शङ्के दिवा तारकितं नभः ॥ ९ ॥

धन्योऽसौ पोत्रिणीपुत्रो यस्यासौ प्रलयापदि ।

सगोत्रस्य स्थितो दंष्ट्राकण्टकाग्रे महोदधिः ॥ १० ॥

सुमेरुशिखरप्रान्तस्थितदिव्यवधूमुखैः ।

परितः स्फुरितैः शङ्के शतचन्द्रं नभस्तलम् ॥ ११ ॥

दामोदरकराघातैर्विह्वलीकृतचेतसा ।

दृष्टं चाणूरमलेन शतचन्द्रं नभस्तलम् ॥ १२ ॥

विधे पिधेहि शीतांशुं यावदायाति मे पतिः ।

आयाते दयिते कुर्याः शतचन्द्रं नभस्तलम् ॥ १३ ॥

चित्राय त्वयि चिन्तिते स्मृतिभुवा सज्जीकृतं खं धनु-
 र्वर्ति धर्तुमुपागतेऽङ्गुलियुगे बाणा गुणे योजिताः ।
 प्रारब्धे तव चित्रकर्मणि पुनस्तद्बाणभिन्ना सती
 भित्तिं द्रागवलम्ब्य सिंहलपते सा तत्र चित्रायते ॥ १४ ॥
 त्वत्कीर्तिमौक्तिकफलानि गुणैस्त्वदीयैः
 संदर्भितुं विबुधवामदृशः प्रवृत्ताः ।
 नान्तो गुणेषु न च कीर्तिषु रन्ध्रलेशो
 हारो न जात इति ताश्च मिथो हसन्ति ॥ १५ ॥
 (केषांचित्)

हीनहत्या दधात्येव लाघवं महतामपि ।
 इति मत्वा द्विपद्वेषी मृगात्सिंहः पलायते ॥ १६ ॥
 (कस्यचित्)

मन्दानिलाहतविलोलशिखप्रदीप-
 कक्षान्तरे विनिहितं सभयं तरुण्याः ।
 तस्याः समस्तकुचकुम्भयुगं निरीक्ष्य
 बाहुं विनेव विदधाति शिरःप्रकम्पम् ॥ १७ ॥
 (भानुकरस्य)

यत्राखण्डलदन्तिदन्तमुसलान्याखण्डितान्याहवे
 धारा यत्र पिनाकपाणिपरशोराकुण्ठतामागताः ।
 तन्मे तावदुरो नृसिंहकरजैर्व्यादीर्यते सांप्रतं
 द्वैवे दुर्बलतां गते तृणमपि प्रायेण वज्रायते ॥ १८ ॥
 (कस्यापि)

अत्रैव प्रश्नोत्तरेण यथा—

कस्तूरी जायते कस्मात् को हन्ति करिणां कुलम् ।
 किं कुर्यात्कातरो युद्धे मृगात्सिंहः पलायते (नम्) ॥ १९ ॥

चित्राय त्वयि चिन्तिते स्मृतिभुवा सज्जीकृतं स्वं धनु-
 र्वर्तिं धर्तुमुपागतेऽङ्गुलियुगे बाणा गुणे योजिताः ।
 प्रारब्धे तव चित्रकर्मणि पुनस्तद्बाणभिन्ना सती
 भित्तिं द्रागवलम्ब्य सिंहलपते सा तत्र चित्रायते ॥ १४ ॥
 त्वत्कीर्तिमौक्तिकफलानि गुणैस्त्वदीयैः
 संदर्भितुं विबुधवामदृशः प्रवृत्ताः ।
 नान्तो गुणेषु न च कीर्तिषु रन्ध्रलेशो
 हारो न जात इति ताश्च मिथो हसन्ति ॥ १५ ॥
 (केषांचित्)

हीनहत्या दधात्येव लाघवं महतामपि ।
 इति मत्वा द्विपद्वेषी मृगात्सिंहः पलायते ॥ १६ ॥
 (कस्यचित्)

मन्दानिलाहतविलोलशिखप्रदीप-
 कक्षान्तरे विनिहितं सभयं तरुण्याः ।
 तस्याः समस्तकुचकुम्भयुगं निरीक्ष्य
 बाहुं विनेव विदधाति शिरःप्रकम्पम् ॥ १७ ॥
 (भानुकरस्य)

यत्राखण्डलदन्तिदन्तमुसलान्याखण्डितान्याहवे
 धारा यत्र पिनाकपाणिपरशोराकुण्ठतामागताः ।
 तन्मे तावदुरो नृसिंहकरजैर्व्यादीर्यते सांप्रतं
 द्वेवे दुर्बलतां गते तृणमपि प्रायेण वज्रायते ॥ १८ ॥
 (कस्यापि)

अत्रैव प्रश्नोत्तरेण यथा—

कस्तूरी जायते कस्मात् को हन्ति करिणां कुलम् ।

किं कुर्यात्कातरो युद्धे मृगात्सिंहः पलायते (नम्) ॥ १९ ॥

अत्रैव पदभङ्गेन यथा—

मृगात् मृगमत्तीति मृगात् इति सिंहविशेषणम् । पलाय मांसाय ते तवेति ।

अयं मृगः समायाति मृगारसिंहः पलायते ।

ततो वेगात्पलायस्व त्वदि(मि)तस्त्वरितैः पदैः ॥ २० ॥

अथाद्य त्रिचरणसमस्यायाः पूरणमन्त्यचरणेन यथा—

त्रियामा शतयामा स्याच्छतचन्द्रं नभस्तलम् ।

शतेषुरेव पञ्चेषुर्भवेद्यूनां वियोगिनाम् ॥ २१ ॥

मद्भोः शृङ्गं सप्ततालप्रमाणं कल्याणाद्रिः सर्षपस्यैकदेशः ।

बिन्दुः सिन्धुः सिन्धुरप्येकबिन्दुर्लब्धो लुब्धैः साधुनीचोपकारे ॥ २२ ॥

अथ द्वितीयपादतुरीयपादसमस्यायाः पूरणं यथा—

अहल्याकेलिकालेऽभूत्कंदर्पाणां शतद्वयम् ।

तत्पञ्चबाणभिन्नाक्षः सहस्राक्षोऽन्धतां गतः ॥ २३ ॥

अथाद्य द्वितीयवैदिकपादसमस्यायाः पूरणं यथा—

कामं कामदुघं धुङ्क्ष्व मित्राय वरुणाय च ।

वयं धीरेण दानेन सर्वान् कामानशीमहि ॥ २४ ॥

अथाद्य तृतीयवैदिकपादसमस्यायाः पूरणं यथा—

अणोरणीयान्महतो महीयान्योगे वियोमे दिवसोऽङ्गनायाः ।

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं स्पृष्ट्वा सखे सत्यमिदं ब्रवीमि ॥ २५ ॥

अणोरणीयान्महतो महीयान्मध्यो नितम्बश्च मम प्रियायाः ।

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं किंचाङ्गरागारुणितं प्रियायाः ॥ २६ ॥

(देवेश्वरस्यैते)

अथ बहिर्लापिकाः—

का मेघादुपयाति कृष्णदयिता का वा सभा कीदृशी

कां रक्षत्यरिहा शरद्विकचयेत्कं धैर्यहन्त्री च का ।

कं धत्ते गणनायकः करतले का चञ्चला कथ्यता-

मारोहादवरोहतश्च निपुणैरेकं द्वयोरुत्तरम् ॥ २७ ॥

अत्रैव पदभङ्गेन यथा—

मृगात् मृगमत्तीति मृगात् इति सिंहविशेषणम् । पलाय मांसाय ते तवेति ।

अयं मृगः समायाति मृगार्त्तिसहः पलायते ।

ततो वेगात्पलायस्व त्वदि(मि)तस्त्वरितैः पदैः ॥ २० ॥

अथाद्य त्रिचरणसमस्यायाः पूरणमन्त्यचरणेन यथा—

त्रियामा शतयामा स्याच्छतचन्द्रं नभस्तलम् ।

शतेषुरेव पञ्चेषुर्भवेद्यूनां वियोगिनाम् ॥ २१ ॥

मद्भोः शृङ्गं सप्ततालप्रमाणं कल्याणाद्रिः सर्षपस्यैकदेशः ।

बिन्दुः सिन्धुः सिन्धुरप्येकबिन्दुर्लब्धो लुब्धैः साधुनीचोपकारे ॥ २२ ॥

अथ द्वितीयपादतुरीयपादसमस्यायाः पूरणं यथा—

अहल्याकेलिकालेऽभूत्कंदर्पाणां शतद्वयम् ।

तत्पञ्चबाणभिन्नाक्षः सहस्राक्षोऽन्धतां गतः ॥ २३ ॥

अथाद्य द्वितीयवैदिकपादसमस्यायाः पूरणं यथा—

कामं कामदुषं धुङ्क्ष्व मित्राय वरुणाय च ।

वयं धीरेण दानेन सर्वान् कामानशीमहि ॥ २४ ॥

अथाद्य तृतीयवैदिकपादसमस्यायाः पूरणं यथा—

अणोरणीयान्महतो महीयान्योगे वियोगे दिवसोऽङ्गनायाः ।

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं स्पृष्ट्वा सखे सत्यमिदं ब्रवीमि ॥ २५ ॥

अणोरणीयान्महतो महीयान्मध्यो नितम्बश्च मम प्रियायाः ।

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं किंचाङ्गरागारुणितं प्रियायाः ॥ २६ ॥

(देवेश्वरस्यैते)

अथ बहिर्यापिकाः—

का मेघादुपयाति कृष्णदयिता का वा सभा कीदृशी

कां रक्षत्यरिहा शरद्विकचयेत्कं धैर्यहन्त्री च का ।

कं धत्ते गणनायकः करतले का चञ्चला कथ्यता-

मारोहादवरोहतश्च निपुणैरेकं द्वयोरुत्तरम् ॥ २७ ॥

अत्र धारा, राधा, वन्द्या, द्यावम्, काशम्, शङ्का, पाशम्, शम्पा ॥
इत्यारोहादवरोहणेन व्याख्यानम् ।

अथ चित्रकाव्यम्—

लोकानां मानपात्रं मनुजजनरतिस्त्वंसमूढ्याद्विरक्षो
राज्ञामासत्त्वदक्षः कृतसमयरुचिर्मण्डितो वीरवर्गैः ।

कायत्वञ्चीनकेतुः करमलितयवां(?)कोषमानैर्विहीनः

श्रीमद्वीराधिराज त्वमिव तव रिपुस्तत्र मं दं प्रतीमः ॥ २८ ॥

अत्र शत्रुपक्षे मकारस्थाने दकारः पठनीयः ।

वादानाशानुयुक्तो नगरकृतमतिर्यौवनाक्रान्तदेहः

संग्रामप्राप्तधैर्यो न विदलितरुचा राजलक्ष्म्यातिहीनः ।

नित्यं दारासभस्थः प्रखरतनुनिभो यः सुभिक्षानुवर्ती

श्रीमद्वीराधिराज त्वमिव तव रिपुस्तत्र मुक्तादिवर्णः ॥ २९ ॥

अत्र पद्ये शत्रुपक्षे आद्याक्षरत्यागः ।

(एतौ लक्ष्मणस्य)

रत्यादिचित्रकाव्यं ग्रन्थगौरवभयादुपेक्ष्यते ।

अथ सज्जनः—

अपेक्षन्ते न च स्नेहं न पात्रं न दशान्तरम् ।

सदा लोकहिते रक्ता रत्नदीपा इवोत्तमाः ॥ ३० ॥

अथोदारः—

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् ।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥ ३१ ॥

अर्थिनां कृपणा दृष्टिस्त्वन्मुखे पतिता सकृत् ।

तदवस्था पुनर्देव नान्यस्य मुखमीक्षते ॥ ३२ ॥ (दण्डिनः)

अथ प्रशंसा—

स्वयं स्वगुणविस्तारादूर्णनाभः पतत्यधः ।

तमेव संहरन्भूयः पदमुच्चैर्विगाहते ॥ ३२ ॥

अत्र धारा, राधा, वन्द्या, द्यावम्, काशम्, शङ्का, पाशम्, शम्पा ॥
इत्यारोहादवरोहणेन व्याख्यानम् ।

अथ चित्रकाव्यम्—

लोकानां मानपात्रं मनुजजनरतिस्त्वंसमूढ्याङ्घ्रिक्षो
राज्ञामासत्त्वदक्षः कृतसमयरुचिर्मण्डितो वीरवर्गैः ।

कायत्वञ्चीनकेतुः करमलितयवां(?)कोषमानैर्विहीनः

श्रीमद्वीराधिराज त्वमिव तव रिपुस्तत्र मं दं प्रतीमः ॥ २८ ॥

अत्र शत्रुपक्षे मकारस्थाने दकारः पठनीयः ।

वादानाशानुयुक्तो नगरकृतमतिर्यौवनाक्रान्तदेहः

संग्रामप्राप्तधैर्यो न विदलितरुचा राजलक्ष्म्यातिहीनः ।

नित्यं दारासभस्थः प्रखरतनुनिभो यः सुभिक्षानुवर्ती

श्रीमद्वीराधिराज त्वमिव तव रिपुस्तत्र मुक्तादिवर्णः ॥ २९ ॥

अत्र पद्ये शत्रुपक्षे आद्याक्षरत्यागः ।

(एतौ लक्ष्मणस्य)

रत्यादिचित्रकाव्यं ग्रन्थगौरवभयादुपेक्ष्यते ।

अथ सज्जनः—

अपेक्षन्ते न च स्नेहं न पात्रं न दशान्तरम् ।

सदा लोकहिते रक्ता रत्नदीपा इवोत्तमाः ॥ ३० ॥

अथोदारः—

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् ।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥ ३१ ॥

अर्थिनां कृपणा दृष्टिस्त्वन्मुखे पतिता सकृत् ।

तदवस्था पुनर्देव नान्यस्य मुखमीक्षते ॥ ३२ ॥ (दण्डिनः)

अथ प्रशंसा—

स्वयं स्वगुणविस्तारादूर्णनाभः पतत्यधः ।

तमेव संहरन्भूयः पदमुच्चैर्विगाहते ॥ ३२ ॥

गुणप्रशंसा—

गुणैरुत्तुङ्गतां याति नोच्चैरासनसंस्थितः ।

प्रासादशिखरारूढः काकः किं गरुडायते ॥ ३४ ॥

अथ संसर्गप्रशंसा—

किं वापरेण बहुना परिजल्पितेन

संसर्ग एव महतां महते फलाय ।

अम्भोनिधेस्तटरुहास्तरवोऽपि येन

वेलाजलोच्छलितरत्नकृतालवालाः ॥ ३५ ॥

न स्थातव्यं न गन्तव्यं क्षणमप्यधमैः सह ।

पयोऽपि शौण्डिकीहस्ते मदिरां मन्यते जनः ॥ ३६ ॥

वीणावंशाश्रया तुम्बी चुम्बत्युच्चैः कुचौ स्त्रियाः ।

पिबत्यनार्यसंयोगाद्रक्तं नक्तंचरी यथा ॥ ३७ ॥

(केषामपि)

संतप्तायसि संस्थितस्य पयसो नामापि न श्रूयते

मुक्ताकारतया तदेव नलिनीपत्रस्थितं राजते ।

स्वात्यां सागरशुक्तिसंपुटगतं तज्जायते मौक्तिकं

प्रायेणाधममध्यमोत्तमगुणः संसर्गतो जायते ॥ ३८ ॥

(भर्तृहरेः)

वारिहारिघटीदोषात्ताड्यते तत्र झल्लरी ।

सच्छिद्रपुरुषस्याग्रे न स्थातव्यं कदाचन ॥ ३९ ॥

अथ धनस्तुतिः—

जातिर्यातु रसातलं गुणगणस्तस्याप्यधो गच्छता—

च्छीलं शैलतटात्पतत्वभिजनः संदह्यतां वह्निना ।

शौर्ये वैरिणि वज्रमाशु निपतत्वर्थोऽस्तु नः केवलं

येनैकेन विना गुणास्तृणलवप्रायाः समस्ता इमे ॥ ४० ॥

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः ।

गुणप्रशंसा—

गुणैरुत्तुङ्गतां याति नोच्चैरासनसंस्थितः ।

प्रासादशिखरारूढः काकः किं गरुडायते ॥ ३४ ॥

अथ संसर्गप्रशंसा—

किं वापरेण बहुना परिजल्पितेन

संसर्ग एव महतां महते फलाय ।

अम्भोनिधेस्तटरुहास्तरवोऽपि येन

वेलाजलोच्छलितरत्नकृतालवालाः ॥ ३५ ॥

न स्थातव्यं न गन्तव्यं क्षणमप्यधमैः सह ।

पयोऽपि शौण्डिकीहस्ते मदिरां मन्यते जनः ॥ ३६ ॥

वीणावंशाश्रया तुम्बी चुम्बत्युच्चैः कुचौ स्त्रियाः ।

पिबत्यनार्यसंयोगाद्रक्तं नक्तंचरी यथा ॥ ३७ ॥

(केषामपि)

संतसायसि संस्थितस्य पयसो नामापि न श्रूयते

मुक्ताकारतया तदेव नलिनीपत्रस्थितं राजते ।

स्वात्यां सागरशुक्तिसंपुटगतं तज्जायते मौक्तिकं

प्रायेणाधममध्यमोत्तमगुणः संसर्गतो जायते ॥ ३८ ॥

(भर्तृहरेः)

वारिहारिघटीदोषात्ताड्यते तत्र झल्लरी ।

सच्छिद्रपुरुषस्याग्रे न स्थातव्यं कदाचन ॥ ३९ ॥

अथ धनस्तुतिः—

जातिर्यातु रसातलं गुणगणस्तस्याप्यधो गच्छता—

च्छीलं शैलतटात्पतत्वभिजनः संदह्यतां वह्निना ।

शौर्यै वैरिणि वज्रमाशु निपतत्वर्थोऽस्तु नः केवलं

येनैकेन विना गुणास्तृणलवप्रायाः समस्ता इमे ॥ ४० ॥

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः ।

स एव वक्ता स च दर्शनीयः सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ॥ ४१ ॥
(एतौ भर्तृहरेः)

धनमर्जय काकुत्स्थ धनमूलमिदं जगत् ।
अन्तरं नैव पश्यामि निर्धनस्य मृतस्य च ॥ ४२ ॥
(वासिष्ठात्)

भक्ते द्वेषो जडे प्रीतिररुचिर्गुरुलङ्घनम् ।
मुखे च कटुता नित्यं धनिनां ज्वरिणामिव ॥ ४३ ॥
आलिङ्गिताः परैर्यान्ति प्रस्वलन्ति समे पथि ।
अव्यक्तानि च भाषन्ते धनिनो मद्यपा इव ॥ ४४ ॥
लक्ष्मीर्यादोनिधेर्यादो नादो वादोचितं वचः ।
विभ्यती धीवरेभ्यो या जडेष्वेव निमज्जति ॥ ४५ ॥

लक्ष्मि क्षमस्व वचनीयमिदं दुरुक्त-
मन्धीभवन्ति पुरुषास्तव सेवनेन ।
नो चेत्कथं कमलपत्रविशालनेत्रो
नारायणः स्वपिति पन्नगभोगतल्पे ॥ ४६ ॥

अथ कृपणः —

यदर्ज्यते परिक्लेशैरर्जितं यन्न भुज्यते ।
विभज्यते तदन्तेऽन्यैः कस्यचिन्मास्तु तद्धनम् ॥ ४७ ॥
(केषामपि)

यत्करोत्यरतिक्लेशं तृष्णां मोहं प्रजागरम् ।
न तद्धनं कदर्याणां हृदये व्याधिरेव सः ॥ ४८ ॥
मृत्युः शरीरगोष्ठारं धनरक्षं वसुंधरा ।
दुश्चारिणी च हसति स्वपतिं पुत्रवत्सलम् ॥ ४९ ॥
सति द्राक्षाफले क्षीरे मृदामास्वादनं मुदे ।
अहो मातुरियं रीतिः कृपणे गर्भवर्तिनि ॥ ५० ॥

(भानुकरस्य)

स एव वक्ता स च दर्शनीयः सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ॥ ४१ ॥
(एतौ भर्तृहरेः)

धनमर्जय काकुत्स्थ धनमूलमिदं जगत् ।
अन्तरं नैव पश्यामि निर्धनस्य मृतस्य च ॥ ४२ ॥
(वासिष्ठात्)

भक्ते द्वेषो जडे प्रीतिररुचिर्गुरुलङ्घनम् ।
मुखे च कटुता नित्यं धनिनां ज्वरिणामिव ॥ ४३ ॥
आलिङ्गिताः परैर्यान्ति प्रस्वलन्ति समे पथि ।
अव्यक्तानि च भाषन्ते धनिनो मद्यपा इव ॥ ४४ ॥
लक्ष्मीर्यादोनिधेर्यादो नादो वादोचितं वचः ।
विभ्यती धीवरेभ्यो या जडेष्वेव निमज्जति ॥ ४५ ॥

लक्ष्मि क्षमस्व वचनीयमिदं दुरुक्त-
मन्धीभवन्ति पुरुषास्तव सेवनेन ।
नो चेत्कथं कमलपत्रविशालनेत्रो
नारायणः स्वपिति पन्नगभोगतल्पे ॥ ४६ ॥

अथ कृपणः —

यदर्ज्यते परिक्लेशैरर्जितं यन्न भुज्यते ।
विभज्यते तदन्तेऽन्यैः कस्यचिन्मास्तु तद्धनम् ॥ ४७ ॥
(केषामपि)

यत्करोत्यरतिक्लेशं तृष्णां मोहं प्रजागरम् ।
न तद्धनं कदर्याणां हृदये व्याधिरेव सः ॥ ४८ ॥
मृत्युः शरीरगोष्ठारं धनरक्षं वसुंधरा ।
दुश्चारिणी च हसति स्वपतिं पुत्रवत्सलम् ॥ ४९ ॥
सति द्राक्षाफले क्षीरे मृदामास्वादनं मुदे ।
अहो मातुरियं रीतिः कृपणे गर्भवर्तिनि ॥ ५० ॥

(भानुकरस्य)

स प्राप्तानपि भोगान्न भोक्तुमीष्टे मितंपचः ।

रसालकाले बलिमुञ्चस्वरोगाकुलो यथा ॥ ५१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथार्थी—

जनस्थाने भ्रान्तं कनकमृगतृष्णाकुलतया

वचो वैदेहीति प्रतिपदमुदश्रु प्रलपितम् ।

कृता लंकाभर्तुवदनपरिपाटीषु घटना

मयाप्तं रामत्वं कुशलवसुता न त्वधिगता ॥ ५२ ॥

(कस्यापि)

अथ दरिद्रः—

परीक्ष्य सत्कुलं विद्यां शीलं शौर्यं सुरूपताम् ।

विधिर्ददाति निपुणः कन्यामिव दरिद्रताम् ॥ ५३ ॥

हे दारिद्र्य नमस्तुभ्यं सिद्धोऽहं त्वत्प्रसादतः ।

पश्याम्यहं जगत्सर्वं न मां पश्यति कश्चन ॥ ५४ ॥

(कयोरपि)

कन्थाखण्डमिदं प्रयच्छ यदि वा स्वाङ्गे गृहाणार्भकं

रिक्तं भूतलमत्र नाथ भवतः पृष्ठे पलाशोच्चयः ।

दम्पत्योर्निशि जल्पतोरिति वचः श्रुत्वैव चौरस्तदा

लब्धं कर्पटमन्यतस्तदुपरि क्षिप्त्वा रुदन्निर्गतः ॥ ५५ ॥

(भोजप्रबन्धात्)

उत्थाय हृदि लीयन्ते निर्धनानां मनोरथाः ।

बालवैधव्यदग्धानां कुलस्त्रीणां कुचा इव ॥ ५६ ॥

(कस्यापि)

अथ खलः—

वक्रत्वं ननु कुन्तलादिव मुखे तैक्ष्ण्यं कटाक्षादिव

कूरत्वं कुचमण्डलादिव सुनैर्घृण्यं खञ्जितादिव ।

स प्राप्तानपि भोगान्न भोक्तुमीष्टे मितंपचः ।
रसालकाले बलिमुञ्चस्व रोगाकुलो यथा ॥ ५१ ॥

(लक्ष्मणस्य)

अथार्थी—

जनस्थाने भ्रान्तं कनकमृगतृष्णाकुलतया
वचो वैदेहीति प्रतिपदमुदश्रु प्रलपितम् ।
कृता लंकाभर्तुवदनपरिपाटीषु घटना
मयाप्तं रामत्वं कुशलवसुता न त्वधिगता ॥ ५२ ॥

(कस्यापि)

अथ दरिद्रः—

परीक्ष्य सत्कुलं विद्यां शीलं शौर्यं सुरूपताम् ।
विधिर्ददाति निपुणः कन्यामिव दरिद्रताम् ॥ ५३ ॥
हे दारिद्र्य नमस्तुभ्यं सिद्धोऽहं त्वत्प्रसादतः ।
पश्याम्यहं जगत्सर्वं न मां पश्यति कश्चन ॥ ५४ ॥

(कयोरपि)

कन्थाखण्डमिदं प्रयच्छ यदि वा स्वाङ्गे गृहाणार्भकं
रित्तं भूतलमत्र नाथ भवतः पृष्ठे पलाशोच्चयः ।
दम्पत्योर्निशि जल्पतोरिति वचः श्रुत्वैव चौरस्तदा
लब्धं कर्पटमन्यतस्तदुपरि क्षिप्त्वा रुदन्निर्गतः ॥ ५५ ॥
(भोजप्रबन्धात्)

उत्थाय हृदि लीयन्ते निर्धनानां मनोरथाः ।
बालवैधव्यदग्धानां कुलस्त्रीणां कुचा इव ॥ ५६ ॥

(कस्यापि)

अथ खलः—

वक्रत्वं ननु कुन्तलादिव मुखे तैक्ष्ण्यं कटाक्षादिव
कूरत्वं कुचमण्डलादिव सुनैर्घृण्यं स्वचित्तादिव ।

मालिन्यं नयनाञ्जनादिव किलाधैर्यं स्वभावादिव
स्वैरन्यैश्च सुशिक्षितोऽसि खल किं जातोऽस्यतोऽरुतुदः ॥ ५७ ॥
(लक्ष्मणस्य)

हस्त इव भूतिमलिनो लङ्घयति यथा यथा खलः सुजनम् ।
दर्पणमिव तं कुरुते तथा तथा निर्मलच्छायम् ॥ ५८ ॥
(सुबन्धोः)

खलानां कण्टकानां च द्विविधैव प्रतिक्रिया ।
उपानन्मुखभङ्गो वा दूरतो वा विसर्जनम् ॥ ५९ ॥
नौश्च दुर्जनजिह्वा च प्रतिकूलप्रसारिणी ।
परप्रतारणायैव दारुणा केन निर्मिता ॥ ६० ॥
(कस्यापि)

अथ कुपुत्रः—

पित्रोर्नैव वचः शृणोति दिवसत्यागे व्रजत्यालयं
यान्तीभिर्युवतीभिरध्वनि मुहुः कौतूहलं विन्दति ।
बन्धूनामुपदेशवाचि वदति क्रोधैकतानं वचः
साधून्विन्दति दुर्जनं च मनुते मित्रं कुपुत्रो जनः ॥ ६१ ॥

अथ कापुरुषः—

नारीणां वचनेन कर्म कुरुते दीनं वचो भाषते
नालस्यं विजहाति तिग्मकिरणे प्रौढे समुत्तिष्ठति ।
किञ्चित्कापि न साहसं वितनुते गेहे चिरं दूयते
नो वा विन्दति पौरुषं कुपुरुषः कोऽप्येष निर्णीयताम् ॥ ६२ ॥
कापुरुषः कुकुरश्च भोजनैकपरायणः ।
लालितः पार्श्वमायाति वारितो नैव गच्छति ॥ ६३ ॥
प्रागल्भ्यं प्रथयन्त्यशो विशदयन्धार्ष्टीं मुखे योजय-
न्भूपानां कलयन्कथां विरचयन्हस्ताङ्गुलीः स्फोटयन् ।
दानं पलवयन्गुणं द्विगुणयन्नेत्राञ्चलं घूर्णयन्-
लम्पाकः सविधं समेत्य सुदृशां किं नाम नो भाषते ॥ ६४ ॥

मालिन्यं नयनाञ्जनादिव किलाधैर्यं स्वभावादिव
स्वैरन्यैश्च सुशिक्षितोऽसि खल किं जातोऽस्यतोऽरुतुदः ॥ ५७ ॥

(लक्ष्मणस्य)

हस्त इव भूतिमलिनो लङ्घयति यथा यथा खलः सुजनम् ।
दर्पणमिव तं कुरुते तथा तथा निर्मलच्छायम् ॥ ५८ ॥

(सुबन्धोः)

खलानां कण्टकानां च द्विविधैव प्रतिक्रिया ।

उपानन्मुखभङ्गो वा दूरतो वा विसर्जनम् ॥ ५९ ॥

नौश्च दुर्जनजिह्वा च प्रतिकूलप्रसारिणी ।

परप्रतारणायैव दारुणा केन निर्मिता ॥ ६० ॥

(कस्यापि)

अथ कुपुत्रः—

पित्रोर्नैव वचः शृणोति दिवसत्यागे व्रजत्यालयं

यान्तीभिर्युवतीभिरध्वनि मुहुः कौतूहलं विन्दति ।

बन्धूनामुपदेशवाचि वदति क्रोधैकतानं वचः

साधून्विन्दति दुर्जनं च मनुते मित्रं कुपुत्रो जनः ॥ ६१ ॥

अथ कापुरुषः—

नारीणां वचनेन कर्म कुरुते दीनं वचो भाषते

नालस्यं विजहाति तिग्मकिरणे प्रौढे समुत्तिष्ठति ।

किञ्चित्कापि न साहसं वितनुते गेहे चिरं दूयते

नो वा विन्दति पौरुषं कुपुरुषः कोऽप्येष निर्णयिताम् ॥ ६२ ॥

कापुरुषः कुक्कुरश्च भोजनैकपरायणः ।

लालितः पार्श्वमायाति वारितो नैव गच्छति ॥ ६३ ॥

प्रागल्भ्यं प्रथयन्त्यशो विशदयन्धाटीं मुखे योजय-

न्भूपानां कलयन्कथां विरचयन्हस्ताङ्गुलीः स्फोटयन् ।

दानं पल्लवयन्गुणं द्विगुणयन्नेत्राञ्चलं घूर्णयन्-

लम्पाकः सविधं समेत्य सुदृशां किं नाम नो भाषते ॥ ६४ ॥

अथ कर्कशः—

समेत्य बहिरङ्गणात्कलहवाक्यमाबिश्रती

रजः किरति हुंकरोत्यवनमद्विणास्कन्दति ।

रदैः कटकटध्वनिं वहति मोटयत्यङ्गुली-

र्वपुर्दशति फूत्कृतिं कलयति क्रुधा धावति ॥ ६५ ॥

(भानुकरस्यैते)

व्यासादीन्कविपुङ्गवाननुचितैर्वाक्यैः सलीलं हस-

नुच्चैर्जल्प निमील्य लोचनयुगं श्लोकान्सगर्वं पठ ।

काव्यं धिक्कुरु यत्परैर्विरचितं स्पर्धस्व सार्धं बुधै-

र्यद्यभ्यर्थयसे श्रुतेन रहितः पाण्डित्यमाप्तुं बलात् ॥ ६६ ॥

(कस्यापि)

अथ पण्डितः—

अधिगतपरमार्थान्पण्डितान्मावमंस्था-

स्तृणामिव लघु लक्ष्मीर्नैव तान्संरुणद्धि ।

मदमिलितमिलिन्दश्यामगण्डस्थलानां

न भवति बिसतन्तुर्वारणं वारणानाम् ॥ ६७ ॥

इह तुरगशतैः प्रयान्तु मूढा धनरहितास्तु बुधाः प्रयान्तु पञ्चाम् ।

गिरिशिखरगतापि काकपङ्क्तिः पुलिनगतैर्न समत्वमेति हंसैः ॥ ६८ ॥

(भर्तृहरेरेतौ)

अथ मुनिः—

वल्मीकाग्रनिमग्नमूर्तिरुरगत्वग्रहसूत्रान्तरः

कण्ठे जीर्णलतावितानवलयेनात्यर्थसंपीडितः ।

अंशव्यापिशकुन्तनीडनिचयं बिभ्रज्जटामण्डलं

यत्र स्थाणुरिवाचलो मुनिरसावभ्यर्कबिम्बं स्थितः ॥ ६९ ॥

(कालिदासस्य)

अथ तपोवनम्—

तपोवने केसरिणीकरिण्योरिहाद्भुतं शावकयोर्व्यलोकि ।

अथ कर्कशः—

समेत्य बहिरङ्गणात्कलहवाक्यमाविश्रती

रजः किरति हुंकरोत्यवनमद्विणास्कन्दति ।

रदैः कटकटध्वनिं वहति मोटयत्यङ्गुली-

र्वपुर्दशति फूत्कृतिं कलयति क्रुधा धावति ॥ ६५ ॥

(भानुकरस्यैते)

व्यासादीन्कविपुङ्गवाननुचितैर्वाक्यैः सलीलं हस-

नुचैर्जल्प निमील्य लोचनयुगं श्लोकान्सगर्वं पठ ।

काव्यं धिक्कुरु यत्परैर्विरचितं स्पर्धस्व सार्धं बुधै-

र्यद्यभ्यर्थयसे श्रुतेन रहितः पाण्डित्यमाप्तुं बलात् ॥ ६६ ॥

(कस्यापि)

अथ पण्डितः—

अधिगतपरमार्थान्पण्डितान्मावमंस्था-

स्तृणमिव लघु लक्ष्मीर्नैव तान्संरुणद्धि ।

मदमिलितमिलिन्दश्यामगण्डस्थलानां

न भवति बिसतन्तुर्वोरणं वारणानाम् ॥ ६७ ॥

इह तुरगशतैः प्रयान्तु मूढा धनरहितास्तु बुधाः प्रयान्तु पञ्चाम् ।

गिरिशिखरगतापि काकपङ्क्तिः पुलिनगतैर्न समत्वमेति हंसैः ॥ ६८ ॥

(भर्तृहरेरेतौ)

अथ मुनिः—

वलमीकाग्रनिमग्नमूर्तिरुरगत्वग्ब्रह्मसूत्रान्तरः

कण्ठे जीर्णलतावितानवलयेनात्यर्थसंपीडितः ।

अंशव्यापिशकुन्तनीडनिचयं बिभ्रज्जटामण्डलं

यत्र स्थाणुरिवाचलो मुनिरसावभ्यर्कबिम्बं स्थितः ॥ ६९ ॥

(कालिदासस्य)

अथ तपोवनम्—

तपोवने केसरिणीकरिण्योरिहाद्भुतं शावकयोर्व्यलोकि ।

व्यातेनतुर्त्यस्तनपानकाले मात्रोर्विपर्यासविलासमेतौ ॥ ७० ॥

(लक्ष्मणस्य)

विलोक्य कमलाकान्तमबलास्तनलालसम् ।

जहसुः कुसुमव्याजादिव यत्र महीरुहः ॥ ७१ ॥

मृगसहितं मृगलाञ्छनमाक्रामन्तं विधुंतुदं वीक्ष्य ।

यत्र भयेन भजन्ते मृगशिशवो मृगदृशामङ्के ॥ ७२ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

श्यामाकतन्दुलविलेपकदर्शिताभि-

रेताभिः.....शरणेषु सधर्मिणीभिः ।

तत्रासहेतुमपि दण्डमुदस्यमान-

माप्रातुमिच्छति मृगे मुनयो हसन्ति ॥ ७३ ॥

(मुरारेः)

अथ महावनम् ।

इह महिषविषाणव्यस्तपाषाणपीठ-

स्खलनसुलभरोहद्गर्भिणीभ्रूणहत्याः ।

कुहरविरहमाणप्रौढभल्लूकहिका-

चयचकितकिरातन्यस्तशस्त्रा वनान्ताः ॥ ७४ ॥

(मुरारेः)

अथ मृगया—

अरण्यहरिणग्राममाचक्राम हुताशनः ।

इन्दोः क्रोडमृगं धर्तुमिव धूमो नभो ययौ ॥ ७५ ॥

उपगूहति दवदहने त्रिभुवनधन्यामरण्यानीम् ।

मूर्ता इवान्धकारा प्रतिदिशमपयान्ति कासरावलयः ॥ ७६ ॥

(गणपतेः)

अथ व्यस्यन् व्याघ्रान्.....

.....

व्यातेनतुर्यस्तनपानकाले मात्रोर्विपर्यासविलासमेतौ ॥ ७० ॥

(लक्ष्मणस्य)

विलोक्य कमलाकान्तमबलास्तनलालसम् ।

जहसुः कुसुमव्याजादिव यत्र महीरुहः ॥ ७१ ॥

मृगसहितं मृगलाञ्छनमाक्रामन्तं विधुंतुदं वीक्ष्य ।

यत्र भयेन भजन्ते मृगशिशवो मृगदृशामङ्के ॥ ७२ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

श्यामाकतन्दुलविलेपकदर्शिताभि-

रेताभिः.....शरणेषु सधर्मिणीभिः ।

तत्रासहेतुमपि दण्डमुदस्यमान-

माघ्रातुमिच्छति मृगे मुनयो हसन्ति ॥ ७३ ॥

(मुरारेः)

अथ महावनम् ।

इह महिषविषाणव्यस्तपाषाणपीठ-

स्खलनसुलभरोहद्गर्भिणीभ्रूणहत्याः ।

कुहरविरहमाणप्रौढभल्लूकहिका-

चयचकितकिरातन्यस्तशस्त्रा वनान्ताः ॥ ७४ ॥

(मुरारेः)

अथ मृगया—

अरण्यहरिणग्राममाचक्राम हुताशनः ।

इन्दोः क्रोडमृगं धर्तुमिव धूमो नभो ययौ ॥ ७५ ॥

उपगूहति दवदहने त्रिभुवनधन्यामरण्यानीम् ।

मूर्ता इवान्धकारा प्रतिदिशमपयान्ति कासरावलयः ॥ ७६ ॥

(गणपतेः)

अथ व्यस्यन् व्याघ्रान्.....

.....

.....परिमृगयमाणो मृगकुलं
 मृगेन्द्रान्भिन्दानो नृपतिरपि तेने स मृगयाम् ॥ ७७ ॥
 निहत निहत तूणे धत्त धत्त त्वराभि-
 मिलत मिलत के के कुत्र कुत्र प्रयान्ति ।
 इत इत इत एते यान्ति यान्तीत्यरण्या-
 दतुलकलकलश्रीः सर्वतः प्रादुरासीत् ॥ ७८ ॥

उद्यन्महीपालमरीचिमालीशिलीमुखश्रेणिकरावलीभिः ।
 उदारभूदारघनान्धकारसंभारमुच्छिन्नतरं चकार ॥ ७९ ॥

(गदाधरस्य)

चन्द्रोऽनेन कलङ्कितो बत वने रामोऽमुना वञ्चितः
 किं चानेन कुलाङ्गनानयनयोर्लवण्यलक्ष्मीर्हिता ।
 सस्यानामभिलाषुकस्य भवतः श्रीरुद्रचन्द्रप्रभो
 तन्मन्ये हरिणस्य हन्त हननायाखेटकोपक्रमः ॥ ७९ ॥

(रामचन्द्रस्य)

शङ्कुव्याकीर्णरङ्कुद्रुतनिशितशरक्षुण्णदीव्यत्तरक्षु-
 व्याघोषक्षुब्धकण्ठीरवरवचकितव्यस्तमातङ्गयूथम् ।
 खड्गव्यालूनकण्ठं तुमुलकलकलप्रान्तकूजच्छकुन्तं
 भल्लध्वस्ताच्छभल्लं वनभुवि मृगयाकर्म तेन प्रतेने ॥ ८० ॥

(कविराजस्य)

अथ काव्यप्रशंसा—

किं कवेस्तस्य काव्येन किं काण्डेन धनुष्मतः ।
 परस्य हृदये लग्नं न घूर्णयति यच्छिरः ॥ ८१ ॥
 उत्फुल्लगलैरालापाः क्रियन्ते दुर्मुखैः सुखम् ।
 जानाति हि पुनः सम्यक्कविरेव कवेः श्रमम् ॥ ८२ ॥

(त्रिविक्रमस्य)

.....परिमृगयमाणो मृगकुलं
 मृगेन्द्रान्भिन्दानो नृपतिरपि तेने स मृगयाम् ॥ ७७ ॥
 निहत निहत तूणे धत्त धत्त त्वराभि-
 र्मिलत मिलत के के कुत्र कुत्र प्रयान्ति ।
 इत इत इत एते यान्ति यान्तीत्यरण्या-
 दतुलकलकलश्रीः सर्वतः प्रादुरासीत् ॥ ७८ ॥

उद्यन्महीपालमरीचिमालीशिलीमुखश्रेणिकरावलीभिः ।
 उदारभूदारघनान्धकारसंभारमुच्छिन्नतरं चकार ॥ ७९ ॥
 (गदाधरस्य)

चन्द्रोऽनेन कलङ्कितो बत वने रामोऽमुना वञ्चितः
 किं चानेन कुलाङ्गनानयनयोर्लावण्यलक्ष्मीर्हिता ।
 सस्यानामभिलाषुकस्य भवतः श्रीरुद्रचन्द्रप्रभो
 तन्मन्ये हरिणस्य हन्त हननायाखेटकोपक्रमः ॥ ७९ ॥
 (रामचन्द्रस्य)

शङ्कुव्याकीर्णरङ्कुद्रुतनिशितशरक्षुण्णदीव्यत्तरक्षु-
 व्याघोषक्षुब्धकण्ठीरवरवचकितव्यस्तमातङ्गयूथम् ।
 खड्गव्यालनकण्ठं तुमुलकलकलप्रान्तकूजच्छकुन्तं
 भल्लध्वस्ताच्छभल्लं वनभुवि मृगयाकर्म तेन प्रतेने ॥ ८० ॥
 (कविराजस्य)

अथ काव्यप्रशंसा—

किं कवेस्तस्य काव्येन किं काण्डेन धनुष्मतः ।
 परस्य हृदये लग्नं न घूर्णयति यच्छिरः ॥ ८१ ॥
 उत्फुल्लगलैरालापाः क्रियन्ते दुर्मुखैः सुखम् ।
 जानाति हि पुनः सम्यक्कविरेव कवेः श्रमम् ॥ ८२ ॥
 (त्रिविक्रमस्य)

कवयः परितुष्यन्ति नेतरे कविसूक्तिभिः ।

न ह्यकूपारवत्कूपा वर्धन्ते विधुकान्तिभिः ॥ ८३ ॥

(कस्यापि)

अर्थान्केचिदुपासते कृपणवत्केचित्त्वलं कुर्वते

वेश्यावत्खलु धातुवादिन इवोद्धन्ति केचिद्रसान् ।

अर्थालंकृतिसद्रसद्रवमुचां वाचां प्रशस्तिस्पृशां

कर्तारः कवयो भवन्ति कतिचित्पुण्यैरगण्यैरिह ॥ ८४ ॥

(राघवचैतन्यानाम्)

जाता शिखण्डिनी प्राग्यथा शिखण्डी तथावगच्छामि ।

प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी वाणो बभूवेति ॥ ८५ ॥

(गोवर्धनस्य)

तावत्कविविहङ्गानां ध्वनिर्लोकेषु शस्यते ।

यावन्नो विशति श्रोत्रे मयूरमधुरध्वनिः ॥ ८६ ॥

हृदि लग्नेन बाणेन यन्मन्दोऽपि पदक्रमः ।

भवेत्कविकुरङ्गाणां चापलं तत्र कारणम् ॥ ८७ ॥

(त्रिविक्रमस्य) (त्रिलोचनस्य)

ते भूमीपतयो जयन्ति नतयो येषां द्विषद्भूतां

ते वन्द्या यतयो विशन्ति मतयो येषां परब्रह्मणि ।

ते श्लाघ्याः कवयो वयोमदभरव्याजृम्भमाणाङ्गना-

द्वक्पाता इव तोषयन्ति हृदयं येषां गिरां भङ्गयः ॥ ८८ ॥

गणेश्वरकवेर्वचोविरचनैकवाचस्पतेः

प्रसन्नगिरिनिन्दिनीचरणपल्लवं ध्यायतः ।

तथा जगति भारती भगवती यथा सा सुधा

सुधा भवति सुभ्रुवामधरमाधुरी म्लायति ॥ ८९ ॥

(गणेश्वरस्य)

कवयः परितुष्यन्ति नेतरे कविसूक्तिभिः ।

न ह्यकूपारवत्कूपा वर्धन्ते विधुकान्तिभिः ॥ ८३ ॥

(कस्यापि)

अर्थान्केचिदुपासते कृपणवत्केचित्त्वलंकुर्वते

वेश्यावत्खलु धातुवादिन इवोद्धन्ति केचिद्रसान् ।

अर्थालंकृतिसद्रसद्रवमुचां वाचां प्रशस्तिस्पृशां

कर्तारः कवयो भवन्ति कतिचित्पुण्यैरगण्यैरिह ॥ ८४ ॥

(राघवचैतन्यानाम्)

जाता शिखण्डिनी प्राग्यथा शिखण्डी तथावगच्छामि ।

प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी वाणो बभूवेति ॥ ८५ ॥

(गोवर्धनस्य)

तावत्कविविहङ्गानां ध्वनिर्लोकेषु शस्यते ।

यावन्नो विशति श्रोत्रे मयूरमधुरध्वनिः ॥ ८६ ॥

हृदि लग्नेन बाणेन यन्मन्दोऽपि पदक्रमः ।

भवेत्कविकुरङ्गाणां चापलं तत्र कारणम् ॥ ८७ ॥

(त्रिविक्रमस्य) (त्रिलोचनस्य)

ते भूमीपतयो जयन्ति नतयो येषां द्विषद्भूभुतां

ते वन्द्या यतयो विशन्ति मतयो येषां परब्रह्मणि ।

ते श्लाघ्याः कवयो वयोमदभरव्याजृम्भमाणाङ्गना-

द्वक्पाता इव तोषयन्ति हृदयं येषां गिरां भङ्गयः ॥ ८८ ॥

गणेश्वरकवेर्वचोविरचनैकवाचस्पतेः

प्रसन्नगिरिनिन्दिनीचरणपल्लवं ध्यायतः ।

तथा जगति भारती भगवती यथा सा सुधा

सुधा भवति सुभ्रुवामधरमाधुरी म्लायति ॥ ८९ ॥

(गणेश्वरस्य)

यशोधननिधेर्यदा नरहरेर्वचो वर्ण्यते

तदा गतमदा मदालसमरालबालारवाः ।

न विभ्रमचरीकरी भवति चाधरी माधुरी

सुधाकरसुधाझरी मधुकथा वृथा जायते ॥ ९० ॥

उमामिमां समुद्वीक्ष्य शीतदीधितिशेखराम् ।

एषा तु भारती भानुं मत्तं स्वीकृत्य नृत्यति ॥ ९१ ॥

(भानुकरसैतौ)

प्रवर्तस्वेति को नाम प्रवर्तेत विना रसात् ।

केन प्रवर्तिता भृङ्गाः प्रवर्तन्ते सरोरुहि ॥ ९२ ॥

सुभाषितरसावलीमधुनि लम्पटोऽयं चिरा-

ददन्निखिलनाटिकाटविषु केन विश्राम्यतु ।

कवित्रजमधुव्रतः समधुवाटिकानिर्मितं

क्षणं नयनगोचरीचरिकरीति यावन्न मे ॥ ९३ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां पञ्चदशो व्यापारः ।

समाप्तेयं पद्यरचना ।

यशोधननिधेर्यदा नरहरेर्वचो वर्ण्यते

तदा गतमदा मदालसमरालबालारवाः ।

न विभ्रमचरीकरी भवति चाधरी माधुरी

सुधाकरसुधाझरी मधुकथा वृथा जायते ॥ ९० ॥

उमामिमां समुद्रीक्ष्य शीतदीधितिशेखराम् ।

एषा तु भारती भानुं मत्तं स्वीकृत्य नृत्यति ॥ ९१ ॥

(भानुकरस्यैतौ)

प्रवर्तस्वेति को नाम प्रवर्तेत विना रसात् ।

केन प्रवर्तिता भृङ्गाः प्रवर्तन्ते सरोरुहि ॥ ९२ ॥

सुभाषितरसावलीमधुनि लम्पटोऽयं चिरा-

दटन्निखिलनाटिकाटविपु केन विश्राम्यतु ।

कवित्रजमधुव्रतः समधुवाटिकानिर्मितं

क्षणं नयनगोचरीचरिकरीति यावन्न मे ॥ ९३ ॥

(एतौ लक्ष्मणस्य)

इति श्रीआङ्गोलकरलक्ष्मणभट्टविरचितायां पद्यरचनायां पञ्चदशो व्यापारः ।

समाप्तेयं पद्यरचना ।